स्मृति के पृष्ठ

स्वतन्त्रता संग्राम सेनानियों के संस्मरण

उ० प्र० राजकीय अभिलेखागार
संस्कृति विभाग, उ. प्र.

स्मृति के पृष्ठ

स्वतन्त्रता सेनानियों के संस्मरणों पर आधारित

रेखा त्रिवेदी

उ० प्र० राजकीय अभिलेखागार
संस्कृति विभाग, उ० प्र०
लखनऊ

संकलन सहयोग

डा० लालता प्रसाद
श्री महेन्द्र सिंह
डा० अमर सिंह

संपादन सहयोग

डा० एस. पी. दीक्षित
श्री योगेश प्रवीन
श्री कृष्ण मोहन मिश्रा

प्रतिलेखन सहयोग

डा० सविता प्रवीण

रेखा त्रिवेदी

प्रथम संस्करण : 15 अगस्त 1998
प्रकाशक : उ० प्र० राजकीय अभिलेखागार, लखनऊ।
मुद्रक : **शुभम आर्टस,** टण्डन मार्केट, 8, लालबाग, लखनऊ



फागू चौहान
मंत्री
संस्कृति एवं पूर्त धर्मस्व

दूरभाष : कार्यालय 238292
आवास 238521
विधान भवन
लखनऊ

संदेश

अत्यन्त हर्ष का विषय है कि स्वतंत्रता के स्वर्ण जयन्ती वर्ष में उत्तर प्रदेश राजकीय अभिलेखागार द्वारा स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों के संस्मरण ''स्मृति के पृष्ठ'' शीर्षक से पुस्तक रुप में प्रकाशित किए जा रहे हैं।

मुझे विश्वास है कि जन सामान्य स्वतंत्रता सेनानियों की त्याग एवं बलिदान से पूर्ण कहानियों से प्रेरणा ग्रहण करेंगे। स्वतंत्रता के इतिहास लेखन में यह पुस्तक उपयोगी सिद्ध होगी।

पुस्तक की सफलता हेतु मेरी शुभकामनाएं।

(फागू चौहान)
मंत्री
संस्कृति एवं पूर्त धर्मस्व

दूरभाष : 238685 (कार्यालय)
: 391955 (आवास)

शैलेश कृष्ण
सचिव

संस्कृति विभाग
उ०प्र० शासन
411–बापू भवन, लखनऊ

प्राक्कथन

साक्षात्कार एवं संस्मरण आधुनिक इतिहास लेखन के मूल स्त्रोतों में से महत्वपूर्ण स्त्रोत है। इनके द्वारा महत्व पूर्ण घटनाओं में सम्मिलित व्यक्तियों के विचार ज्ञात होते हैं जो इतिहास की निरन्तरता बनाये रखने में सहायक होते हैं। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर ''मौखिक इतिहास योजना'' उत्तर प्रदेश राजकीय अभिलेखागार लखनऊ द्वारा प्रारम्भ की गई है। इस योजना के अन्तर्गत स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों के साक्षात्कार टेप किये हैं, तत्पश्चात् उनका प्रतिलेखन किया गया है। प्रकाशन का उद्देश्य युवाओं को स्वतंत्रता सेनानियों के कर्मठ एवं आदर्श से भरे हुए जीवन से उत्प्रेरित करना है। आने वाली पीढ़ी के लिए इस समाप्त होती पीढ़ी का संदेश सुरक्षित रखने का यह सार्थक प्रयास है।

यह प्रकाशन स्वतंत्रता की स्वर्ण जयंती के अवसर पर संस्कृति विभाग के सहयोग से राजकीय अभिलेखागार द्वारा किया जा रहा है। इसमें जहाँ द्वारिका प्रसाद माहेश्वरी जैसे साहित्यकार के शब्द हैं, वहीं आजाद हिन्द फौज के श्री एस० के० वर्धन एवं श्री ए०बी० सिंह की कथा भी है और क्रांतिकारी आन्दोलन से जुड़े स्व० श्री राम कृष्ण खत्री जी का साक्षात्कार भी सम्मिलित है। इसके अतिरिक्त गाँधी जी के असहयोग आन्दोलन एवं भारत छोड़ो आन्दोलन में सहभागी बने अनेक वीरों की यादें भी इस प्रकाशन में संकलित हैं

आशा है यह प्रकाशन शोध छात्रों एवं जन सामान्य के लिए उपयोगी सिद्ध होगा।

शैलेश कृष्ण

(शैलेश कृष्ण)
सचिव, संस्कृति विभाग
उत्तर प्रदेश शासन

उमा वर्मा
आई. ए. एस.
निदेशक संस्कृति

संस्कृति निदेशालय
नवम तल, जवाहर भवन
लखनऊ

दो शब्द

अन्य विधाओं के साथ ही आज इतिहास लेखन भी अधिक तथ्य परक होता जा रहा है। आधुनिक इतिहास के शोध में अभिलेखागार प्रमाणिक एवं निष्पक्ष स्रोत प्रस्तुत करते हैं। इसी उद्देश्य को आगे बढ़ांते हुए मौखिक इतिहास योजना का सूत्रपात किया गया है। इस योजना का मूल उद्देश्य इतिहास के सहभागी बने व्यक्तियों से उनकी कहानी, उन्हीं की भाषा में प्रस्तुत करना है। शोध कर्ता इन साक्षात्कारों एवं संस्मरणों से इतिहास के टूटे हुए सूत्र जोड़ सकते हैं एवं अपने निर्णय पर स्वयं पहुँच सकते हैं।

उत्तर प्रदेश राजकीय अभिलेखागार, लखनऊ ने इस योजना के अन्तर्गत विभिन्न स्थानों पर जाने और अनजाने स्वतन्त्रता सेनानियों के संस्मरण टेप किए हैं। स्वतन्त्रता की स्वर्ण जयंती के अवसर पर "स्मृति के पृष्ठ" के रुप में इस संस्मरणों को प्रकाशित किया जा रहा है। ये वे व्यक्ति हैं जिनके सामने स्वतन्त्रता आन्दोलन ने अपना अंतिम रुप लिया और जिसमें इन्होंने सक्रिय सहयोग प्रदान किया। स्वतन्त्रता की स्वर्ण जयंती वर्ष में यह प्रकाशन स्वतन्त्रता संग्राम के नायकों के प्रति हमारी श्रद्धांजलि स्वरूप है। वर्तमान पीढ़ी के लिए यह पुस्तक प्रेरणा का स्रोत सिद्ध होगी।

(उमा वर्मा)

प्रस्तावना

उत्तर प्रदेश सदैव से देश की राजनैतिक, सामाजिक एवं नैतिक विचारधारा को प्रभावित करता रहा है। स्वतंत्रता संग्राम में इस प्रदेश ने अग्रणी भूमिका निभाई है। निश्चय ही इस क्षेत्र में अभी भी बड़ी संख्या में ऐसे स्वतंत्रता सेनानी विद्यमान है, जिन्होंने देश हित हेतु अपना सर्वस्व न्योछावर कर दिया और शारीरिक एवं मानसिक यंत्रणायें हँसते–हँसते झेली थीं। ऐसे ही वीरों के साक्षात्कार एवं संस्मरणों के आधार पर यह प्रकाशन किया जा रहा है।

भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन का विकास, विश्व इतिहास के महानतम आन्दोलनों में से एक आन्दोलन के रूप में हुआ। निःसंदेह यह एक ऐसा विशिष्ट आन्दोलन रहा है, जिसमें नैतिक, राजनैतिक और वैचारिक जन संघर्ष चलाकर राजसत्ता को प्राप्त किया गया। विभिन्न वर्गों के करोड़ों लोगों को इस आन्दोलन ने राजनैतिक रूप से सक्रिय होने हेतु प्रेरित किया और शक्तिशाली साम्राज्य को घुटने टेकने हेतु विवश किया। इसकी सम्पूर्ण शक्ति का स्रोत जनता के जुझारूपन और आत्म बलिदान की चेतना रही। हमारी स्वाधीनता इस महासंग्राम का प्रतिफल है जो जाति, वर्ग, 'धर्म और सम्प्रदाय के दायरे से बाहर निकल कर लड़ा गया था और जिसमें किसान, वकील, व्यापारी, साहित्यकार, शिक्षक और छात्र सभी लोग देश प्रेम की भावना से समर्पित हुए थे।

स्वतंत्रता संग्राम के मुख्य तीन आयाम थे –

पहला गांधी जी का अहिंसात्मक असहयोग एवं सविनय अवज्ञा आन्दोलन, दूसरा नेता जी सुभाष चन्द्र बोस का खुला सैन्य संघर्ष और तीसरा देश के भीतर रहकर ही सशस्त्र संघर्ष करने वालों का दल। इस प्रकाशन में इन तीनों आयामों के प्रतिनिधित्व का प्रयास किया गया है।

जलियांवाला बाग काण्ड एवं रौलेट बिल के विरूद्ध चलाये गये गांधी जी के असहयोग आन्दोलन के प्रतिभागी, हमें नहीं मिल सके। उसके बाद 1930 में ही गांधी जी के सविनय अवज्ञा आन्दोलन में सम्मिलित कई व्यक्ति उपलब्ध हुए जिनके संस्मरण इसमें संग्रहीत हैं। 12 मार्च 1930 को प्रातः 6:30 बजे गांधी जी की यात्रा डांडी से प्रारम्भ हुई। गांधी जी ने स्वयं नमक बनाकर, नमक कानून को भंग किया और सविनय अवज्ञा आन्दोलन के प्रथम चरण का सूत्रपात किया। उन्होंने प्रत्येक गांव में गैर – कानूनी नमक बनाने, शराब की दुकानों, अफीम के ठेकों और विदेशी वस्त्रों की दुकानों के सामने धरना देने, चरखा कातने, विदेशी वस्त्रों की होली जलाने, अस्पृश्यता से दूर रहने और साम्प्रदायिकता स्थापित करने का निर्देश दिया। सारा वातावरण उद्वेलित हो उठा और लोग आत्म विश्वास के साथ आन्दोलन में कूद पड़े।

गांधी जी के नमक आन्दोलन से जुड़े श्री अनूप सिंह त्यागी के संस्मरण एवं पिकेटिंग से जुड़े श्री शिवलाल वर्मा के संस्मरण इस प्रकाशन में सम्मिलित है। मेरठ निवासी श्री जग मोहन शर्मा ने बताया कि ये छात्र जीवन से ही पिकेटिंग कार्यक्रमों में सम्मिलित होने लगे थे।

1939 के दूसरे विश्व युद्ध में हिन्दुस्तान को शामिल करने के विरोध स्वरूप 13 सितम्बर 1940 से "व्यक्तिगत सत्याग्रह " आरम्भ किया गया। इसमें सत्याग्रही नारा लगता था कि युद्ध में किसी तरह

से सहयोग देना पाप है और गिरफ्तार हो जाता था। इसमें हजारों सत्याग्रही जेल गये, उ० प्र० ने इसमें जम कर हिस्सा लिया और जेल जाने वालों की संख्या बढ़ती गई।

11 मार्च, 1942 को ब्रिटिश सरकार द्वारा' क्रिप्स मिशन ' भारतीय नेताओं से समझौता करने हेतु भेजा गया था। वह असफल रहा और अन्ततः 26 अप्रैल, 1942 को 'हरिजन समाचार पत्र में पहली बार गांधी जी ने अंग्रेजों "भारत छोड़ो" की बात कही। 7 – 8 अगस्त, 1942 को कांग्रेस महासमिति ने बम्बई में अंग्रेजों "भारत छोड़ो" का प्रस्ताव पास कर दिया। नारा था 'करो या मरो'। 9 अगस्त की सुबह ही गांधी जी गिरफ्तार हो गये और साथ ही प्रसिद्ध नेता भी गिरफ्तार हो गये। नेताओं के न रहने पर हर आदमी अपना नेता हो गया और देश में संसार की सबसे बड़ी जनक्रान्ति उभर उठी। यह आन्दोलन गांधीवादी दृष्टिकोण से तो शत प्रतिशत प्रेरित था ही, पर साथ ही सशस्त्र दृष्टि से भी सक्रिय था।

व्यक्तिगत सत्याग्रह एवं भारत छोड़ो आन्दोलन से सम्बन्धित आगरा, मेरठ एवं नैनीताल जिले के स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों के संस्मरण उल्लेखनीय हैं। इनके अध्ययन से पता चलता है कि तत्कालीन नेताओं के व्यक्तित्व ने किस सीमा तक इन्हें प्रभावित किया। कई बार तो शिक्षकों ने भी छात्रों को उत्साहित किया। इन सत्याग्रही व्यक्तियों ने जेल–जीवन की यातनाओं का मार्मिक उल्लेख किया है।

1941 में सुभाष चन्द्र बोस अपने ही घर में नजरबन्द थे। वे सरकार के गुप्तचर विभाग की आँखों में धूल झोंक कर, 17 जनवरी, 1941 को पूरा हिन्दुस्तान रेल से पार कर पेशावर के रास्ते विदेश चले गये। इससे देश के वातावरण में नई उत्तेजना फैली। अनेक नौजवान नेता जी के व्यक्तित्व एवं कार्य शैली से प्रभावित होकर उनके साथ हो गये। नेता जी ने ब्रिटिश उपनिवेशवाद के विरूद्ध युद्ध की घोषणा की। पूर्वोत्तर भारत की ओर से उनकी "आजाद हिन्द फौज" ने जो चढ़ाई की, वह आजाद हिन्द की आन्तरिक सरकार की स्थापना के रूप में स्वाधीनता का भारतवासियों का प्रथम अनुभव रहा। "आजाद हिन्द फौज" ने समूचे भारत में स्फूर्ति का संचालन किया। इसी फौज के लेफ्टीनेन्ट सुधीन्द्र कुमार वर्धन एवं कर्नल अमर बहादुर सिंह के ज्ञानवर्धक साक्षात्कार इस पुस्तक में प्रकाशित किए जा रहे हैं।

देश के अन्दर गुप्त रूप से कार्यरत सशस्त्र क्रान्तिकारियों की चर्चा भी इस प्रकाशन में की गई है। इसका प्रतिनिधित्व असहयोगेत्तर उत्तर भारत में क्रान्तिकारी दलों की बिखरी हुई शक्ति के एकीकरण का परिचय एवं उनके द्वारा सशस्त्र क्रान्ति की दिशा में किये गये प्रयासों की प्रथम परिणति इतिहास प्रसिद्ध काकोरी ट्रेन डकैती की घटना थी। 9 अगस्त, 1925 को काकोरी स्टेशन के पास रेलगाड़ी को रोक कर सरकारी खजाना लूट लिया गया। इसी केस में राम प्रसाद बिस्मिल, राजेन्द्र लाहिड़ी, अशफॉक उल्ला खाँ और रौशन सिंह को फाँसी की सजा हुई। काकोरी काण्ड के इन वीर क्रान्तिकारियों के प्राणोत्सर्ग की घटना ने सम्पूर्ण देश को शोक संतप्त कर दिया। असहयोग आन्दोलन की समाप्ति पर व्याप्त निराशा, असंगठन के समय में काकोरी काण्ड ने जनता को पुनः देश के लिए त्याग करने की प्रेरणा दी। स्व० राम कृष्ण खत्री का साक्षात्कार, इस घटना का उल्लेख करता है। जेल में काकोरी काण्ड के शहीदों के साथ बिताये क्षणों की रोचक झलकियाँ भी इनकी यादों में हैं।

स्वतंन्त्रता के स्वर्ण जयंती वर्ष में स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों के संस्मरणों को पुस्तक रूप में प्रकाशित करने की अपनी सार्थकता है। इस पुस्तक से नई पीढ़ी को यह शिक्षा मिल सकेगी कि जिस

स्वतंत्रता के वातावरण में वे सांस ले रहे हैं वास्तव में वह एक दीर्घकालीन संघर्ष और कुर्बानियों का परिणाम हैं। वर्तमान संदर्भ में स्वाधीनता संघर्ष में भाग लेने वाले इन देशभक्तों के योगदान को न केवल जानना वरन् उनके आदर्शोंको अपनी जीवन में आत्म सात करना भी आवश्यक है।

उत्तर प्रदेश राजकीय अभिलेखगार, लखनऊ की ''मौखिक इतिहास योजना'' के अन्तर्गत स्वतंत्रतासेनानियों के संस्मरणों को टेप करके उनका प्रतिलेखन करने के पश्चात उन्हे प्रकाशित किया जा रहा है। इस संदर्भ में यह कहना उपयुक्त होगा कि जब भी कोई अपने जीवन की वास्तविक घटनाओं से टकराने का प्रयास करता है तो वह स्वभावतः भावुक हो जाता है। जीवन के इस मोड़ पर बोलते हुये हो सकता है, कभी किसी की स्मृति ने कुछ अनावश्यक मोड़ ले लिए हों। इन संस्मरणों में हमारी ओर से ऐतिहासिक तथ्यों का समावेश नहीं किया गया है फिर भी ये संस्मरण इतिहास के सूत्रों को जोड़ने में अवश्य सहायक सिद्ध होंगे। शासकीय अभिलेखों के लिए ये पूरक का काम करेंगे।

प्रस्तुत संस्करण में 41 स्वतंत्रता सेनानियों के संस्मरण प्रकाशित किए जा रहे हैं। इन्हें सम्पादित करने हेतु एक कमेटी का गठन किया गया था जिसमें डा० एस० पी० दीक्षित, श्री योगेश प्रवीण एवं श्री कृष्ण मोहन मिश्रा सम्मिलित थे। इनके सहयोगं के लिए हम आभारी हैं। मै डा० सविता प्रवीन के प्रति भी आभार प्रकट करती हूँ जिन्होंने इन संस्मरणों के प्रतिलेखन का काम किया।

इस कार्यालय के प्राविधिक सहायक (इतिहास) श्री महेन्द्र सिंह एवं डा० अमर सिंह ने अथक परिश्रम, लगन एवं निष्ठा के साथ सामग्री को प्रकाशन हेतु तैयार किया है। डा० ओम प्रकाश श्रीवास्तव, सहायक निदेशक एवं प्रशासकीय अधिकारी ने समय–समय पर महत्वपूर्ण सुझाव एवं परामर्श देकर उचित मार्गदर्शन किया। डा० लालता प्रसाद, क्षेत्रीय अभिलेख अधिकारी देहरादून, नैनीताल तथा डा० मीरा देवी ने उत्तरांचल में बिखरे हुये सेनानियों के संस्मरणों को टेप करने का कार्य परिश्रम एवं लगन से सम्पादित किया।

अन्त में उन सभी स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों के प्रति आभार प्रकट करती हूं जिन्होंने अपना अमूल्य समय देकर इस योजना को सफल बनाने में सहयोग प्रदान किया।

दिनांक : 9 अगस्त 1998

रेखा त्रिवेदी
का० निदेशक
उ०प्र० राजकीय अभिलेखागार
लखनऊ

विषय सूची

(1) स्वर्गीय श्री रामकृष्ण खत्री	1
(3) लेफ्टीनेन्ट श्री सुधीन्द्रकुमार वर्द्धन	12
(4) कर्नल अमरबहादुर सिंह	14
(5) श्री बसन्त सिंह भृंग	24
(6) श्रीमती प्रेमवती मिश्रा	26
(7) आचार्य दीपंकर शास्त्री	35
(8) श्री द्वारिकाप्रसाद महेश्वरी	42
(9) श्री अनूप सिंह त्यागी	50
(10) श्री हरिदत्त शास्त्री	52
(11) डा० रमेशकुमार शर्मा	55
(12) श्री जगमोहन शर्मा	60
(13) शहीद चन्द्रभान	62
(14) श्रीदत्त त्रिपाठी	63
(15) श्री दान सिंह	65
(16) श्री गोपाल सिंह	66
(17) श्री कांतिप्रसाद भटनागर	67
(18) श्री विद्यासागर दीक्षित	68
(19) श्री बाबूराम त्यागी	71
(20) श्री खोटेलाल शाह	73
(21) श्री राजेश्वर शास्त्री	75

(22) श्री होतीलाल 77
(23) श्री मोतीराम जोशी 78
(24) श्री पृथ्वीनाथ चतुर्वेदी 80
(25) स्वर्गीय राजबिहारीलाल माथुर 81
(26) कु० कमला शर्मा 82
(27) श्री हरगोविन्द शुक्ला 83
(28) श्री धनीराम 85
(29) श्री जयदत्त वैला 88
(30) श्री रघुबरदास पाण्डेय 91
(31) श्री मदन खोल्या 92
(32) श्री दीवान सिंह 94
(33) श्री परमानन्द पाण्डेय 95
(34) श्री खचेडी सिंह 96
(35) श्री शिवलाल वर्मा 100
(36) श्री मोहन सिंह 103
(37) श्री धर्मलाल वर्मा 107
(38) श्री बाबूराम 108
(39) श्री रामसिंह भाकुनी 109
(40) श्री मदन ढौंढियाल 112
(41) श्री वार्ष्णेय 114

स्व० श्री रामकृष्ण खत्री



प्रश्न – खत्री जी नमस्कार। सबसे पहले हम आपसे आपके पिता के विषय में आपके पारिवारिक वातावरण और शिक्षा–दीक्षा, राजनीति में आपके आने के विषय में आपके मुख से जानना चाहेंगे।

उत्तर – मेरे पिता का नाम स्व० श्री लाल खत्री था और पारिवारिक वातावरण कुछ ऐसा था कि बहुत गरीबी की हालत में हमारा परिवार रहा। बहुत गरीबी थी, इसमें कहने की जरूरत नहीं। मेरी पैदाइश वैसे तो चिरवली, जिला बुलडाणा, महाराष्ट्र में हुई थी। मेरी जन्म तिथि 3 मार्च 1902 है। जहाँ तक शिक्षा का प्रश्न है, 1920 में गांधी जी के आह्वान् पर हमको स्कूल छोड़ना पड़ा। मैट्रिक पास कर चुका था। फस्ट इयर में था। गांधी जी का आन्दोलन आरम्भ हुआ। उनके असहयोग आन्दोलन के 14 सूत्रीय कार्यक्रम थे। उनके कार्यक्रम के अर्न्तगत बहिष्कार का नारा था। उन्होंने आह्वाहन किया था कि अंग्रेजी सरकार के कालेजों का बहिष्कार करो और नेशनल कालेजों की स्थापना की जाये ताकि उसमें यह लोग पढ़ें। लेकिन हम लोगों के दिमाग में यह बात आयी, कि ये बात ठीक कहते हैं लेकिन ये खुद भी तो इन्हीं कालेजों से निकले हैं। यह हमारी समझ में नहीं आ रहा, इसका स्पष्टीकरण होना चाहिये तो हमको मौका मिल गया। सितम्बर 1920 में कलकत्ते में कांग्रेस का विशेष अधिवेशन हुआ था, गांधी जी के इन्हीं कार्यक्रम के ऊपर विचार विमर्श करने और अनुमोदन करने के लिये वह एक स्पेशल ट्रेन में बम्बई से वर्धा होते हुए कलकत्ता जा रहे थे। हमको पता चला कि उनकी ट्रेन वर्धा में रूकेगी। वह जमुना कान्त के प्रांगण में भाषण भी करेंगे और वहां एक घंटा रूकेंगें भी तो हम चार विद्यार्थियों ने सोचा कि हमको वर्धा चलना चाहिये और गांधी जी से इस बात का स्पष्टीकरण मांगना चाहिये। हम चार आदमी घर से बिना आज्ञा लिये भाग कर वर्धा आये। आकर सभा में शामिल हुये। बोलने के बाद गांधी जी की जैसी आदत थी, उन्होंने पूछा कि मेरे कार्यक्रम के बारे में यदि किसी को कोई शक हो तो हमसे स्पष्टीकरण कर सकता है। पहले तो कोई नहीं उठा, तो मैं ही उठा। मैंने कहा मैं कुछ पूछना चाहता हूं। वह बोले क्या पूछना है, पूछो। हमने कहा, आपके कार्यक्रम में शामिल है कि विद्यार्थी लोग अंग्रेजों के स्कूल में पढ़ाई छोड़ दें और नेशनल स्कूलों में पढ़े। अभी तो नेशनल स्कूल प्रारम्भ भी नहीं किये गये। खैर जो भी होगा। हम यह पूछना चाहते हैं कि आप स्वयं इंग्लैंड से बैरिस्ट्री पास करके आये थे, विश्व कवि रवीन्द्र नाथ टैगौर, आपके राजनीतिक गुरू गोपाल कृष्ण गोखले, लोकमान्य तिलक, पं० मोतीलाल नेहरू आदि जो हमारे राष्ट्रीय नेता हैं, उनकी भी पढ़ाई इन्हीं स्कूलों और कालेजों में हुई है। आप हमको मना क्यों कर रहे हैं। गांधी जी बोले, बिल्कुल ठीक बैठ जाओ। इसमें कोई शक नहीं मैं गोपाल कृष्ण गोखले को अपना राजनीतिक गुरू मानता हूं। लोक मान्य तिलक जी हमारे राष्ट्रीय चेतना के प्रमुख नेता हुए हैं। उन्होंने हमको बहुत बड़ी चेतना दी। उनसे बड़ा कोई नेता नहीं हुआ है।

प्रश्न – उस समय आपकी उम्र क्या थी ?

उत्तर – मेरी उम्र उस समय 17-18 साल के बीच रही होगी।

गांधी जी ने कहा, लेकिन बच्चों अकेले इस बच्चे के दिमाग में यह शंका नहीं होगी। मैं समझता हूं कि सारे हिन्दुस्तान के बच्चे सोच रहे होंगे तो मैं यह कहना चाहता हूं कि, बच्चों से समानान्तर प्रश्न पूछना चाहता हूँ वही मेरा जवाब है। देखिये महाराष्ट्र में जो हम लोगों की शिक्षा दीक्षा हुई है, वहां यदि भगवान के बाद यदि किसी की पूजा होती है तो मैं समझता हूं छत्रपति शिवाजी की होती है। हर शहर में, हर गाँव में आप छत्रपति स्कूल, छत्रपति छात्रावास और स्मारक देखेंगे। उनकी स्तुति से इतिहास भरा हुआ है।

लोकमान्य तिलक द्वारा आयोजित सभा में विद्यार्थियों के भाग लेने पर प्रतिबन्ध लगा होने के बाद भी मैं कुछ साथियोंके साथ उनके दर्शन करने के लिये गया। लोकमान्य तिलक का 1919 में बरार का दौरा हुआ था। मैं इतना ही बतला देना चाहता हूं कि वहां उनका भव्य स्वागत किया गया। उस वक्त सरकारी आदेश था कि कोई विद्यार्थी राजनीति में हिस्सा नहीं लेगा। किसी नेता की सभा में नहीं जायेगा। यह सब प्रतिबन्ध थे। स्कूल में जिन विद्यार्थियों पर प्रतिबन्ध लगाया गया था, उनमें से एक मैं भी था। हमसे कहा गया कि बस दूर से ही आप लोग लोकमान्य जी के दर्शन कर लें, सभा में कोई नहीं जायेगा। उस दिन तो हम लोग बंध ही गये। दूसरे दिन सुबह की सभा करके उनको खाम गांव जाना था। वहां से प्रोग्राम था लोकमान्य जी का।हम लोग चार आदमी थे, किसी तरह से जब प्रतिबन्ध नहीं रहा तो हम लोग पहुंच गये और पहुंच करके उनके बिल्कुल सामने जाकर बैठ गये। तो उन्होंने देखा कि ये बच्चे हैं। उन्होंने अपने भाषण में यह जिक्र भी किया कि मुझे यह मालूम है कि विद्यार्थियों के ऊपर बन्दिश लगाई गई है कि मेरी किसी भी सभा में न आवे, ये ठीक है। लोकमान्य जी ने हर बच्चे का नाम पूछा। मैंने कहा साहब हमको भी आप अपने साथ ले चलिये। इस पर वह बोले अभी नहीं, साथ तो तुम लोगों को देना ही है, तुम लोग नई पीढ़ी के लोग हो, तुम अभी शिक्षा ग्रहण करो, शिक्षा ग्रहण करने के बाद ही तुम्हें देश को गुलामी के चंगुल से छुड़ाने की चेष्टा करनी होगी। तुम्हें ही सामने आना होगा। उनके इस कथन से थोड़ी प्रेरणा मिली। एक अन्य प्रेरक प्रसंग यह है कि चिकली में कुछ बुजुर्ग लोगों की बैठक हुआ करती थी, उनमें कोई शिक्षित नहीं था। लेकिन जो मराठी समाचार पत्र आता था, उसको पढ़कर सुनाने के लिये किसी न किसी विद्यार्थी की पकड़ते थे। तो एक दिन हमें पकड़ लिया, और कहा, पढ़कर सुनाओ। मालूम नहीं क्यों उनको हमारी पढ़ाई बहुत पसन्द आई। एक दो दिन के बाद मैं आना कानी करने लगा। वैसे तो मेरा नाम राम कृष्ण खत्री है। पर घर पर सब लोग बाबू बुलाते हैं। कहते बाबू को पकड़ कर यहां ले आओ, कहीं भी हो ले आओ। उसका परिणाम यह हुआ कि मुझे भी समाचार पत्र पढ़ने में रूचि आने लगी। तो उससे यह प्रेरणा मिली कि हमारा जो मस्तिष्क है वह प्रखर होने लगा। उसके बाद मैं आगे पढ़ाई के लिये चन्द्रपुर चांदा गया था तो वहां एक श्री कृष्ण क्लब था। उसको फोफले दत्त चलाते थे। उनका काम था कि उस क्लब के ज्यादा से ज्यादा सदस्य बनाते थे, पहले तो वह खेल करवाते, उसके बाद इधर उधर मन्दिरों के ऊपर चबुतरे पर बैठकर कहानी के रूप में सुनाते थे कि खुदीराम बोस को और कन्हैया लाल दत्त को कैसे फांसी हुई। उनका और क्रान्तिकारियों का थोड़ा – थोड़ा इतिहास पढ़ने के लिये हम लोगों को लाइब्रेरी ले जाते थे। हमारा बौद्धिक विकास कैसे हुआ, मैं ये आपको बतला रहा हूँ।

प्रश्न – राजनीति के प्रति लगाव होता गया ?

उत्तर – हाँ, हरिद्वार में। घर से भाग कर वही आना पड़ा। वहां से पहले पढ़ाई के लिये अमृतसर

गये। अमृतसर में जनवरी 1922 को गांधी जी का आन्दोलन पूरी तरह से शुरू हो चुका था। अमृतसर में आन्दोलन में वहाँ की जनता ने बड़ा साथ दिया। हजारों की संख्या में महिलाओं, नौजवानों के जुलूस निकल रहे थे। स्वयं सेवको पर लाठी चार्ज भी हुए। मैंने स्वर्ण मन्दिर के सामने अपनी आंखों से गोरखा पल्टन को लाठी चार्ज करते हुए देखा। लेकिन वह नजारा मैं भूल नहीं सकता कि जब हमारी माताओं, बहनों ने एकदम से सामने आकर गोरखों की लाठी अपने हाथ में ले ली। उसको जांच करने के लिये मालवीय जी की अध्यक्षता में एक कमीशन बैठा। यह लगने लगा कि देशवासियों में जागरूकता आ गई है और समूचा देश गांधी जी के साथ है, लेकिन 17 फरवरी 1922 में चौरी–चौरा में जो काण्ड हुआ था, उससे गांधी जी ने अपने आन्दोलन को स्थगित कर दिया। चौरी–चौरा की इस घटना ने हम लोगों को सोचने पर मजबूर कर दिया कि अहिसांत्मक आन्दोलन के इस दौर में हिंसा की घटना होने के बावजूद भी यदि गांधी जी अहिंसा की बात करते हैं, तो उससे कुछ भी नहीं होगा। खैर हम लोग अलग विचार धारा के थे। हमारे सभी क्रान्तिकारी साथी जैसे भगत सिंह, चन्द्रशेखर आजाद सभी यह कहने लगे कि यदि देश में क्रान्तिकारियों का कोई दल है तो उसमें शामिल होकर भारत को स्वतंत्र कराने के लिये आन्दोलन किया जाय। इसी दौरान बनारस में मेरी मुलाकात चन्द्रशेखर आजाद से हुई, जिन्हें गांधी जी के चलाये गये आन्दोलन के दौरान 16 बेंतों की सजा मिली। उसके बाद वे क्रान्तिकारियों की संस्था ''हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एसोशिएशन'' में शामिल हो गये। आजाद विद्यालयों में जाकर नवयुवकों को, राष्ट्रीय विचारधारा के लोगों को पार्टी में शामिल करते थे

प्रश्न – आप इसी लिये गये थे ?

उत्तर – हाँ, गया तो मैं इसी विचार से था। लेकिन मुझको कोई क्रान्तिकारी वैसे तो मिलता नहीं, गुप्त संस्था होती थी इसीलिये हम खुले आम गांधी जी की आलोचना करते थे। बनारस में एक संस्कृत महाविद्यालय था, उस उदासीन महाविद्यालय में जो दो विद्यार्थी उपेन्द्रानन्द और ब्रहमानन्द थे वह पक्के कांग्रेसी थे। वह हमारी बात सुनकर बहुत क्रोधित हो उठे। हम जानबूझकर गांधी जी की आलोचना करते थे। वहां चन्द्रशेखर आजाद आते थे। वह मुझसे मिलने के लिये आये। तब मैं बीमार था। बुखार भी था। आकर उसने जैसे ही देखा, बोला अरे स्वामी जी आपको तो बुखार है और कहा कि आज से इनका चार्ज मेरे ऊपर रहा। मैं इसीलिये कह रहा हूँ कि चन्द्रशेखर आजाद को लोग यही समझते रहे कि वह कठोर दिल इंसान थे। कवि मृदुता उनके अन्दर नहीं थी, ऐसी धारणा है। ऐसी बात नहीं है। मैं बताता हूं कि जो डेढ़ महीना उसने मेरी सेवा की, वह अद्‌भुत है। वह करीब – करीब 24 घंटे में 18 घंटे मेरी सेवा में देते थे। कोई राजनीतिक बात नहीं होती थी। कोई कुछ नहीं, सिवा इसके कि डा० के यहां से, वैद्य के यहां से दवा लाना। वैसे तो मैं खुद खद्दर पहनता था, लेकिन जब कई महीने हो गये तब उसने कहा भई स्वामी जी आप गांधी जी की आलोचना क्यों करते हैं। हमने कहा एक चीज बताओ, गांधी जी ने एक भी शब्द उन किसानों के लिये क्यों नहीं कहा। हमने कहा, हम तो उसकी खोज में है। वह बोले आप बहुत गल्ती करेंगे। आपको या तो फांसी हो जायेगी या पार्टी वाले आपको गोली मार देंगें। गांधी जी के इस आन्दोलन में देखो मुझे तो सिर्फ 16 बेंत ही लगे। देखो बनारस वालों ने कितना स्वागत किया। मगर हम उस बात को जानने के लिये बहुत जिद करने लगे, तो बोले, अच्छा मेरे भाई, मेरा एक बंगाली दोस्त है जो बनारस पार्टी का है। मैं उससे कहूँगा कि एक उग्र क्रान्तिकारी विचार धारा का एक साधू आया है, अगर आप लोग उसको

उन्होंने सान्याल की बन्दी जीवन और अन्य किताबें जैसे गैरी बाल्डी, आइरिश फ्रीडम स्ट्रगल मुझे पढ़ने को दी। आखिर में उन्होंने रोलेट कमीशन पर एक किताब पढ़ने को दी, जिसे देखकर हमको गुस्सा आया कि भई यह तुम क्या लाये हो। उसने कहा कि इसकी भाषापर मत जाईयेगा। इसमें जो घटनायें और तथ्य हैं, उनसे आपको बहुत कुछ ज्ञानवर्धन होगा। वास्तव में इससे हम लोगों का बहुत ज्ञानवर्धन हुआ। जैसे कि यह पता नहीं था कि गदर पार्टी कौन थी ? क्या थी ? इसके बारे में विस्तृत सूचना रोलेट कमीशन रिपोर्ट में है। एक बात और क्रान्तिकारी पार्टी में नवयुवकों की भर्ती करने में इस रोलेट कमीशन रिपोर्ट की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। बाद में जब ब्रिटिश सरकार को यह पता चला क्योंकि जो कोई क्रान्तिकारी पकड़ा जाता था उसके पास यह किताब जरूर निकलती थी, तो बाद में उसको बाजार से जब्त कर लिया गया।

फिर यह होने के बाद में आखिर उस दिन चार बजे का समय था तो मैं गंगाघाट घूमना चाहता था। मैं नीचे उतर गया, उन्होंने कहा स्वामी जी ऊपर चलिये। मैंने समझा कोई किताब लाये होंगे। लेकिन झोले के अन्दर किताबें और कुछ समाचार पत्र वगैरह थे, खैर अन्दर गये। अन्दर से मेरा कमरा बन्द कर दिया और पिस्तौल निकाल कर रख दिया। तब मुझे यह पता चला कि उस वक्त लड़के कितने भावुक होते थे। हमने उस पिस्तौल को माथे से लगाया।

प्रश्न – बीच में आपका इम्तहान होता रहा ?

उत्तर – तो इस तरह से मैं 'हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन' का सदस्य बनाया गया। मन्मथ नाथ गुप्त,सत्येन्द्र नाथ बाली, राजेन्द्र नाथ लाहिड़ी फिर तो राम प्रसाद, अशफाक उल्ला खाँ, इनको भी वैसे एक दो एक्शन में मुझे भी ले गये जिसका नौजवानों ने विरोध किया। एक में तो खैर भगत सिंह भी गये थे। बाद में यह हुआ कि गाँव के एक्शन में हम नहीं ज़ायेंगे। भगत सिंह और हमने विरोध किया। नौजवानों का रूझान जब इसके विरोध में दिखा, तब राम प्रसाद जी ने इस बात पर विचार किया। इत्तिफाक से सहारनपुर से लखनऊ तक एक डाउन पैसेन्जर ट्रेन आती थी, उसमें यह होता था कि हर छोटे से लेकर बड़े स्टेशन के जितनी दैनिक बिक्री होती थी, उसको चमड़े की थैली में सील करके गार्ड के डिब्बे में जो बक्सा होता, उसमें डाल देते थे। वह बक्सा यहां आकर लखनऊ में खोल दिया जाता था, इस बात का उन्होंने पता लगा लिया था। यह अंदाजा था कि इसमें काफी रुपया निकलेगा एक्शन की बात तय हुई। उसमें हमारे दस साथी गये थे। मैं नहीं था उसमें, मैं पार्टी में तो था ही। हमारे तीन आदमी द्वितीय श्रेणी में थे और बाकी सब तृतीय श्रेणी में थे। (पूर्व योजना के अनुसार) निर्धारित समय से पूर्व जंजीर खींचकर ट्रेन रोकी गयी। ट्रेन रूकी, गार्ड आया। उसने पूछा जंजीर किसने खींची है ?

प्रश्न – क्या जंजीर लटक आती है ?

उत्तर – हां, वह आया और वह डिब्बे के सामने रूक गया। द्वितीय श्रेणी में सवार तीनों साथी नीचे उतर चुके थे। उनमें राजेन्द्र नाथ लाहिड़ी, अशफाक उल्ला खां और सत्येन्द्र नाथ बक्शी थे। यह तीनों उतरे। गार्ड ने पूछा जंजीर किसने खींची ? उन्होंने कहा, हम लोगों ने। वह बोला क्यों ? हमारे साथियों ने कहा, हमारी पत्नी के जेवर का बक्सा कानपुर स्टेशन पर रह गया है, आप गाड़ी पीछे ले चलिये। वह बोला गाड़ी पीछे करने का तो प्रश्न ही नहीं उठता है। हमारे साथी उससे बहस करते करते उसको अपने डिब्बे के पास ले आये और एकदम से जो बाकी सब तृतीय श्रेणी में थे, जैसे

राम प्रसाद बिस्मिल, मन्मथ नाथ गुप्त, चन्द्रशेखर आजाद, मुकुन्दी लाल यह सब वहां आ गये। इधर से फायरिंग करना शुरू कर दिया। कुछ लोग जो नीचे उतरे थे, उनसे कहा आप लोग डिब्बे के अन्दर चले जाइये। हम लोग किसी को नुकसान पहुंचाने नहीं आये हैं, यहां पर हम सरकारी खजाना लूटने आये हैं। फायरिंग होने पर यह कोई अनुमान नहीं लगा पाया कि कितने लोग हैं इनके पास कितने हथियार हैं।

प्रश्न – यह सब इसलिये कि वह सामने न आये ?

उत्तर – हाँ, सामने न आये। इसका परिणाम यह हुआ कि बक्सा गिराया गया और गार्ड से चलने को कहा गया। बाद को बक्शी जी ने कहा, ये तो सबको पहचान रहा है। वह बोला मुझे जान से मत मारो मैं ईसाई हूं। मैं कसम खाता हूं कि मैं किसी को नहीं बतलाउंगा। उस बक्से को तोड़ने की बंगालियों ने बहुत कोशिश की, लेकिन वह उनसे नहीं टूटा। अशफाक उल्ला खां छेनी ले गये थे, तब वह टूटा और साहब वह निकाल लिया गया। किसी तरह वहाँ से पैदल लखनऊ आये। कुछ लोग यहां लोहिया पार्क में कुछ देर ठहरे। उन दिनों की दैनिक बिक्री कितनी थी, इसका आप अन्दाजा लगा लीजिये। आठ हजार के करीब कुछ निकला, जो वर्तमान समय के आठ लाख से अधिक हो सकता है। खैर वह काम आ गया, लेकिन उसके बाद धर पकड़ शुरू हो गई। धर पकड़ इसलिये शुरू हो गई कि उदासी के बड़े अखाड़े में जो महन्त जी थे, उनका मैं शिष्य था। वहां मैं अपने हाथ से दीवाली के दिन पचास हजार रूपये घड़े में भर कर जहाँ बैठक खाना था, उसके अन्दर रख दिया। यह सूचना मैंने राम प्रसाद मिश्र को दी थी। राम प्रसाद मिश्र, वल्लभ चन्द्र गौड़, यह सब जाकर उसका अध्ययन भी कर आये थे। इसमें पंजाब, बंगाल, बिहार, उत्तर प्रदेश के सारे क्रान्तिकारी लगने वाले थे और दिन में एक्शन होने वाला था। इसके लिये कार की व्यवस्था थी। लेकिन आप जानते हैंकि इन सबमें कोई न कोई तो गद्दार निकलता ही है। तो हमारे इसमें भी एक साथी गद्दार निकला। उसने इसकी सूचना सी० आई० डी० वालों को दे दी। नतीजा यह हुआ कि ....।

प्रश्न – क्या उसका नाम बतायेंगे ?

उत्तर – शिवचरण।

मुझे आदेश दिया गया कि तुम महाराष्ट्र चले जाओ, क्योंकि यदि कभी जांच हुई या कुछ हुआ तो सारी बातें आपके ऊपर आ जायेंगी। मैं महाराष्ट्र चला गया। सितम्बर सन् 1925 की बात थी। मैं 14 -15 तारीख को बनारस होते हुए गया। बनारस में एक दिन मैंने अपने साथियों से कहा कि मुझे तो विदा कर दिया है, मैं तो महाराष्ट्र जा रहा हूं। इत्तिफाक से वहां राजेन्द्र नाथ लाहिड़ी के यहां सत्येन्द्र नाथ बक्शी, चन्द्र शेखर आजाद आदि सब मौजूद थे। वहां मैं सबसे मिला। चन्द्रशेखर आजाद सबसे कह रहे थे कि ऐ बंगालियों भागो सी० आई० डी० का एक्शन हो चुका है। ट्रेन डकैती की घटना घट चुकी थी। सी० आई० डी० का जाल बिछा है, तुम लोग किसी समय पकड़े जाओगे। मैं उसकी बात सुनता रहा मैंने कहा, आजाद तुम सबसे कह रहे हो तुम क्यों नहीं भागते। हमारे बीच में मत बोलो, तुम हमारी फिक्र मत करो। इन लोगों से भी कह दो। उसने कहा ब्रिटिश साम्राज्य में कोई ऐसी गोली नहीं बनी है या कोई ऐसा लोहा नहीं बना है जो मेरे हाथ में हथकड़ी डाले। मैं जब तक जिन्दा हूं मुझे कोई नहीं पकड़ सकता। उसके बाद जैसे ही सूचना मिली धर पकड़ शुरू हो गई। 26 सितम्बर 1925 को सारे भारत में एकदम सब लोग पकड़े गये। एकदम से शाहजहांपुर, बदायूं, रायबरेली, बनारस,

इलाहाबाद कानपुर और जहां कहीं उनको कोई मिला यहां तक कि बंगाल के भी कुछ लोग जो 9 अगस्त को गायब हो गये थे, उनमें से भी कुछ लोग पकड़े गये, बाद में उन्हें छोड़ दिया गया। संक्षेप में बताऊं, उसके बाद मेरी गिरफ्तारी मेरी अपनी बेवकूफी से हुई। चन्द्रपुर में मैंने चिटिठ्यां डाली थीं, जो राम प्रसाद बिस्मिल का पोस्ट बाक्स था। इन्द्र भूषण मिश्रा ने वह चिट्ठी पकड़ ली, उसको मेरा पता मिल गया। इत्तिफाक से ऐसा हुआ कि मेरी बहन की मृत्यू हो गई तो मैं दो दिन तक कोई समाचार पत्र भी नहीं पढ़ सका। इसी बीच यह सब हो चुका था। एक दिन मैं अपने मित्र के यहां मिलने गया। उन्होंने कहा, अरे यू० पी० में तो आपके सारे नौजवान पकड़ लिये गये हैं। पहले तो हम समझे नहीं, हमने कहा क्या कह रहे हो, उन्होंने कहा क्या कोई काकोरी केस हुआ है? हमने कहा हमको नहीं मालूम, हम तो साधू आदमी, हमको क्या मालूम। हम उसको कैसे बतलाते कि हमको सब मालूम है। मालूम हुआ, राम प्रसाद बिस्मिल पकड़े गये। सब के सब पकड़े गये तो हम वहां से भाग कर पहले नागपुर आये नागपुर से हम पूना गये। पूना में भी हमारे एक साथी ने गद्दारी से सूचना दे दी कि ये काकोरी केस वाले हैं तो वहां से हमको पकड़ लिया। 18 अक्टूबर 1925 को मुझे पूना से पकड़ा। राय साहब जगन्नाथ प्रसाद जो सी० आई० डी० इस्पेक्टर था, वह हमको ले आया। दारूलशफा के एक बंगले में रखा। एक रोज पूरे दिन पूछताछ होती रही। अंत में जो हाटम सी० आई० डी० का इंचार्ज था, वह आया तो उसने राम प्रसाद बिस्मिल का नाम लेकर गाली गलौच की कि इन लोगों ने नौजवानों का दिमाग खराब कर दिया है। हमने उनको समझाना चाहा, किन्तु सब व्यर्थ। उसने कहा इनको ले जाओ। उसका परिणाम यह हुआ कि, उन्होंने मुझे सबसे अलग रखा। 11 नम्बर बैरक में। आपने देखा होगा एक छोटा सा कमरा।

प्रश्न – कोठरी ?

उत्तर – लेकिन बड़ी है, लखनऊ जिला जेल के अन्दर। वहां जब तक सब इक्ट्ठा नहीं किये गये तब तक डेढ़ महीने के लिये वहीं रखा। उसका परिणाम यह हुआ कि एक तो मैं उर्दू नहीं जानता था, महाराष्ट्र से आया था। दीवानी बैरक में राम प्रसाद बिस्मिल, शीतला साहब और कई लोग वहां पर यह कहने लगे कि ये कौन लोग हैं, क्या हैं? बोले इनका नाम गोविन्द प्रसाद है, वैसे इनका नाम राम कृष्ण खत्री है। उनको अलग रखा गया। अब हमारे उनके बीच का सम्पर्क माध्यम खाना देने वाला वह पंडित था, जो दीवानी बैरक में भी खाना देता था और हमको भी देता था। वार्डन भी सामने रहता था और वह बहुत सख्त था। अतः मौका नहीं मिलता था। फिर जब मौका मिला, तो उसने पूछा, कि साहब आपके कुछ साथी दीवानी बैरक के कुछ हैं, आप मुखबिर तो नहीं हैं ?

प्रश्न – अच्छा तो वह लोग समझ रहे थे कि आप मुखबिर हैं ?

उत्तर – सुनिये, पहले दिन तो हमने कहा कि भाई मैं उस लायक नहीं हूँ। उस लायक तो हमारे पं० राम प्रसाद बिस्मिल हैं अर्थात हमारे नेता ये लोग हैं। हम तो एक मामूली सिपाही हैं ये कह देना। उसने यह जाकर कह दिया तो वहां यह कहा गया कि उससे पूछो कि आप मुखबिर हैं कि नहीं। अब वह कई दिनों तक पूछता रहा। आखिरकार तंग आकर एक दिन मैंने उससे कह दिया कि मैं मुखबिर हूं। अब वहां तहलका मच गया। ''प्रताप'' में भी छप गया कि रामकृष्ण खत्री मुखबिर हो गये हैं। उन्होंने बयान दिया है। जवाहर लाल जी को आगाह कर दिया गया असल में एक स्वामी गोविन्दा नन्द कराची

से आये थे। वे पेशावर के थे और वे यह समझे कि यह अंग्रेज है। सबसे ज्यादा आइडेन्टीफिकेशन मेरा हुआ।

प्रश्न – आपका ही हाथ ?

उत्तर – जब पांच सात गवाह गुजर गये, दुबलीस के दिमाग में आया कि यदि यह मुखबिर होता तो 'आइडेन्टीफिकेशन' करने खुद आता। इसको खड़ा क्यों किया गया। उन्होंने कहा, सुनो, बीच में खड़े हो जाओ। मुझे बीच में खड़ा कर दिया गया। जबरदस्त शिनाख्त हुई। उस रोज तो जब आइडेन्टीफिकेशन हो गया तो सब शिनाख्ती उसी ग्यारह नम्बर बैरक में आ गये। शाम को सब एक – एक करके सब इकट्ठे हो गये। रात भर सब लोग नाचे, खेले, कूदे। सब एक दूसरे से कह रहे थे, होशियार – होशियार यह मुखबिर है। कोई इससे बात नहीं करेगा।

दूसरे दिन सुबह हुई तो फिर जेलर को पकड़ा। उन्होंने कहा, आइये। हमको गेट के ऊपर ले गये। अब 11 नं० की बैरक में तो तनाव हो गया। सब साथी बोले कहां गये थे। हमने कहा, भइया गेट पर गया था और कहां गया था। क्यों गये थे ? मैंने देखा उनके स्वभाव में उग्रता थी। हमने कहा, पं० जी क्या गेट पर जाने पर कोई बन्दिश है, क्या धारा 144 लगा रखी है आपने। उन्होंने कहा तुमने पुलिस को क्या बयान दिया है ? हमने कहा देखिये पं० जी आप भी दोषी हैं, मैं भी दोषी हूं। अगर आप मुझसे इस तरह से प्रश्न करेंगे तो मैं आपसे पूछता हूँ। आपने पुलिस को क्या बयान दिया है। अब तो बिस्मिल जी बहुत ही क्रोध पूर्ण स्थिति में दिखाई दिये। जैसे मार पीट करेंगे, लेकिन हमारे बीच में कुछ बुर्जुग भी थे। उनमें सान्याल जी भी थे। उन्होंने कहा भाई इसके ऊपर बिगड़ने से पहले देखो तो, इससे पूछो तो क्या बात है। उन्होंने कहा, भई पं० जी, आप अलग रहो, मुझे बात करने दो। उन्होंने कहा, भइया खत्री तुमने यह कहा कि तुम किसी के मुखबिर हो। मैंने कहा, क्या करूं दादा ? वह हमारे पीछे पड़ गया कि आप मुखबिर हैं। हम तो इस लायक हैं ही नहीं। हमने उससे दस बार कहा कि इस लायक आप हैं, हमारे पं० जी हैं। उन्होंने कहा क्या बात करते हो ? बोले इसका अर्थ भी जानते हो? मैं बोला क्यूं नहीं जानता हूँ। मैं मध्यमा संस्कृत का विद्यार्थी रहा हूं। तब हमने उनको संधि करके बतलाया। वीरस्य मुखः सः मुखबीरा। उन्होंने मात्र सिर को हाथ लगाया।

प्रश्न – कितने साल केस चला और कितने साल की सजा हुई ?

उत्तर – डेढ़ साल केस चला।

प्रश्न – कहां ?

उत्तर – आज का जो आपका जी० पी० ओ० है, वहां एक रिंक थियेटर था। रिंक थियेटर दास नामक व्यक्ति का था। उसमें सेशन जज की विशेष अदालत लगी और वहां डेढ़ साल मुकदमा चला। 6 अप्रैल 1927 को फैसला होना था तो साहब 5 अप्रैल की रात हम लोगों ने कैसे बितायी। बड़ी ऐतिहासिक रात थी। इसलिये मैं उसका जिक्र कर देना चाहता हूं। वहां भी दो ग्रुप थे और जो उनमें बुजुर्ग हैं जैसे सान्याल, योगेश चन्द्र चटर्जी, गौड़ लाल वह हमसे उम्र में बहुत ज्यादा बड़े थे। उनका दल था। मैं, मन्मथ नाथ गुप्ता, राजकुमार सिन्हा, भूपेन्द्र नाथ सान्याल, राम दुलारे त्रिवेदी ऐसे पांच छः नौजवान उम्र में कम थे।

प्रश्न – प्रेम देव खन्ना भी थे ?

उत्तर – प्रेम देव खन्ना बुजुर्ग थे। वह हमसे आठ साल बड़े थे तो वह भला हमारा साथ कैसे देते। तो वहां कोर्ट बैठी। आप सुनकर हैरान होंगे कि उस अदालत का जज मुझे बनाया गया कि यही सबका फैसला करेंगे। यदि बड़े मुखबिर का फैसला करना है, तो यही करेगा। अब साहब मुकदमें का फैसला हुआ। तो हमने पहले राम प्रसाद बिस्मिल को फैसला सुनाया। राम प्रसाद बिस्मिल जी को कहा कि मैनपुरी केस में आप दोषी ठहराये गये थे। लेकिन आप फिर बाज नहीं आये। हमको मालूम था कि इनको 19 को फांसी होगी। उनको फांसी की सजा सुनाई गई। दूसरा नाम हमारे नेता शचीन्द्र नाथ सान्याल का था। उन्होंने कहा, सुनो तुम बउदी को कहते हो बड़ी सुन्दर है और बड़ी प्यारी है।

प्रश्न – बंगला में बउदी भाभी को कहते हैं ?

उत्तर – हां ! तो आपको करना क्या है, बउदी की आड़ लेना है। सजा तो हम सुनायेंगे, बउदी नहीं। वह बोले, नहीं, सुनाने से पहले जरा इस बात का ख्याल रखना। हमने कहा ठीक है। अब रोशन सिंह की बारी आयी। उनके खिलाफ कोई नहीं बोला, सिर्फ जो दूसरे पक्ष का गवाह था उससे जिला पुलिस वालों ने ही कहलवाया कि हाँ रोशन सिंह की बमरौली डकैती में आवाज आ रही थी। हम समझते थे कि उनके खिलाफ कोई गवाह है ही नहीं। तो हमने ठाकुर साहब को पांच साल की सजा सुनाई। अब ठाकुर साहब अत्यधिक क्रोधित हो गये। कहने लगे कि तुम अपने को बहुत बड़ा और महान क्रान्तिकारी समझते हो। हमने उनको शान्त करने की कोशिश करते हुए कहा कि देखो यह अदालत है यहाँ अदालत की अवज्ञा करने के अपराध में आपकी सजा दो तीन महीने और बढ़ाई जा सकती है। इससे वह और भी क्रोधित होते हुए अदालत में मार पीट करने लगे। फिर गोविन्द दा ने बीच बचाव करने की कोशिश करते हुए कहा कि आप क्यों बच्चों के मुंह लगने की कोशिश कर रहे हैं। ठाकुर साहब हमको भी मालूम है कि आपके खिलाफ कोई ऐसा गवाह तो है नहीं। वह ठीक ही तो कह रहा है कि कौर दा बोले भई जो भी होना है, कल होना है, किसको क्या पता, आपस में क्यों लड़ाई कर रहे हो? इस तरीके से जिसको हमने कम सजा सुनाई वह बिगड़ उठता था।

प्रश्न – ये था जज्बा !

उत्तर – ये जज्बा था नौजवानों में। तो साहब रात को सोने से पहले हम राजेन्द्र नाथ लाहिड़ी के पास गये। हमने कहा, राजेन्द्र जी आप क्या सोचते हैं आपको कितनी सजा होगी। राजेन्द्र लाहिड़ी को दस साल की सजा दक्षिणेश्वर बम केस में पहले से ही थी। उन्होंने कहा भई दस साल की सजा तो पहले ही पाकर आया हूँ। अब मैं इतना ही जानता हूँ कि आजीवन काले पानी की सजा तो देंगे ही, इसमें कोई शक की बात नहीं है। वह लोग हमको फांसी भी दे सकते हैं, जिसके लिये मैं तैयार बैठा हूँ। रात ऐसे ही बीती। सुबह सब लोग जल्दी – जल्दी तैयार हुए हम भी हुए। एक काम मैंने किया कि वहां जितनी फुलवारी थी, सबके फूल तोड़े, फूल तोड़ कर किसी तरह से दो चार मालायें बनायी। अब सचिन जी बिगड़ रहे थे कि ये क्या भावनायें हैं, मालायें बनाओ। हमने कहा देखो, हमारे इस काम में यदि दखल अंदाजी करोगे तो ठीक नहीं होगा। हमको जो करना है, करने दीजिये। आपको तो करना नहीं है। वह बोले अच्छा – अच्छा बाबा जो करना है, करो। खैर। राम प्रसाद बिस्मिल अपने हाथ से खाना बनाते थे। उस रोज भी अपने हाथ से खाना बनाया था और थाली परोसी हीं

थीं कि मैं वहां पहुंच गया। मैंने कहा मेरी एक छोटी सी प्रार्थना है कि अगर आप माने तो मैं कहूँ। तो बोले, कहो। मैंने कहा, मालूम नहीं आज के बाद आप मिले या नहीं मिले, छोटे भाई होने के नाते मैं आप से निवेदन करना चाहता हूँ। मैंने उठकर उनको खाना खिलाया। उन्होंने मुझको खाना खिलाया। जैसे ही हमारे साथियों को यह मालूम हुआ कि यहाँ सब कुछ हो रहा है, वह अपना खाना–पीना छोड़कर दौड़े–दौड़े आये। सब सत्रह के सत्रह लोग उस थाली में से उठाकर खाना एक दूसरे को खिला रहे थे। आप कल्पना कर सकते हैं कि वह दृश्य कैसा था। राय साहब चम्पा लाल जो जेलर थे, वह यह कहने के लिए आये थे कि जल्दी–जल्दी चलो। उन्होंने जब यह दृश्य देखा तो उनकी आखों से टप–टप आंसू गिरने लगे। खैर, उन्होंने कहा लारियाँ आ रही हैं, जल्दी–जल्दी करें। हम लोगों को रोज बेडियां पहनायी जाती थी और रोज काटी जाती थीं। खैर उस दिन हम लोग वहाँ से चले। उस दिन एक विशेष इंतजाम था कि पायलट गार्ड अलग है। हमारे पीछे–पीछे और साथ–साथ दो लारियां चल रहीं है और हॉटन अपनी कार में अपने पांच सात साथियों को वह लेकर बराबर से चलता रहा। इस इंतजाम के साथ हम लोग लाये गये और वहां पोर्टिको में हम लोगों को उतारा गया। उस दिन हम लोगों ने गाना गाया। ऐसे तो हम लोग रोज ही राष्ट्रीय गाना गाते थे और भीड़ होती थी।

प्रश्न – कौन सा गाना गाते थे ?

उत्तर – मैं बतला रहा हूं। बहुत से गाने थे, लेकिन सब राष्ट्रीय गाने थे। कुछ तो प्रतिबन्धित थे, कुछ नहीं थे। कुछ को छोड़ दीजिये। उस दिन तो हम सब 19 लोगों ने एक गाना गाया। वह गाना था ....

सरफरोशी की तमन्ना, अब हमारे दिल में है।
देखना है जोर कितना, बाजुवे कातिल में है।

अब वह इस जोश और जुनून के साथ गाना गाया गया कि मैं क्या बताऊँ। सब के सब एक साथ हाथ उठाते थे कि सरफरोशी की तमन्ना.........मतलब वह सुनने जा रहे थे, अपने भाग्य का फैसला। तो वह उसमें कह रहे थे कि तुम्हारे हाथों में कितनी ताकत है। अब एक इंस्पेक्टर हमको रोकना चाह रहा था तो हॉटन ने उसे बीच में ही रोक दिया कि इस समय ये लोग जोश में हैं, अगर रोकोगे तो बवाल हो जायेगा।

हमको क्या मालूम था कि बाद में वह ऐतिहासिक गाना होगा फिर तो जब भी देश के ऊपर मुसीबत आयी वह गाना गाया गया, लेकिन एक बात बतला दूं, वह ट्यून, धुन आज तक हमको सुनने को नहीं मिली। उस वक्त वह गाना नहीं था, मानो सरकार के समक्ष एक चुनौती थी। वह सब गाना खत्म हुआ। अब वकील साहब का कहना था कि साहब हमने सुना है कि बड़ी भारी बहस होने जा रही है। हम लोगों ने कहा जो होना है, देखा जायेगा। अब तो हम लोग आ ही गये हैं। मुकदमा शुरू हुआ,जज ने फैसला सुनाना शुरू किया तो स्वाभाविक है। सबसे पहले राम प्रसाद बिस्मिल का नाम आया। उनको (2) ए के तहत आजीवन कारावास और धारा 120 के तहत आजीवन कारावास और धारा 396 के तहत फांसी की सजा सुनाई गई। दूसरा नाम राजेन्द्र नाथ लाहिड़ी का आया। उनको भी उपरोक्त धाराओं के तहत आजीवन कारावास और फांसी की सजा हुई। तीसरा नाम रोशन सिंह का आया उन्हें भी उपरोक्त धाराओं के तहत पाच – पाच वर्ष का कारावास और फांसी की सजा सुनाई गई। रौशन सिंह

की फांसी की सजा सुनकर अदालत में स्तब्धता सी छा गई। कोई भी रोशन सिंह को फांसी मिलने के बारे में सोच भी नहीं सकता था। जज ने फैसला अंग्रेजी में सुनाया था, ठाकुर साहब अंग्रेजी जानते नहीं थे। कहने लगे, यह फाइव इयर्स – 2 कहा तो हम समझ गये कि हमको पाँच साल की सजा हुई है, लेकिन बाद में क्या कहा ? बगल में खड़े विश्व सरन विष्ट से पूछा, जज ने बाद में क्या कहा। हम नहीं समझे। विश्व सरन विष्ट ने उनको बतलाया कि आपको फांसी की सजा हुई है। ऐसा लगता था कि कहीं वह यह सुनकर अदालत के अंदर कोई दृश्य न उपस्थित कर दें। मगर आशा के विपरीत उनका चेहरा कमल के समान खिल उठा। कहने लगे, राम तुम अकेले जाना चाहते थे। हमने कहा, ठाकुर साहब आप महान हो, खैर, बाद में किसी को आजीवन कारावास दिया गया। हमको दस साल की सजा सुनाई गई। अशफाक उल्ला खां और सत्येन्द्र नाथ बक्शी के केस में उन दोनों को फांसी की सजा हुई थी। ऐसे चार लोगों को काकोरी षडयंत्र केस में फांसी की सजा हुई थी। एक बात और वहां उपस्थित सभी क्रान्तिकारियों ने, जो बंगाली थे, अपने सिद्धान्तों के विपरीत फांसी की सजा पाये उन नवयुवकों के जो आयु में उनसे छोटे थे, चरण रज ली। मातृभूमि पर शहीद होने वाले इन क्रान्तिकारी सपूतों को ले जाते हुए हमने गाना गाया। वह गाना था .

" खुश रहो अहले चमन हम तो सफर करते हैं "

जो कि ब्रिटिश सरकार द्वारा प्रतिबंधित गाना था। सी० आई० डी० वाले इस प्रतिबंधित गाने को गाये जाने का विरोध करने लगे। हम लोगों ने कहा कि इस गाने को गाये, बिना हम यहाँ से जायेंगे नही। हाटन ने वकील से हम लोगों को समझाने को कहा। वकील ने कहा कि आप तो सजा दे चुके हैं और अब गाने पर प्रतिबन्ध लगा रहे हैं। जब कि बगैर गाना गाये यह यहाँ से जायेंगे नहीं। यदि हम पर पाबन्दियाँ लगाई गईं तो हम अदालत से बाहर चले जायेंगे। आप चाहे इन पर गोलियां चलाइये या कुछ भी करिये। अंततः हाटन ने अपने इंसपेक्टरों को रोकते हुऐ हम लोगों को गाना गाने की अनुमति दे दी। इस तरह हमने पूरा गाना गाया। फिर उन तीनों को और हमको एक साथ लारी में ले गये। जिला जेल के द्वार पर हमारा एक ग्रुप फोटो लिया गया। सी० आई० डी० वालों ने सजा प्राप्त किये गये सत्रह लोगों का ग्रुप फोटो लिया। उसके बाद हम लोगों को अलग – अलग कर दिया गया। फांसी वाले लोगों को अलग – अलग जगहों में भेजा गया। रामप्रसाद बिस्मिल को गोरखपुर भेजा गया, राजेन्द्र प्रसाद लाहिड़ी को गोण्डा और अशफाक उल्ला खां को फैजाबाद, ठाकुर रोशन सिंह को मलाका जेल भेजा गया। 17 दिसम्बर 1927 को राजेन्द्र नाथ लहरी (लाहिड़ी) को गोण्डा जिला जेल में फांसी हुई थी। फांसी वाले दिन के लिये द्वारिका प्रसाद नामक हिन्दुस्तानी जिला–जज आये थे, अंग्रेज जज नहीं आया। शेष जेल अधीक्षक, जेलर और अन्य व्यक्ति बैरक के सामने खड़े हो गये। राजेन्द्र नाथ लाहिड़ी ने स्नान करके गीता का पाठ और दंड बैठक किया। उनके चेहरे के ऊपर शांति के भाव थे, यह देखकर सब चकित थे। जिला मजिस्ट्रेट ने उन्हें दण्ड बैठक करने दिया और फांसी के लिये उन्हें हथकड़ी पहनाने को मना कर दिया और उन्हें बीच में ले चलने को कहा। चलते समय जज से रहा नहीं गया और अंग्रेजी में पूछा कि रोज इस गीता पाठ और व्यायाम की क्या आवश्यकता है, जब कि आपको फांसी लगने वाली है ? उसने अंग्रेजी में जवाब दिया कि जैसा आप जानते हैं कि मैं एक हिन्दू हूं और हिन्दू होने के नाते मैं मरने नहीं जा रहा हूँ, वरन् विदेशियों से अपनी मातृभूमि को मुक्त कराने जा रहा हूं। यही मेरा मेरे देशवासियों के लिये आखिरी संदेश है कि यदि आप

भी भारतीय हो तो कृपया मेरे इस संदेश को जन–जन तक पहुँचाओ। बहुत शान्ति पूर्वक उन्होंने फांसी का फंदा सहर्ष स्वीकार कर लिया। दूसरे तीन साथियों को 19 दिसम्बर 1927 को फांसी की सजा हुई थी। राम प्रसाद बिस्मिल को गोरखपुर के जेल में, अशफाक उल्ला खां को फैजाबाद जेल में और ठाकुर रोशन सिंह को मलाका जेल में। राम प्रसाद बिस्मिल की मां, पिता और भाई उनसे जेल में मिलने आये थे। 18 दिसम्बर को शिव वर्मा को भी बिस्मिल से पूछने के लिये भेजा गया कि रूपया या हथियार कहां रखे हुए हैं। शिव वर्मा ने उनके पिताजी से कहा कि हम बिस्मिल से मिलना चाहते हैं। पं० जी ने कहा कि वहां सी० आई० डी० का पहरा होने के कारण हम तुमको अपने साथ नहीं ले जा सकते, क्योंकि बिस्मिल का एक ही छोटा भाई है और हम तुमको दूसरा भाई बनाकर भी नहीं भेज सकते। तब उन्होंने बिस्मिल की मां से कहा कि वह बिस्मिल से मिलना चाहते हैं। तब बिस्मिल की मां ने उन्हें अपने साथ ले जाकर बिस्मिल से मिलवाया। खैर अंदर गये। उस समय गोरखपुर से प्रकाशित 'स्वराज' समाचार पत्र के संपादक भी मुलाकात के लिये गये थे और वह जाकर बिस्मिल से मुलाकात करने के लिये लाये। यह स्वाभाविक था कि मां को देखकर बिस्मिल की आंखें डबडबा गयीं। ऐसा लगता था कि उनकी मां अन्य हिन्दुस्तानी माँओं की तरह अपने बेटे को जिसे कल फांसी होने वाली है, आज उसके बड़े बेटे की आंखों में आँसू देखकर इस बुरी तरीके से डाँट रही थी। ऐसा उनका ऐतिहासिक उत्तर था। दूसरे दिन फाँसी पर लटकाये जाने का समय आया तो उन्होंने कहा, मैं ब्रिटिश साम्राज्य का अन्त चाहता हूँ। उनके यह अन्तिम शब्द थे और वह फांसी पर चढ़ गये। फांसी हो गयी। अब उनके मृत शरीर को ब्रिटिश सरकार किसी भी तरह से देने को तैयार नहीं थी। जिला जज और पुलिस अधीक्षक सब अंग्रेज थे। उन्होंने जेल के अन्दर उनका अन्तिम संस्कार करने का प्रबन्ध करा रखा था और बिस्मिल की मां, पिता, भाई को वहाँ बुलाया गया था। मैं बार – बार कहता हूँ कि देखिये शहीदों को तो इतिहास में भी स्थान मिला है, लेकिन माताओं और बहनों को जिनकी कोख से वह पैदा हुए, जिन्होंने उन्हें इतना बड़ा साहस दिलाया, उनको इतिहास में किसी ने स्थान नहीं दिया। खैर ..... माँ ने वहां जिद पकड़ ली कि या तो आपको मेरे बेटे की लाश देनी होगी या फिर मेरी भी लाश यहां जलानी होगी। उनके इस हठ के आगे जिला मजिस्ट्रेट ने कमिश्नर को बुला लिया। सब अंग्रेज थे और गर्वनर से परामर्श करके लाश इस शर्त पर सौपनें को तैयार हो गये कि आप जुलूस नहीं निकालेंगे। माँ ने कहा कि मैंने किसी को जुलूस निकालने को नहीं कहा, ना ही मुझे इससे कोई मतलब है। मुझे तो अपने बेटे का दाह संस्कार करना है। यह आप लोगों की जिम्मेदारी है कि आप उन लोगों को आने से रोकें। हम लोग तो जायेंगे ही। खैर लाश लेकर हम लोग चले। इस तरह लाश लेकर पच्चीस – तीस हजार लोगों का जुलूस चला। जुलूस में जयदेव कपूर भी थे। जुलूस जब उर्दू बाजार से शमशान घाट की तरफ चला, माँ ने जुलूस रूकवाकर वहां एक बहुत सटीक और ओजस्वी भाषण दिया। उन्होंने अपने दूसरे पुत्र (बिस्मिल के छोटे भाई) का हाथ पकड़ कर जयदेव कपूर के हाथ में देते हुए कहा कि मेरे पास इस मातृभूमि को देने के लिये अपने इस पुत्र के सिवा कुछ नहीं है। मेरी यह इच्छा है कि यह अपने बड़े भाई के पदचिन्हों पर चलकर मातृभूमि की सेवा करते हुए शहीद हो। लेकिन जिस भाई को (पुत्र को) देश सेवा में अर्पित किया था, उसकी मृत्यु टी० बी० से हुई। देश ने उसको पूछा तक नहीं। 1930 में गोविन्द वल्लभ पन्त के मुख्यमंत्रित्व काल में उन्हें तीस रूपये महीने की पेंशन बांधी गयी। किन्तु धन्य है वह माँ, जिसने अपने स्वाभिमान की खातिर जिला मजिस्ट्रेट के हाथों से भी पेंशन लेने से इन्कार कर दिया। यह हुई स्वाभिमान की बात।

लेफ्टीनेन्ट श्री सुधीन्द्रकुमार वर्द्धन



मेरा जन्म स्थान सिंगापुर है। 11 फरवरी, 1924 मेरी जन्म तिथि है। जहाँ तक शिक्षा का ताल्लुक है, मैंने 1940 में सीनियर कैम्ब्रिज पास किया था और 1941 में डा० बनने की तैयारी कर रहा था। जब लड़ाई शुरू हुई तो शिक्षा को समाप्त कर देना पड़ा। मैं अपने माता पिता का एकलौता लड़का हूं। चार बहनें हैं। हम अकेले ही सिंगापुर में रहा करते थे। मेरी माता जी चार बहनों को लेकर हिन्दुस्तान में रहती थीं। तब नेता जी सुभाष चन्द्र बोस के बारे में हमें बहुत ज्यादा तो जानकारी नहीं थी। हां थोड़ी बहुत जानकारी अवश्य थी कि वे एक बहुत ऊंचे दर्जे के राजनेता हैं। जब नेता जी बर्लिन (जर्मनी) से एशिया 1943 में आये और एक जनसभा को सम्बोधित किया और भारत का इतिहास हम लोगों के सामने रखा, तब सबसे पहले हमने असली भारत को एक असली भारतीय की नजर से देखा। नेता जी ने फौज में भर्ती होने के लिये अपील किया था। हजारों लोग इससे प्रभावित हुए। हम लोगों ने यह निर्णय लिया कि हम फौज में भर्ती हो जायेंगें। 5 जुलाई को हम आजाद हिन्द फौज में भर्ती हो गये। उस समय मैं डाक्टर बनने की तैयारी कर रहा था। लड़ाई शुरू होने के बाद क्या हुआ कि ब्रिटिश सरकार ने जितनी शैक्षिक संस्थायें थीं, उन्हें बैरक बना दिया। लड़ाई के बाद नेता जी आ गये। नेता जी ने फौज बनायी और इन्होंने अपील की। तब हम नहीं, हमारे जैसा हजारों नौजवानों ने सोचा कि हमको नेता जी की फौज में भर्ती होना चाहिये और आजादी की लड़ाई लड़नी चाहिये। तो हम भी फौज में भर्ती हो गये। वहां से ट्रेनिंग प्राप्त करके मुझे पहला सेकेण्ड लेफ्टीनेन्ट का कमीशन मिला। इसके बाद मेरी लेफ्टीनेन्ट की पदोन्नति हुई। उस वक्त हम एक पलाटून कमान्डर थे। इसके बाद वहां हमारा काम सिपाहियों का मनोबल बढ़ाना था। नेता जी दो जुलाई को टोकियो से सिंगापुर आये। 4,5 तारीख को उन्होंने अपनी सिविल वर्दी छोड़कर यूनिफार्म पहना। आई0 एन0 ए0 की परेड का सैलूट लिया। उस वक्त उन्होंने 'दिल्ली चलो' का नारा दिया तो इस नारे के साथ हम मणीपुर तक गये। हमारी फौज ने टेटभा और डेलिटमा कोहिमा क्षेत्र पर कब्जा कर लिया। माऊजन नामक इंडियन बार्डर वहाँ से सिर्फ 40 किलोमीटर की दूरी पर था। पी. एस. राठूरी साहब बटालियन कमान्डर थे। राठूरी साहब ने हमारे बटालियन से कहा, अभी आराम करो। कल सुबह हम उस पर हमला करेंगे। लेकिन हमारे जवानों में एक ने कहा कि हमें आराम नहीं चाहिये, हमें अभी – अभी हमला करना है। राठूरी साहब को हमला करना पड़ा। रातों रात के हमले से हमने माउडक पर अपना अधिकार कर लिया। उस वक्त का दृश्य देखने लायक था, जमीन पर लेटकर हम अपनी मातृभूमि को चूम रहे थे। हमारा तिरंगा झंडा लहरा रहा था, वहां राष्ट्रीय गीत गाया गया। यह राष्ट्रीय गीत नेता जी का राग है। 21 अक्टूबर 1943 को जब आजाद हिन्द सरकार बनी, तब नेता जी ने सोचा कि हमारा राष्ट्रीय गीत भी होना चाहिये। नेता जी ने गुरू रवीन्द्र नाथ टैगोर के जन गण मन अधिनायक को चुन लिया। उसे चुनने के बाद मेजर अबीद हसन ने चांद साहब को इसका हिन्दी अनुवाद करने को कहा। अबीद हसन साहब ने इसका अनुवाद किया, 'सब सुख चैन की वर्षा बरस' भारत भाग्य है जागा। इसी को राष्ट्रीय गीत स्वीकार किया गया। कैप्टन राम सिंह ने उस राष्ट्रीय गीत को धुन दिया, जो आज भारत का राष्ट्र गीत है।

मैं सितम्बर 1945 से फरवरी 1946 तक युद्धबंदी के रूप में जेल में रहा, पहले सिंगापुर में, बाद में बंगाल में। सिंगापुर में जिगर धस्सा करके एक जगह थी जो आजकल बंगला देश में है। पहले हमको वहां ले जाया गया और जब ट्रायल खतम हो गया तो छोड़ दिया गया।

15 अगस्त का दिन आजाद हिन्द फौज के हर एक सिपाही के लिये बहुत महत्वपूर्ण दिवस है। 15 अगस्त 1947 की आजादी मिली, जैसा कि नेता जी की भविष्य वाणी थी। लेकिन जिस किस्म की आजादी ''आजाद हिन्द फौज'' चाहती थी या नेता जी चाहते थे वैसी आजादी हमको नहीं मिली, जिससे हमको ऐसी कोई खुशी होने की वजह नहीं दिख रही। हम पूरा हिन्दुस्तान चाहते थे। हम नहीं चाहते थे कि पाकिस्तान बने। आजाद हिन्द फौज के मुसलमान अफसर भी नहीं चाहते थे कि हम पाकिस्तान बनायें। नेता जी कहते थे कि हिन्दुस्तान लेंगें, हमको पाकिस्तान नहीं चाहिये क्योंकि वह यह जानते थे कि यदि बंटवारा हो गया तो हमारे आगे समस्यायें बहुत खड़ी हो जायेंगी। इस ख्याल से नेता जी को जो आशंका थी, वही आजकल पूरी हो रही है कि चारों ओर समस्यायें ही समस्यायें हैं।

नेता जी ने किसी एक जन सभा में कहा था ''तुम मुझको खून दो मैं तुमको आजादी दूंगा।'' इस आजादी के लिये भूख प्यास के सिवा तुमको हम कुछ नहीं दे सकते, इसको बदलो, हम आजादी जरूर देंगे उन्होंने 1943 में कहा था। भारत के विद्यार्थियों और नौजवानों से मैं यह कहूँगा कि अगर उस भाव को फिर जिन्दा कर दें अर्थात एकता, विश्वास और बलिदान की भावना को वापस ले आये तो हमारी आजादी सुरक्षित रहेगी और हम अपने लक्ष्य पर पहुंच जायेंगे। मैं इतना जानता हूं और इतना कह सकता हूँ कि नेता जी हवाई दुर्घटना से नहीं मरे। जब हमने तय कर लिया कि हम अभी आत्म समर्पण करेंगे। हिरोशिमा नगर में बम गिरा। तब नेता जी ने सोचा कि अब हमारा यहां रहना ठीक नहीं है क्योंकि यहां जापानियों को हमें अलग करना पड़ेगा। नेता जी ने जापानियों से मांग की कि हमको रूस भेजने का प्रबन्ध किया जाय। इसलिये नेता जी सैगोन में काउन टेराऊची, जो उस कमान के इंचार्ज थे, मिले बोले, हमको मजबूरी है तो हमें पहुँचा दो। मजबूरी है तो किसी तरह मैं साइबेरिया होकर रूस पहुँच जाउंगा। यह सुनकर जापानी नेता ने उनको एक हवाई जहाज दिया और रवाना कर दिया। सत्यता यही है, इसके बाद दुर्घटना की कथा गढ़ी गई। मैं सिर्फ एक सवाल पूछना चाहता हूं कि इसका क्या सबूत है कि सिर्फ एक आदमी मरा ?

जर्मनी जाने से पहले उनका विचार एशिया में ही रहकर आन्दोलन चलाने का था। ब्रिटिश की तरफ से नेता जी से कहा कि तुम हमारे हो, तुम बचकर जर्मनी चले आओ। तभी जापान ने भी समर्पण कर दिया। अतः रूस जाने का विचार बदल गया। वह साइबेरिया होकर रूस जाकर वहाँ से आन्दोलन चलाना चाहते थे। लेकिन उनका वह सपना पूरा नहीं हो सका। वास्तव में 1942 में रासबिहारी बोस साहब ने आजाद हिन्द फौज बनायी थी, लेकिन वह उस वक्त चल नहीं पायी। जनरल मोहन सिंह और रास बिहारी बोस को जापान में मनचाही मदद नहीं मिल रही थी, जिसकी वजह से नेता जी को सक्रिय होना पड़ा। सबने सुभाष चन्द्र बोस को जर्मनी से बुलाया था ताकि पूर्व एशिया में संगठन पुनः किया जाय। उनके सामने यह प्रश्न आया कि जर्मनी से पूर्व एशिया में कैसे पहुंचे ? नेता जी ने कहा कि ऐसा मौका बार – बार नहीं आता। उन्होंने जर्मनी से मदद करने को कहा कि किसी तरह हमको पूर्व एशिया तक पहुँचाओ। जर्मनी के नेता उनकी बहुत कद्र करते थे। वह नेता जी को खतरे में नहीं डालना चाहते थे। नेता जी पनडुब्बी में आबिद हसन साहब को लेकर चले और 90 दिनों की समुद्री यात्राा के बाद पूर्व एशिया पहुंचे। वहां से वे टोकियो गये, जहां जनरल ने उनका स्वागत किया। फिर नेता जी सिंगापुर पधारे। 4 जुलाई को नेता जी ने टूटी हुई आजाद हिन्द फौज या आई0 एन0 ए0 का कार्य संम्भाला। यह संगठन जीवित हो उठा। इससे जुड़ना मेरे लिये गर्व की बात है।

कर्नल श्री अमरबहादुर सिंह



मेरा नाम कर्नल अमर बहादुर सिंह है। मैं ग्राम छिछवा भदोही जिला का रहने वाला हूं। पहले यह बनारस में था। अब यह अलग जिला बन गया है। जहां तक मेरी शिक्षा का प्रश्न है, मैंने गांव में कक्षा दो तक पढ़ा और फिर मुझे आगे पढ़ने के लिये भाई कलकत्ता ले गये थे। जहां पर मैंने अंग्रेजों की परेड देखी। बच्चे थे, देखने के बाद मेरे मन में ऐसे ही लालसा उठी कि हम फौज में जायेंगे और यही भावना लेकर हम घर लौट कर आये तो तीन चार कक्षा तक, मैं गांव से दो मील दूर एक स्कूल में पढ़ा। वहां पढ़ने के बाद, मैं पिताजी से विद्रोह करके अंग्रेजी स्कूल में पढ़ने गया कि मैं अंग्रेजी स्कूल में पढूंगा। मिर्जापुर में कक्षा 4 से 6 तक पढ़ने के बाद लावेट हाई स्कूल, ज्ञानपुर से कक्षा सात से आठ की परीक्षा उत्तीर्ण की। चूँकि मुझे फौज में जाना था और बलवन्त राजपूत कालेज, जो आगरा में है, में मिलेट्री ट्रेनिंग थी। उसमें घुड़सवारी और शूटिंग की व्यवस्था थी, तो इसी आधार पर मैंने कहा कि मैं आगरा में पढूंगा और वहीं से मैं आर्मी स्कूल में जाऊँगा। उसमें पिताजी ने रूकावट डाली, फिर भी मैं आगरा पढ़ने के लिये गया। वहां मैंने अपना इतिहास बनाया। इतिहास इस मायने में कि मैं बनारस का रहने वाला था। वहाँ की बोली, रहन–सहन, खाना, पीना सब अलग था, लेकिन वहां पढ़ने में मैंने पहले साल से ही रिकार्ड बनाना शुरू कर दिया। हाई स्कूल में मेरे बहुत अच्छे अंक थे और साथ ही साथ खेल में जैसे :– हाकी, फुटबाल, बास्केट बाल तीनों टीमों में, मैं आगे था। हाकी में, मैं कालेज का कैप्टन हुआ। हाकी बहुत बढ़िया खेलता था। विज्ञान और गणित का विद्यार्थी होने के नाते राजनीति और इतिहास से बहुत दूर था। इण्टरमीडिएट करने के बाद मैं आगरा कालेज में बी.एस.सी. करने लगा। उसी जगह आर्मी, फौज में एक वान्ट्स निकली थी तो ठाकुर विश्वास सिंह से जो इटावा के था, वह मेरे गुरू थे, मैंने पूछा मास्टर साहब मैं दरख्वास्त दे दूँ। उन्होंने कहा दे दो। जैसे तुमको यहां मरना वैसे वहां मरना और कोई जरूरी नहीं कि लड़ाई में मर ही जाओ। इस तरह हमने दरखास्त दे दिया। आगरा में मेरा इम्तहान हुआ और मैं पास हो गया। आखिर में जो शिमला में हुआ, वह भारत के मुख्य न्यायाधीश का था। वे बोर्ड के अध्यक्ष थे। वहां बोर्ड में 13 अंग्रेज बैठे थे। 719 लड़के सभी समुदाय से आये थे। उसमें से 42 को लिया जाना था, उसमें 18 स्टेट फोर्स के थे। मेरा नाम 719 वां था। मुझे उम्मीद नहीं थी कि मैं चुन लिया जाउंगा, लेकिन भाग्य ने साथ दिया और अधिकारी बन गया। सन् 41 में, दिल्ली में, मेरी पोस्टिंग राजपूताना रायफल्स फोर्स में हुई थी। फिर इसके बाद में हमारी पल्टन............। अहमद नगर में जाकर के, फिर वहां से दिसम्बर सन् 41 में, मैं लड़ाई के दौरान बाम्बे से लाया गया। पहले हम लोग ईरान के लिये चले थे। पाँच सौ मील अरब सागर में जाने के बाद पूरा कानवाय बिग्रेड जिसमें छब्बीस जहाज थे, जब सेल दक्षिण आ गया तो आदेश हुआ कि वहाँ से हिन्द महासागर होकर जावा सुमात्रा के बीच से बोकासुन्डा, आइलैण्ड, सिंगापुर और फिर सिंगापुर से सीधे मैदान में लड़ाई के लिये गये, वहाँ तो अंग्रेजों के लिये लड़े। हमने पठानों को कमाण्ड किया था, लड़ाया था जो फन्टियर बलोचीस्तान के पठान थे। जब हमारा बिग्रेड खत्म हो गया

तो आदेश हुआ कि स्टाफ और जनरल गार्ड उनके स्टाफ पर चले जायें। मैं उनके स्टाफ पर चला गया। जब लड़ाई पर मैं आया, वहाँ से हमारी गाड़ी छिन गयी। गाड़ी छिनने के बाद जब चायनीज (चीनी) से एक प्याला चाय मांगा तो उसने मना कर दिया। उसने कहा, आप गुलाम हैं, गुलाम देश के रहने वाले हैं और आप किराये की बन्दूक लेकर अंग्रेजों के लिए सबको गुलाम बनाने फिरते हैं। मैं गुस्से में सचमुच उसको मारने जा रहा था, लेकिन जब उसने कहा कि जब अपने देश के लिए लड़ते हो तो खूब चाय पिलाता हूँ। मैंने उस पर हाथ नहीं उठाया और बाद में वहाँ से सिंगापुर आ गया। हमारी आँख में यहाँ कारतूस का एक टुकड़ा घुस गया था, जिसे सिंगापुर अस्पताल में निकाल दिया था और निकालने के बाद यहाँ अंग्रेजों की हार हुई। मैं वहाँ के जनरल स्टाफ के साथ, यह कह कर आया था कि जितने हिन्दुस्तानी हैं, उनको, अफसरों, आदमियों को छोड़ दो। अंग्रेजों को जितना निकाल सकते हो, निकाल दो। 15 तारीख को हार हो गई, आत्म समर्पण कर दिया। आत्म समर्पण करने के बाद सत्रह तारीख को हम लोगों को आदेश हुआ कि जो जहाँ–जहाँ थे, वह सुरैर पार्क में चायनीज स्कूल के सामने इकट्ठा हों। सत्रह तारीख की सुबह हम सब लोग इकट्ठा हुये। हमारी पलटन में ग्यारह सौ आदमी थे। उसमें चार सौ बच्चे थे और बाकी लड़ाई में मारे गये थे। वहाँ पर ''कर्नल हण्ट'' था। वह जापानी कमाण्डर था। उसको हैण्ड ओवर किया कि आज से जापानी अफसर जो हुकूमत देंगे वही मानेंगे। यह कहकर वहाँ से चला गया। जापानी मेजर जो था, उसने कहा कि हम कैप्टन मोहन सिंह को जो हिन्दुस्तानी है, पूरी सेवा को हैण्ड ओवर कर रहे हैं। आज से कैप्टन मोहन सिंह, जनरल मोहन सिंह कहे जायेंगे। फिर वहाँ पर 'सारे जहाँ से अच्छा हिन्दुस्ताँ हमारा' गाना अर्थात् राष्ट्रीय गीत हुआ। गाना होने के बाद मोहन सिंह खड़े होकर कहने लगे कि हम एक आजाद हिन्द फौज बनाना चाहते हैं। जिसमें आप सब लोग अपना सहयोग देंगे कि नहीं देंगे। सबने हाथ उठाया तो मैंने भी हाथ उठा दिया। भाई अगर आजादी की लड़ाई लड़ रहे हैं तो उसमें हम सब सहयोग देंगे। उन्होंने कहा कि जापानी सरकार हमको हर तरह की मदद देगी। उसके बाद सब लोग अलग–अलग कैम्पों में चले गये। वहाँ कुछ लेना देना तो था नहीं, वहाँ तो यह था कि आप स्वयंसेवी हैं तो देश के लिये हैं, इसलिए जो जहाँ मिल जाये, वहीं रहिये, वहीं खाइये, वैसे ही रहिये। तो निशुभ कैम्प में थे। वहाँ 6–6 अफसर एक साथ रहते थे। मैं बताऊँ, राजनीति में मुझको रा भी नहीं आता। पहली दफा मैंने प्रजातंत्र (डेमोक्रेसी) पूछा, तो वहाँ लोग हँसने लगे कि प्रजातन्त्र नहीं जानते हो? मैंने कहा, नहीं जानता हूँ। पूछा समाजवाद? मैंने कहा नहीं जानता हूँ। भाई जिस चीज से मैं जुड़ा नहीं हूँ, संबद्ध नहीं हूँ तो नहीं जानता। त्रिलोक करके बाम्बे का एक साथी था। वह इतिहास और राजनीति का विद्यार्थी रह चुका था। वह जानता था तो वह बताने लगा, समझाने लगा, प्रजातन्त्र क्या है? समाजवाद क्या है? सम्प्रदायवाद क्या है? बाद में मैंने मोहन सिंह की सभा में कहा कि चीनी लोगों ने एक प्याला चाय नहीं दिया मुझको। बहुत तंग किया गया। जेल में अलग बन्द कर दिया गया और हर तरह का शोषण किया गया। फिर शाहनवाज ने आकर पूछा। ए.बी. सिंह कहाँ गया। उनको जब पता चला तो मेरे पास आकर कहते हैं, तुम बिना मौत के मर रहे हो। विटामिन सी की कमी के कारण मुझे स्कर्वी हो गया। खाना पीना मिलता नहीं था, अकेले दिन भर रामायण पढ़ते थे। वहाँ न कोई बोली समझने वाला था, न ही बोलने वाला कोई साथी था। तो उन्होंने कहा, तुम हाँ कर दो, लड़ाई लड़ना है, मौका आयेगा। कोई जरूरी नहीं कि तुम लड़ो। तुम बेकार में यहाँ क्यों कर रहे हो। तो मैंने हाँ कर

दी। उसके बाद आई.आई.एन.ए. एककोला रामपुर कैम्प में हम रहे। उसके बाद यहाँ सिंगापुर लाये गये। तब तक आई.आई.एन.ए. मोहन सिंह ने जो कि आफ सेक्टर में बहादुर ग्रुप था, जो हमारा सतर्क दल था, उसको लगा दिया। जापानियों ने बगैर इनकी सूचना के मोहन सिंह को अलग बन्द कर दिया, फिर नेताजी को जल्दी ले आया गया। नेता जी के आने पर, मैं नेता जी से इतना प्रभावित हुआ कि आज तक मैं अपने आप को नहीं बदल सका। कहने का तात्पर्य 12 फरवरी सन् 45 की रात, मैंने उनके साथ खाना खाया और फिर लड़ाई के मैदान में, जनरल शाह नवाज के साथ गया था। 550 मील पैदल इन्हीं राहों पर चला। 20,000 आदमी हमारे थे, उसमें डिवीजन के बहुत सारे मर गये। लड़ाई में, कोला पहाड़ी से लड़ाई के समय नेता जी की बहादुरी हमारे सामने आयी। नेता जी निरीक्षण करने गये तो सहगल की एक बटालियन थी, वहाँ वह गये तो वहाँ से पीछे नहीं हटे। उनके पीछे न हटने की वजह जो थी, वह यह कि आप सर्वोच्च कमाण्डर हैं, आप यहाँ रह जायेंगे तो वहाँ क्या होगा, नतीजा यह हुआ कि अंग्रेजों ने रास्ता काट दिया, तो 13–14 मील पीछे जंगल के रास्ते से गाड़ी निकाली गयी। इनको बैलगाड़ी में, कम्बल में लपेट कर वहाँ से निकाला गया कि आप नहीं रहेंगे तो क्या होगा। हम लोगों को पता नहीं चलेगा कि कौन कहाँ है? क्या है? क्या हो रहा है? कमाण्डर आपके नियन्त्रण में है, हुकूम आपका चलता है। वहाँ से नेता जी को निकाला गया। यह रहा कि पैसा तो बरसता था, चार–चार लाख डालर वही लोग ले लेते थे। माँ, बहने, बच्चे जो अपनी अंगूठियाँ गहने थे। वहीं निकाल कर रख देते थे। नेता जी का बोलने का तरीका, रहने का तरीका था। जिस तरह से उन्होंने आजादी के इस संघर्ष में हिस्सा लिया। उतना हम किसी नेता को नहीं मानते। हमारे देश में इतना जरूर है कि जागृति पैदा हुई।

प्रश्न – अच्छा कर्नल साहब, मैं आपसे यह जानना चाहता हूँ कि जब आप सेना के सम्पर्क में आये उस समय आपकी आयु क्या थी?

उत्तर – उस समय मैं करीब चौबीस वर्ष का था।

प्रश्न – चौबीस वर्ष? और नेता जी सुभाष चन्द्र बोस के सम्पर्क में आप किस समय आये?

उत्तर – वह तो सन् 43 में आये थे और 5 जुलाई को मैंने पहली बार उनके दर्शन किये और पहली बार उनका भाषण सुना। उस दिन जो भीड़ थी, वह आमतौर पर देखने को नहीं मिलती है। वहाँ जो रहने वाले हिन्दुस्तानी थे, सिंगापुर के या और कहीं के, जो चायनीज मलायन स्थानीय थे, उनकी बोली नहीं समझ पाये। उन्होंने कहा हम अंग्रेजी में चाहते हैं। जैसे कोरस होता है न, वैसे ही कि हम अंग्रेजी में चाहते हैं। तो नेता जी अंग्रेजी में बोले, मैं तुम्हे बताता हूँ। उनका बोलने का जो तरीका था कि जितने वाक्य उन्होंने कहे, वह इतना बढ़िया तरीके से समझाये कि जैसे चुम्बक होता है कि अपनी ओर खींच लेता है, ऐसे ही हम खिंच गये थे। उसके बाद जो मैंने बताया कि रात दो बजे कर्नल नागर के सिलसिले में इन्टरव्यू मांगा था। फिर 4 बजे सुबह बुलाया। उन्होंने कहा कि भाई तुम क्यों जाना चाहते हो? मैंने कहा साहब मैं रंगून देखना चाहता हूँ। अपना सर्वोच्च कमाण्ड मुख्यालय रंगून में है। तो उन्होंने पूछा क्यूँ? अब अपनी मानसिकता खुलकर सामने आयी कि हम नागर को नहीं पसन्द करते हैं, मनोबल कम करने लगे हैं। उन्होंने कहा अच्छा, मैं जा रहा हूँ। तो गये, वहाँ से आदेश आया, रंगून स्थानान्तरण। बैंकाक तक रेल से यात्रा, तो ट्रेन से बैंकाक जाने में आठ दिन लगे। वहाँ पहुँचने पर नेता जी के हवाई जहाज से मुझे बैंकाक से रंगून ले जाया गया। आप जैसे हमारे चार साथी थे। मदन, सर्वर, डे, और

रियाज। मदन सिन्ध में क्वेटा का रहने वाला था, वह हिन्दू था और हमसे बहुत दोस्ती थी। वह चारों भाग गये, जनरल हेड क्वार्टर से जब वहाँ कोना एरिया में थे। इससे नेताजी को समस्या हुई और बहुत दुख हुआ तो नेताजी ने जनरल शाह नवाज से कहा कि तुम जाकर अपना अफसर चुनो जो कि तुम्हारे साथ जाए, नहीं, तो आजाद–हिन्द–फौज की बदनामी होती है और मनोबल कम होता है। चूंकि वह पंजाब के रहने वाले थे। अतः जितने पंजाबी रहते थे उनके पास गये। सब ना कहते गये। मेरे पास रात दो बजे आये। मेरा अर्दली अफजल एक मुसलमान था, उसने मुझको जगाया कि जनरल शाह नवाज आये हैं, आपको बुला रहे हैं। मैंने कहा, कि क्यों, कहाँ? उसने कहा, अभी मेजर तज्जुमुल हुसैन जो प्रिंसिपल थे, वहाँ ओ.टी.एस. (आफिसर ट्रेनिंग स्कूल) में पढ़ाते थे, उनसे बात कर रहे हैं और आपको बुलाया है। मैं वहाँ गया, तो वहाँ अंधेरा था, वहाँ मैं टार्च की रोशनी में बैठ गया। दो बज चुके थे। उन्होंने कहा, ए.बी.। मैंने कहा, सर, तो कहने लगे, मुझे नेता जी ने भेजा है। मैंने कहा, क्यों? तो कहने लगे, तुमको लड़ाई में चलना है। मैंने कहा, सर्वोच्च कमाण्डर का आदेश हुआ तो मैं लड़ाई में नहीं जाऊँगा। उन्होंने कहा, कि ये बात नहीं है। उन्होंने मदन का नाम लिया कि मदन तुम्हारा दोस्त है, तो मैंने कहा, दोस्ती अलग है, और हमारा जो चरित्र है तो हमारे मुंह से निकल गया कि मैं क्षत्रिय का बेटा हूँ। मैं देना जानता हूँ, मैं उसको बिगाड़ना नहीं जानता हूँ। अगर नेता जी सर्वोच्च कमाण्डर का हुकुम होगा, तो मैं जाऊँगा, वर्ना नहीं। इसके आगे मैं क्या कहूँ। तो वह चले गये। उन्होंने नेता जी से कह दिया। नेता जी की कार सुबह पहले हमारे लिए आयी। कार मुझको वहाँ ले गयी, दिन भर उनके यहाँ रहे, तो उन्होंने कहा, तुम समान ठीक करने आये हो। मैंने कहा, मुसलमान अर्दली अफजल है, वह ठीक कर देगा, कपड़े–वपड़े ले जाते हैं, बाकी क्या ले जाना है। एक लड़ाई लड़ चुका हूँ, देख चुका हूँ। क्या सामान होता है, क्या नहीं होता है। उसी दिन 12 फरवरी की रात 12 बजे वहाँ से खाना वाना खिलाकर विदा किया था।

एक दिन कलकत्ता में टाइम्स आफ इण्डिया में यह समाचार प्रकाशित हुआ। जिसमें लिखा था कि सुभाष चन्द्र बोस का कोई पता नहीं चल रहा, लगता है, उन्होंने आत्महत्या कर ली। उसने पढ़ा, मैंने पहले ही पढ़ लिया था। उसने कहा, क्या तुम सुभाष चन्द्र बोस के बारे में जानते हो? मैंने कहा, मैं उनके बारे में कुछ नहीं जानता, उन्होंने जरूर आत्महत्या कर लिया होगा। नेता जी जब खाना खा रहे थे, मैंने नेता जी से यह प्रश्न पूछ लिया, तो वह हंसे, मैंने कहा, सर, आप किस रास्ते हिन्दुस्तान से निकल कर आये थे? उन्होंने मुझसे कहा, यह जानकर क्या करोगे, हो सकता है मुझे हिन्दुस्तान जाने के लिए फिर वही रास्ता इस्तेमाल करना पड़े। इसलिये हवाई दुर्घटना की बात, जो है, जिस दिन हुई, मैंने कभी नहीं माना। मैंने कर्नल हबीब से पूछा (जो कि उनके साथ गये थे) कि क्या हुआ? तो हाथ यूँ करके कहते........। यह देखकर आँखों से आँसू निकलते। उन्होंने कभी नहीं कहा कि दुर्घटना हुयी कि नहीं हुयी।

प्रश्न – मैं आपसे एक सवाल पूछना चाहता हूँ कि आपने यह बड़ा अच्छा कहा कि कुछ लोग कहते हैं कि नेता जी हवाई दुर्घटना में मारे गये, कुछ लोग कहते हैं कि नेता जी छुप गये, कुछ लोग कह रहे हैं कि नेता जी अभी जिन्दा हैं। इस बारे में आप अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त कीजिये?

उत्तर – नहीं ऐसा है, जहाँ तक उनके जीवित न होने का सवाल है। 12 फरवरी सन् 45 में मुझे विदा कर दिया, उसके बाद तो उन्हें मैंने देखा नहीं। मैं इतना बतला दूँ कि इतना बहादुर आदमी छिप

नहीं सकता। दूसरा चीज यह है कि वह हवाई दुर्घटना में नहीं मरे, मार दिये गये है, या मर गये हैं या किसी और भावना से प्रेरित होकर सब त्याग दिया। आप समझ रहे हैं कि नहीं.....। लेकिन हवाई दुर्घटना की बात मैं कभी नहीं मान सकता क्योंकि जब मुझसे कहते हैं कि हो सकता है वही रास्ता हिन्दुस्तान में जाने के लिये मुझे फिर इस्तेमाल करना पड़े, तो फैजाबाद में जो हुआ, एक बाबा जला दिये गये थे, तो मैं उसकी जांच करने के लिये गया था, उस जांच में टण्डन की लिखी हुई, एक किताब देखी थी, जिसमें जाने के कितने रास्ते बने हुये हैं, उसको देखकर तो मैं कह सकता हूँ कि सिवाय एक बुद्धिमान आदमी ही...........। वही हमारी टिप्पणी होगी। मैदानों में जहाँ लड़ाई लड़ी जा रही थी, उसके आधार पर उन्होंने कह दिया था कि हार ही हमारी विजय है, तो कहने का मतलब यह था कि उनकी महानता से किसी की तुलना नहीं की जा सकती। यह तो देश का दुर्भाग्य है कि वह जो चाहते थे, वह आपके देश को नहीं मिला। आपको, शायद इतिहास भी नहीं मालूम है कि हमारी लड़ाई कैसे हुयी, किस तरह से हुयी और कहाँ–कहाँ कितने आदमी मरे। अगर आप किसी से पूछें तो हो सकता है शायद कुछ इतिहास से सम्बन्धित हो या हमसे सम्बन्धित हो या आई.एन.ए. से सम्बन्धित हो, लेकिन कोई देश यह नहीं जानता है कि हिन्दुस्तान में आजादी आई तो कैसे आई।

हमको यह है, जिस दिन लाल किले से छूटे थे तो गांधी जी से मिलने गये थे। जब हम अस्पताल में बीमार थे, गांधी जी हमको देखने गये थे, तो मैंने कहा, हम भी चलते हैं, मिलेंगे, मैं था कर्नल।

प्रश्न – गांधी जी अस्तपाल किस वर्ष में देखने गये थे?

उत्तर – यह 45, नहीं 46 की फरवरी का महीना था। सरदार पटेल और यह दोनों अंधेरे में छिप कर गये थे कि कहीं भीड़ भाड़ में वो न हो। गांधी जी गये थे, मैं था, जनरल अप्पन थे। कई अफसरों में पाँच छः अफसर बीमार थे। वहाँ कैन्टूनमेन्ट दिल्ली अस्पताल में, जब मैं उनसे मिला तो गांधी जी ने मुझसे यह पूछा कि कहाँ के रहने वाले हो? मैंने कहा, मैं इलाहाबाद के पास का रहने वाला हूँ। उन्होंने पूछा, लड़ाई में, तो हमने हाँ कर दी, कहा, लड़े, 500 मील पैदल चले और अब यह लड़ाई गन की नहीं रही। जब अहिंसावादी बन करके जाकर देश में लड़े अंग्रेजों ने वारंट दिया था और 30 रुपया देकर विदा कर दिया था। जाओ घर, तो चले गये थे। अब उसके बाद नेहरू जी के सम्पर्क में आये थे। उन्होंने कोई आन्दोलन छेड़ दिया। मैं बताऊँ, आपको कि इसी में हमारा जोश था, न राशन था, न गोला–बारूद, हथियार की सप्लाई थी। बस हिम्मत थी। जब थक जाते थे तो और कुछ नहीं बस–

'कदम–कदम बढ़ाये जा,
खुशी के गीत गाये जा,
ये जिन्दगी है कौम की,
कौम पर लुटाये जा'

यही सब गाते थे और मस्त रहते थे। जिस दिन हम रंगून और पेरू के बीच में पकड़े गये, उसके एक दिन पहले शाहनवाज ने कहा ए.बी.मुझे पचास आदमी दे दो कि हम रंगून रोड काट कर बैंकाक थाईलैण्ड निकल जायें। नेता जी के बाबत कुछ खबर नहीं थी और बर्मीज जो हमारे गाइड थे उन्होंने भ्रमित करके अंग्रेजों की सेना के बीच में ले जाकर बैठा दिया। शाहनवाज और कर्नल ढिल्लन और

दो अफसर मेहरदास और गंगानाथन मद्रासी डाक्टर थे, ये तो जिस दिन आदमी लेकर निकले, उसी दिन गिरोह में पकड़े गये और हमको कुछ पता नहीं।

प्रश्न – ये कौन सा क्या 45 का महीना था?

उत्तर – हाँ–हाँ 45 की मई का महीना था। 13 मई को वह मुझसे अलग हुये थे। 15 मई को हम पकड़े गये थे तो वहाँ 15 मई को जैसे होता है न कि आज हम कहीं नहीं जायेंगे। पेरू के जंगलों में खाने को इतना कुछ नहीं था। पेड़ों पर वहाँ के आदिवासियों ने घर बनाकर रखे थे। कभी–कभी इतना चावल मिल गया, इतना धान मिल गया, धान लेकर उबाल कर चूस लेते थे। कहीं गुड़–वुड़ मिल गया हो या जो यह खजूर का गुड़ बनता है, वह मिल गया तो मिल गया नहीं तो चाय के नाम पर जैसे अड़ूसे की पत्ती होती है। इस तरह की पत्ती होती थी। सिपाही जानते थे, तोड़कर झोले में रखते, चाय बनाओ तो क्या, पानी उबाला, उसी में थोड़ी पत्ती डाली, थोड़ा रंग हो गया, वही पी लिया। पन्द्रह की सुबह बर्मीज गाइड से कहा कि हम लोगों को पेरू रूट के नजदीक ले चलो ताकि हम रात में इसको पार कर लें।

प्रश्न – पेरू पहुँचने के बाद आपका उद्देश्य क्या था?

उत्तर – उद्देश्य यह था कि थाईलैण्ड पहुँच जायेंगे और बर्मा, पेरू और रंगून रोड ले लिया। उन्होंने लाइन काट दिया। उधर जंगल था। पेरू रोड काटकर हम लोग बैंकाक, थाईलैण्ड की ओर निकल जाते, तब तक हम लोगों को यह खबर आ चुकी थी कि नेता जी की पार्टी बैंकाक जा चुकी है। हमने कहा हम लोग भी थाईलैण्ड जायेंगे। थाईलैण्ड निकलने के बजाय तो ऐसी जगह बैठा दिया, तीनों तरफ अंग्रेजों के टैंकर लगे थे, मेजर जागीर सिंह, हमारे सेकेण्ड कमाण्डर थे, वह पीछे रह गये थे। तो मैंने कहा, जागीर सिंह को बुलाओ। शाहनवाज के साथ 700 के करीब आदमी रह गये थे तो क्या कहते हैं कि हृदय विदारक दृश्य सामने आया। हम यहाँ बैठे बांस के जंगल में। हमारा मुसलमान अर्दली था, मैंने उससे चाय बनाने को कहा तो उसे कहीं गड्ढे में गंदा पानी दिखा, तो उसने उसे लेकर पानी गरम करने के लिये रख दिया। जागीर सिंह को जब एक घण्टा हो गया और वह नहीं आया, तो मुझे लगा कहीं कुछ गड़बड़ है। फिर डेढ़ घन्टे के बाद क्या देखता हूँ कि जागीर सिंह सामने से आ रहे हैं। हमने कहा, अरे जागीर तुम? वह हा–हा करके हँसा, तो हमने कहा क्या हो गया? उसने कहा, हम तो घेरे में हैं, अगर आप लोग मरना चाहते हैं तब तो आगे बढ़ें नहीं तो हथियार डाल दीजिए। मुझसे जब बात हो रही थी कि अब क्या होगा, मैंने कहा कि शाहनवाज ने कहा था कि अगर आप घेरे में आते हैं तो लड़ाई लड़ने से फायदा नहीं है, अब हम लड़ेंगे तो देश में जाकर, अगर कुछ होगा तो होगा, यह कहकर चले गये। हमको आदेश यही है। जब बात कर रहे थे तो बात आग की तरह फैल गयी कि यह तो आत्म समर्पण कर रहे हैं तो सब आदमियों में आपस में फुसफुसाहट शुरु हो गयी कि हम आत्महत्या कर लेंगे। समर्पण नहीं करेंगे। इस झण्डे के नीचे से गुलामी के झण्डे के नीचे नहीं जायेंगे। उदाहरण के रूप में एक मद्रासी, एक मुसलमान, एक जाट तीनों ने अपने को गोली मार दी। गोली लगते ही दो तो मर गये, तीसरे को जो गोली लगी थी। वह यहाँ से फाड़ कर निकल गयी थी। वो मरा नहीं था, तड़प रहा था। गोली की आवाज सुनकर मैं चिल्लाया, क्या है? उन्होंने गोली चलाना शुरु कर दिया। जब जगवीर सिंह यहाँ पहुँचे तो उन्होंने गोली चलाना शुरु कर दिया, तो हमने कहा क्या हुआ। तब तक मैंने कहा, सबको बुलाओ, सबको इकट्ठा करो। मेरी आँख से आँसू निकलने लगे।

मैंने कहा, तुम बताओ, तुम इतने बहादुर हो अब तक अपनी तकलीफें बर्दाश्त करते रहे, लड़ते रहे, क्या कारण है, जो इस तरह से करना शुरु कर दिया? वह बोले जब हम इतना लड़े हैं तो इस झण्डे के नीचे से गुलामी के झण्डे के नीचे नहीं जायेंगे। हम आत्महत्या कर लेंगे। मेरे मुँह से निकला, तुम बहादुर नहीं हो, तुम बहुत बुजदिल हो। अपने आपको मार करके आत्महत्या करना मरने का सबसे आसान तरीका है। देश में जाओगे तो अंग्रेजी–फांसी का फंदा तुम्हारा इंतजार कर रहा है। इस डर के मारे तुम यह करना चाहते हो। ये बहुत बुजदिली है। इतनी बड़ी बुजदिली कि किसी को बर्दाश्त नहीं होगी, कम से कम हम तो नहीं बर्दाश्त कर सकते। तो मेरी आँख से आँसू निकलते ही सब सिपाही सन्न हो गये। उन्होंने कहा नहीं, अब नहीं करेंगे तो जो नहीं मरा था, उसको फिर गोली मारी गयी और तीनों को वहीं गाड़ा गया। दूसरे दिन सुबह अंग्रेज आये और आकर हमको और जगवीर सिंह को तो गाड़ी में, बाकी हमारे सिपाहियों को अलग कर दिया। हमको पेरू ले गये, पेरू पहुँचे तो, देखा जनरल शाहनवाज उसी बंगले में थे, जहाँ हम पहुँच रहे थे। उन्होंने कहा मैं तो परसों ही पकड़ लिया गया था। मैं तो घेरे में डाल दिया गया था। कहने का मतलब ऐसे हालात थे कि आदमी की भावना देखिये, न खाना है, न कपड़ा है, कोई चीज नहीं। फिर एक मुसलमान की भावना......मैं अर्दली की बात बता रहा हूँ। जनरल शाह नवाज का अर्दली लड़ाई में फ्रन्ट पर मारा गया तो अफजल जो हमारा अर्दली था, उससे कहा हमारे साथ आ जाओ, उसने साफ मना कर दिया। मैं साहब को नहीं छोडूंगा। आपकी सेवा कर दूंगा, लेकिन उनको नहीं छोडूंगा। जो जनरल हमारा कमाण्डर हो वही सर्वोच्च कमाण्डर। आप हुकुम दे रहे हैं कि हमारे साथ आ जाये, वह एक मुसलमान के लिये...........। तो मुझे जब पता लगा तो मैंने कहा तुम बताओ कि तुम क्यों नहीं गये। पहले तो वह हंसा, मैंने कहा तुम बताओ क्यों नहीं गये तो गम्भीर होकर उसने मुझसे कहा कि जब कदम–कदम पर मौत है, मैं तेरे को छोड़ दूंगा तो मेरा खुदा क्या कहेगा। मैंने कहा उस आदमी की भावना देखिये कि कहाँ हिन्दू था, कहाँ मुसलमान, कहाँ धर्म था, कहाँ जात–पात, कहीं कुछ नहीं। हममें जो है, वह भावना नहीं थी। सब नेता जी की देन थी। जिसे देश के नाम पर मरना कहते हैं। जो हर कोई पंसद नहीं करता है। लड़ाई में गोले चल रहे थे। लगेंगे तो मरोगे ही मरोगे, लेकिन इस तरह की मौत जो है कि देश के नाम पर बिना खाये, बिना पीये, जब न ही सहारा है, न ही कुछ, और न ही भविष्य कि आप जायेंगे तो क्या मिलेगा।

प्रश्न – आई.एन.ए. में स्त्रियों की भूमिका क्या थी?

उत्तर – स्त्रियों में कर्ण लक्ष्मी जो थी, उन्हीं को झांसी की रानी रेजीमेण्ट बनाया गया था। सब की सब जो थीं, बहुत सारी मलाया की रहने वाली थीं। ये रंगून तक आयीं थी और रंगून में लड़ाई बहुत दूर हो रही थी और बहुत विकट लड़ाई थी। लेकिन इन्होंने अपनी और सेवायें जो थीं ....उनमें भावना लगी कि देश के लिये हम भी कुछ कर सकते हैं। दूसरा था कि अस्पताल में मरीज थे, बीमार थे। उनकी सेवा में सब कुछ दिया और पैदल कहाँ से कहाँ चलकर बैंकाक के लिये...........। नेता जी ने कहा, मैं इनको नहीं छोडूंगा। जो रानी झांसी रेजीमेण्ट थी, मैं इनको नहीं छोडूंगा। कोई इनका अपमान बेइज्जती हो गया, तो बहुत बुरा होगा। इसलिये मैं इनके साथ जाऊँगा तो अपनी पीठ पर अपना सामान लाद करके जैसे वो चले, वैसे वो चले। जब तक उनको साधन नहीं मिला। रास्ते में ट्रान्सपोर्ट नहीं मिला और बाद में हर एक को मलाया पहुँच करके उनको घरों में सौंप दिया। कहने का मतलब यह था जो औरते थीं, उनमें भी वही जोश था। रंगून में एक करोड़पति के संतान नहीं थी।

जब नेता जी वहाँ गये तो अपने आप ही उन्होंने सुन लिया तो पूरी जितनी दो या तीन करोड़ की उनकी सम्पत्ति थी, सब लेकर के नेता जी के पास पहुँचे। वह अपनी वर्दी में, बीबी झांसी की रानी रेजीमेण्ट की वर्दी में कि हमको रानी झांसी रेजीमेण्ट कर दीजिये। आप हमसे सब ले लीजिये। अपने देश की आजादी के लिये हम सब दे रहे हैं। यह सिर्फ नेता जी की भावना देखिये कि आप अलग पूजा करो, मस्जिद में जाओ, नमाज पढ़ो, नेता जी को कोई मतलब नहीं था। कभी उन्होंने धर्म का नाम लिया ही नहीं, न जात न पात, कोई धर्म नहीं, कोई मतलब नहीं।

प्रश्न – सिंह साहब एक बात और बतायें, जब नेता जी वहाँ से चले गये तो आजाद हिन्द फौज की गतिविधियां कैसे चलती रहीं। अगर चलती रहीं तो कब तक चलती रहीं। यहाँ से आजाद हिन्द फौज का नेतृत्व किसने संभाला?

उत्तर – यहाँ रंगून में या बर्मा में?

प्रश्न – नहीं ये जो किवदन्ती है जो उनका हवाई जहाज दुर्घटना ग्रस्त हो गया, उसके बाद इसका नेतृत्व किसने संभाला यानि आजाद हिन्द फौज की गतिविधियां कैसे चलती रहीं?

उत्तर – नहीं, उसके बाद सेकेन्ड जनरल भोसले थे। मतलब वहीं इन्चार्ज थे और बाकी सब अलग थे। जैसे जनरल कमानी, शाह नवाज और जिया नागर थे, सबकी अलग–अलग टुकड़ियां थीं। लेकिन कमाण्ड जनरल भोसले के पास थी।

प्रश्न – अच्छा जनरल भोसले। अच्छा एक चीज आप बतायेंगे कि नेता जी यहाँ से चले गये तो आपके संगठन अर्थात् आजाद हिन्द फौज से, किसी से उनका सम्पर्क हुआ कि नहीं हुआ? जब नेता जी यहाँ से चले गये तो उसके बाद की जानकारी है? कहाँ गये, कैसे गये किसी को कोई सूचना मिली कि नहीं मिली?

उत्तर – नहीं–नहीं, इतना है कि 16 तारीख को वहाँ सिंगापुर से जनरल कमानी थे। वहाँ उनको चार्ज दे दिया था कि तुम यहाँ कन्ट्रोल करोगे और उसके बाद वहाँ से सुबह बैंकाक गये, बैंकाक से हनोई गये लेकिन कहना यह है कि वहीं हनोई से वो गायब हुये और कहा ये जाता है कि खुद जापानी जनरल आकर के नेता जी से मिले और उनको अपनी हवाई जहाज में लेकर उनको मनचूरिया छोड़ने के लिये ले गये। उसके बाद यहाँ ....तभी तो 18 को क्या 23 तारीख को उन्होंने कहा नेता जी हवाई दुर्घटना में मर गये। जो 5 दिन का अन्तराल था, वह इसलिये कि दिन में उनको मनचूरिया पहुँचा दें।

प्रश्न – यही मैं जानना चाहता था। 15 अगस्त 1947 को भारत आजाद हुआ। आपको कैसा अनुभव हुआ?

उत्तर – उसमें हिस्सा नहीं लिया।

प्रश्न – बहुत सही?

उत्तर – इसलिये नहीं कि जिस आजादी के लिये हम लड़े कि हम पाकिस्तान के विद्रोही हैं और आज भी हम पाकिस्तान के विद्रोही हैं। पहले बताइये मुसलमान कहाँ से आये। हमीं आप मुसलमान हैं। अगर हम अपना इतिहास कहें, तो सुनेगें, कि किस रईस खानदान के हैं, राजा ने एक मुसलमान लड़की से शादी कर लिया था। राज माता ने कहा तुम भाग जाओ नहीं तुम भी ऐसे करोगे। हम सब

छोटे की संतान हैं, वे जो मुसलमान हैं वह कहाँ से आये, मैं बता दूँ कि मैं नवाब छतारी से मिला, उनसे मैं मिलने गया कि आप कौन हैं? उन्होंने कहा क्षत्रिय हैं, तो हमने कहा, आप फिर हमारे यहाँ नहीं आते हैं। हम भी क्षत्रिय हैं, कोई शादी ब्याह करेगा? हमारी लड़की तो ले लोगे, पर कोई अपनी लड़की नहीं देगा। इसलिये तैयार हो जाओ, तो हम आपके साथ हैं। कहने का मतलब यह था कि वह हालात थे। अरे शाहनवाज का मैं कहूँ कि यह ठाकुर है। कर्नल हबीब मुझसे लड़ते थे कि तुम ठाकुर नहीं हो। उन्होंने ब्राह्मण को ला करके, अपने सहारनपुर के फार्म में बसा रखा था। वह ब्राह्मणसात फेरे उनका करता था, फिर निकाह पढ़ता था, तब जो यह भावना थी अब कहाँ। हमारे देश में पाकिस्तान न होता तो आज हम कहाँ के कहाँ होते। शाहनवाज का कहना था कि पता नहीं किस गोली में हम लोगों की मौत है, कहाँ मौत होगी, तो मैंने कहा मैं मरुँगा तो गंगा के किनारे, क्योंकि गंगा के किनारे मेरा जन्म स्थान है। मेरा दाह संस्कार गंगा के किनारे ही होगा। मतलब यह कि ये हंसी की बात थी......उसके बाद जो है जैसी भावना होती है, न हम सोचते हैं कि पाकिस्तान नहीं बनेगा सब मेरे भाई है। सब मेरे साथ होंगे, हम एक साथ रहेंगे। लेकिन आज माफ कीजियेगा......

प्रश्न – अन्त में समाज को आप क्या संदेश देना चाहेंगे?

उत्तर – कि जब तक हम साम्प्रदायिक और अल्पसंख्यक शब्द 'शब्द कोष' से निकाल नहीं देंगे, तब तक हम सुधर नहीं पायेंगे। ये मैंने एक जनसभा में कहा था कि साम्प्रदायिक कहकर हम मुसलमान को अपने समाज से अलग करना शुरु कर देते हैं। जब साम्प्रदायिक कहते हैं, अल्पसंख्यक कहते हैं तब मुसलमान की तरफ दिमाग जाता है, बाकी किसी की तरफ नहीं जाता। यह मैंने एक जनसभा में नेता जी की मूर्ति के सामने कहा था (विक्रमादित्य पाण्डेय अध्यक्षता कर रहे थे) कि जब साम्प्रदायिक कहते हैं तो पतली तलवार से काटकर के समाज से अलग कर देते हैं। देश से अलग कर देते हैं। उसको क्यों कहते हैं। आप छोड़ दीजिये। अभी तो हमारा यही कहना है कि साम्प्रदायिक और अल्पसंख्यक दोनों शब्द निकाल दीजिये और कहना बन्द कर दीजिये। आप देखिये जात–पात होते हुए भी आप आज नहीं तो कल एक होंगे, क्योंकि समय बहुत बीत गया है। मैंने विक्रमादित्य पाण्डेय से यही कहा था कि आज मैं इनका नाम विक्रमादित्य पाण्डेय लेता हूँ, तो यह होता कि यह हिन्दू है। लेकिन पाण्डेय गिन के बतायें कि पाण्डेय कितने हैं, क्या अल्पसंख्यक नहीं हैं। इसलिये अल्पसंख्यक शब्द निकाल दो हमारा तो यही है जैसा तो नेता जी कहते थे कि हम मंदिर में पूजा करते हैं, आप मस्जिद में जाते हैं। कोई चर्च में जाता है तो गुरुद्वारे में जाता है। सभी जगह जाते हैं लेकिन जहाँ कि भावना का प्रश्न है कि जब कि हम यह नहीं समझेंगे कि आप हमारे भाई हैं, आपका कष्ट मेरा कष्ट है, मैं बताऊँ, मुझको सबसे बड़ी चीज जो मिली कि हम अपने भाई को चाहे, वह बड़ा हो, चाहे छोटा हो, अपना सगा भाई समझें, चाहे वह किसी जात पात का हो। जिस दिन आपमें यह भावना होगी, जिस दिन आप आजाद हिन्द फौज की भावना फैला देंगे, उसी दिन यह सब साफ हो जायेगा। ये जो गन्दगी आज है, यह वैसे दूर नहीं होगी। हमारी भावनाएं हम अभी कह रहे हैं। आजाद हिन्द फौज में जहाँ न धर्म था, न जात पात की लड़ाई थी, सिर्फ देश के नाम पर हर चीज न्योछावर करने को तैयार थे। आपके लिये हमारे 26 हजार आदमी मरे हैं।

प्रश्न – आई.ए.ए. के 26 हजार?

उत्तर – जिस दिन पलेल और इम्फाल लिया था, 4 हजार आदमी बह गये थे। कौन जानता है

कि वह किसी माँ बाप के बेटे थे, कहाँ के रहने वाले थे। सब गढ़वाल के रहने वाले पहाड़ी थे। जो तैरना नहीं जानते थे। किस तरह से आदमी बहे। बन्दूकें, पिट्ठू रखे हैं, जहाँ पानी नहीं था, वहाँ पानी–पानी हो गया। कौन किसको सहारा दे रहा है, कौन किसको, जो थोड़े बच गये निकल कर आये। यही हमारे साथ भी हुआ। हम गोवा पहाड़ी से लड़ाई से पीछे हटे तो पुल टेड़ा हो गया। जब हम लोग पुल पार करने लगे तो हमारे साथ कई सिपाही ऐसे थे। जब बीच में पहुँचते थे तो नदी में पानी नहीं था। बैलगाड़ी, बैल उलटने लगे। कहने का मतलब यह है कि वह सिपाही इतना कष्ट उठाने के बाद भी हिम्मत नहीं हारे। आखिर वह कहते हैं ना कि दुश्मन के झण्डे के नीचे नहीं जायें, कौन कहेगा, कौन नहीं भागेगा, इस तरह से जान हाथ में लेकर।

अच्छा–अच्छा सिंह साहब, बहुत–बहुत धन्यवाद।

श्री बसन्तसिंह 'भृंग'



जिला मेरठ के पश्चिम की ओर एक गाँव रासना है। यह मेरी पैतृक भूमि है। मेरे पिता जी का नाम पं0 रामदास और बाबा का नाम पंडित टीकाराम है। रासना में तीन घर ऐसे थे, जिनमें राजनैतिक लोगों को शरण मिलती थी। इन तीन में मेरा घर भी था जो क्रान्तिकारियों और दूसरे राजनैतिक कार्यकर्ताओं के लिए हर वक्त खुला रहता था। मुझे याद है कि अपनी शहादत से पहले चन्द्रशेखर आजाद ने एक रेशमी कुर्ता पहने हुए मेरे चौके में भोजन किया था। तब मैं बच्चा ही था। इस तरह से मेरे घर में बड़े बड़े नेताओं का लगातार आना–जाना लगा रहता था। मैंने तीसरी क्लास में ही पढ़ना छोड़ दिया और मुझे क्रान्तिकारी बनने की धुन सवार हो गई। मुझे इस रास्ते पर लाने में मेरे मित्र यमुनादत्त ब्रह्मचारी का बड़ा योगदान था। 10 वर्ष की आयु में ही उन्होंने मुझे चाँद पत्रिका का फांसी अंक पढ़ने के लिए दिया। चाँद का फाँसी अंक मैं पढ़ता गया और ऊपर से नीचे तक मेरा सारा शरीर रोमांचित होता गया। इसके बाद पढ़ने लिखने का मन ही नहीं किया। मन होने लगा कि अब बन्दूक और पिस्तौलों का ही जीवन अपनाना है।

उसके बाद चन्द्रशेखर शास्त्री का लिखा आंतकवाद का इतिहास पढ़ने को मिला। इन ग्रन्थों ने मेरे जीवन में ऐसा परिवर्तन किया कि पढ़ने लिखने से मन उचट गया। तीसरी कक्षा में पढ़ना छोड़ दिया। स्कूली पढ़ाई छोड़ने के बाद मेरी स्वाध्याय की प्रवृत्ति बढ़ती चली गई। पुस्तकें पढ़ने की ऐसी आदत पड़ी कि बस 18 घण्टे पढ़ना ही पढ़ना। शौच के लिये मैं जाता तो भी पढ़ना, घूमने जाता तो भी पढ़ना, चाँद की रोशनी में भी पढ़ना और इस तरह से मैंने 6000 ग्रन्थ पढ़े। इस पढ़ने की आदत के कारण अनेक भाषा जैसे––बंगला, गुजराती, उर्दू–पाली, प्राकृत आदि भाषाओं को सीखता गया और लगातार पढ़ता चला गया। इसी बीच मैंने प्राइवेट मिडिल फर्स्ट डिवीजन में पास किया। इसी तरह हाई स्कूल भी प्रथम श्रेणी में पास हो गया और सभी विषय में डिस्टिंकशन रहा। फरारी के जमाने में आयुर्वेद पढ़ा।

सन् 1938 से 40 तक मैं फरारी की हालत में रहा। सन् 1939 में सहारनपुर से प्रकाशित 'रणभेरी' में कविता प्रकाशित हुयी थी, वह कविता थी –

बज उठी विश्व में रण भेरी,
आह्वाहन है हम वीरों का।
स्वर गुंजित है नभ मण्डल में,
भूमण्डल सोना तीरों का।
दुनियाँ हमसे टकराएगी।
पूँजी शासन जनता होगा।
इस तीव्र धधकती ज्वाला में

जो इसके सुलगाने।
शोषण गण तो देख रहा,
हम अलग रहेंगें काले वाले।
क्यों खून गरीबों का चूसा था,
ऐसे उसे जलाना क्या,
इस सोती ज्वाला को।
फिर से बोला जमाना क्या,
जला उठी जगाने वाले को तुम,
भारत की शोषणता का फल,
अपने ही हाथों पाओ तुम।

इससे पहले सन् 1938 में एक कविता लिखी भी – "बहादुर शाह जफर की बेटी"। 41 में मैंने व्यक्तिगत सत्याग्रह में नाम लिखाया, लेकिन जैसे ही मेरा नम्बर आया वैसे ही सत्याग्रह समाप्त हो गया। 9 अगस्त 1942 को 13 आदमियों का एक जत्था घर से निकल पड़ा। तय कर लिया कि अब घर लौटना ही नहीं है। एक–एक गाँव में व्याख्यान देते हुए आगे बढ़ता रहा। हम लोग भाषण देते हुए कैसवाडी गाँव पहुँचे। इसी गाँव में महाशय हरिद्वारी लाल एक वयोवृद्ध सज्जन थे, जो बड़े ही सद्विचारक थे। वह भी हमारे साथ हो लिए और हमने नेतृत्व उनको सौंप दिया।

चलते–चलते जैसे ही हम ठिठोरा गाँव के बाहर जंगल में पहुँचे, हमको गिरफ्तार कर लिया गया। महाशय हरिद्वारी लाल, मैं और ओम प्रकाश (तीन लोग) गिरफ्तार कर लिये गये। शेष साथी पलायन कर गए। हम लोगों की खूब पिटाई हुई। 13 अगस्त की रात में हमको थाने में पहुँचा दिया और 14 अगस्त को जेल में डाल दिया। छः दिसम्बर को हमारा ट्रान्सफर आगरा सेन्ट्रल जेल (आगरा केन्द्रीय कारागार) में हो गया।

आगरा सेन्ट्रल जेल (आगरा केन्द्रीय कारागार) के अन्दर भी हम लोगों ने सरकार को तरह–तरह से परेशान किया। कड़ाके की ठंड में बस एक लंगोट लगाकर रात काट दी और जेल के अन्दर कपड़े पहनने से इन्कार कर दिया। एक बार हम सबने जेल की वर्दी के सारे बटन तक तोड़ डाले। हम लोगों ने अंग्रेज सुपरिन्टेन्डेन्ट तक को खूब परेशान किया। इसके बावजूद जेल के अधिकारी मेरा बड़ा सम्मान करते थे। बुनाई और डिजाइनिंग का काम मैं जानता था। मेरे काम से सब अधिकारी प्रभावित थे। इसी जेल में सुन्दर लाल जी से मेरी भेंट हुई। वह बड़े ही विद्वान व चरित्रवान थे। जेल में ही मैंने उनका संस्मरण लिखने का मन बनाया, किन्तु 15 दिन बाद ही उनकी मृत्यु हो गई।

श्रीमती प्रेमवती मिश्रा



प्रश्न :– माता जी मैं उत्तर प्रदेश अभिलेखागार से आया हूँ और आपका संस्मरण टेप करना चाहता हूँ। हमारे यहाँ मौखिक इतिहास योजना चलायी जा रही है, जिसके अन्तर्गत आप अपने जीवन परिचय का संक्षिप्त वर्णन कीजिये?

उत्तर :– मेरा जन्म आगरा जिले के फिरोजाबाद तहसील में बीसर माह के दीवान के यहाँ व टीकाराम के पुत्र जगन्नाथ प्रसाद के यहाँ हुआ, क्योंकि मेरा अधिकांश जीवन मेरे चाचाजी के साथ गुजरा। पं0 ठाकुर प्रसाद शर्मा स्वयं इस समय कांग्रेस के नेता, कार्यकर्ता थे और प्रोविन्शियल कांग्रेस कमेटी के पं0 जवाहर लाल नेहरू, मोती लाल नेहरू गुरु थे। पुरुषोत्तम दास टण्डन वगैरह से उनके बहुत निकट के सम्बन्ध थे, उन्हीं के साथ मेरा जीवन व्यतीत हुआ। बचपन में मैंने कुछ पढ़ा लिखा नहीं था, स्कूल जाती थी तो नौ साल की उम्र में मुझे बन्द कर दिया। मैं दूसरा दर्जा भी नहीं पास थी किन्तु मुझे पढ़ने की लालसा बहुत विकट हुई और मैं घर में ही अध्ययन कार्य करती रही, कभी कोई बात की सहायता मैं चाचा जी, से लेती थी, उस समय लड़कियों को टीचर से भी नहीं पढ़ाया जाता था। एक बार मैंने कहा कि चाचा जी, मैं अपने भाइयों के साथ टीचर से पढ़ लिया करुँगी तो चाचा जी ने परमीशन दे दी। चाची ने कहा हमारी लड़की मास्टर से पढ़ेगी तो शाम को चाचा जी बोले कि बेटा हम पढ़ा दिया करेंगे लेकिन तुम मास्टर से न पढ़ो। मैंने पढ़ना शुरु किया, अपने आप पढ़ती रही। एक–एक अक्षर जोड़ कर पढ़ा और पढ़ते–पढ़ते, मैंने गीता भी पढ़ा और रामायण भी पढ़ी और कई चीजें पढ़ी। मेरे यहाँ साहित्य बहुत था, किन्तु लड़कियों को वह लोग रामायण, गीता धार्मिक पुस्तकों को सुखसागर वगैरह नहीं, महाभारत नहीं, केवल श्रेष्ठ पुरुषों का जीवन चरित्र ही पढ़ने की परमीशन देते थे। किसी प्रकार मैंने धीरे–धीरे पढ़ना शुरु किया और उसके पश्चात् थोड़ा सा मुझे ज्ञान हो गया। इनकी राजनैतिक बातें मैं सुना करती थी। मैं घर में लड़की थी, पहले लोग (नौकर) सरवेन्ट से ये काम नहीं कराया करते थे। पानी मांगे, गेस्ट को भिजवाएं या भोजन गेस्ट को भिजवाऐं तो वह काम घर की लड़कियाँ ही किया करती थी। घर में, मैं ही बड़ी लड़की थी। उस समय हमारी ज्वाइंट फैमिली थी, तो वह काम मुझे ही करना पड़ता था। सुना करती थी, कभी बालकृष्ण शर्मा नवीन से वार्ता होती थी, चाची जी की। कभी–कभी एक आध बार मोती लाल नेहरू भी आए।

प्रश्न :– आपके चाचा जी का नाम क्या था माता जी?

उत्तर :– पं० ठाकुर प्रसाद शर्मा। मोती लाल नेहरू भी आए और बहुत से लोग गणेश शंकर विद्यार्थी, श्री कृष्ण दत्त पन्त पालीवाल के क्लास फैलो, लंगोटिया यार थे, सब लोग बात–चीत किया करते थे और हम सुना करते थे।

प्रश्न :– अच्छा माता जी आपका जन्म कब हुआ था?

उत्तर :– जन्म सन् 15 में हुआ था।

प्रश्न :– अच्छा सन् 15

उत्तर :– ये बातें हम पूरी तरह समझ नहीं पाते फिर भी सुना करते थे। लेकिन एक अजीब लालसा सी पैदा होती थी। हमारा मकान फिरोजाबाद में थाना और तहसील के पास था तो जब भी कभी भी एक बार वहाँ नगाड़ा बज रहा था, हमने वहाँ अपने ताऊ जी से, उन्हें हम दादा जी कहते थे, वो भी हमको बहुत प्यार करते थे। हमने कहा कि दादा जी ये नगाड़ा कैसा बज रहा है तो उन्होंने कहा कि आज सम्राट का जन्म दिन है, इसलिये ये नक्कासी बज रहा है। हमने कहा हमको सम्राट से क्या मतलब। हम दस–ग्यारह साल के थे, ज्यादा के नहीं थे। उस समय पर हमको बहुत चिड़चिड़ाहट हुई कि इस समय हमारे यहाँ क्यों दूसरे देश के सम्राट का नगाड़ा बज रहा है। इसी प्रकार जो जुलूस निकलते थे, तो वो भी तहसील के सामने से ही होकर निकलते थे। उन सब चीजों का प्रभाव धीरे–धीरे हम सब पर पड़ता था और शुरु से ही हमारे मन में खद्दर के प्रति जागरुकता पैदा हो गयी और हम ग्यारह–बारह वर्ष की उम्र तक तो पूर्णरुपेण खद्दर पहनने लगे। हाँलाकि उस समय आन्दोलन नहीं था, लेकिन हमारा ह्दय आन्दोलित था। हम खद्दर पहनने लगे। एक बार तो ऐसा हुआ कि हम अपनी रिश्तेदारी में गये, बचपन की बुद्धि अपरिपक्व तो होती ही है, तो एक बार हम इन सब लोगों से अड़ गये कि तुम सब लोग प्रतिज्ञा करो कि हम खद्दर पहना करेंगे।

प्रश्न :– ये किस वर्ष की बात है माता जी?

उत्तर :– ये सन् तो हम नहीं बतला सकते किन्तु हम बारह –तेरह वर्ष के थे, उस समय की बात है। अलीगढ़ के एक ठेला बछेड़ा नाम का खेड़ा, नारायण सिंह, हमारे चाचा जी की ससुराल थी, वहीं पर हम अपनी चाची के साथ गये थे और वहाँ से हम गाड़ियों में बैठ–बैठ कर पोखर नहाने गये थे। वो पुराने जमींदार थे तो वहाँ हम अकड़ गये और वहाँ हमने अनशन शुरु कर दिया कि हम खाना तब खायेंगे, जब सब लोग स्वीकार कर लेंगे। सब लोग बड़े संकट में पड़ गये। सब लोग न तो खद्दर की प्रतिज्ञा ही कर सकते थे और न ही हमकों भूखा मरते देख सकते थे। बड़ी मुश्किल से, हमें मालूम नहीं, तीन चार दिन भूखों मरने के बाद, उन्होंने हमें किसी प्रकार से खाना खिलाया। तो ये सब स्वाभाविक था। हम राजनैतिक जानकारी के लिये, पहले बनारस में ''आज'' निकलता था तो ''आज'' अखबार को पढ़ा करते थे कि सब प्रकार की खबरें निकलती हैं। उन्हें अनमैरिड (अविवाहित) लड़की को नहीं पढ़ना चाहिए। तो हमारी चाची से चुपके–चुपके कहने पर हम उनके कन्ट्रोल (नियन्त्रण) में नहीं आते थे और किसी की नहीं सुनते थे। यह तो ज्ञान था नहीं कि कहाँ से ज्ञान मिलेगा, परन्तु उसको हम पढ़ जाते थे, चाहे वो एडर्वटाइजमेन्ट (विज्ञापन) हो या कुछ उससे हमें कुछ राजनैतिक शिक्षा प्राप्त होती थी। उसके पश्चात् बनारस में हमारा वहाँ हमेशा बचपन तो बीता नहीं था। नौ वर्ष की उम्र में हम गये थे। ऐसा कि जब चाचा जी हमारे जेल से छूटे तो बाबा भगवान दास वहाँ बनारस में चेयरमैन हो गये। उन्होंने चाचा जी को पत्र लिखा कि यहाँ आ जाइये तो हम दोनों लोग चुंगी पर कब्जा करलें। पहले छोटी–छोटी पर कब्जा करना पड़ता था तो चाचा जी सन् 24 में बनारस पहुँचे और उसके बाद सन् 25 में हम भी गये, तब से वहाँ हम को बाल्यपन तो गुजारना ही था। अब वह हमें निकलने नहीं देते थे। वह बहुत अच्छे विद्वान, बहुत अच्छे लेखक, कवि थे। एक बार तिलक आये, बहुत प्रशंसा हुई तो तिलक महाराज के आगमन पर जो कविता लिखी थी, उसकी प्रशंसा बहुत हुई थी। महावीर प्रसाद द्विवेदी बाबू उनको देखकर इतने प्रभावित हुए कि अगर भारत में ऐसे बच्चे पैदा हो जाएं तो हिन्दी

भाषा का कल्याण हो जाय, तो इस प्रकार वह काफी उच्च श्रेणी के व्यक्ति थे। यह स्वाभाविक है कोई व्यक्ति अपने लड़कियों को असुरक्षित नहीं रखना चाहता है, तो हमें नहीं निकलने देते। फिरोजाबाद में पहले छोटा सा कस्बा था और वहाँ हमको मौका मिल सकता था। तो हम मौका देख रहे थे कि कब फिरोजाबाद जाने का समय मिले, फिर फिरोजाबाद हमारी बहनें आने लगी तो हमने भी जिद् की हर कमजोरी या खूबी को हर आदमी के भाई, बहन ज्यादा जानते हैं। तो हमारे भाई ने कहा कि चाचा जी ये कांग्रेस का काम करने के लिये फिरोजाबाद जाना चाहती हैं। इसे फिरोजाबाद मत भेजिये। चाचा जी को समझ में नहीं आया, इतने बड़े विद्वान इतनी बड़ी सोसायटी का आदमी एक छोकरी क्या काम करेगी, उनकी समझ में नहीं आया। उन्होंने भेज दिया। अब हमारे पिता आगरा में रहते थे। पहले ट्रेन चला करती थी, जिसमें लेडीज का डिब्बा अलग रहता था। उसमें हम दोनों बहने बैठे थे। बहुत गाड़ियां धीमी हुआ करती थीं। डिब्बे पर भाई साहब देखने आया करते थे। यह इन्ट्रोगेशन का पुरुष देखने आया करते थे। लेकिन यह फिरोजाबाद से नहीं आये और हमको आगरा पहुँचा दिया। जैसे ही हमारे ताऊ जी को पता लगा कि हम आगरा पहुँच गये हैं। वह हमें फिरोजाबाद ले आये। वहाँ श्रीमती कृष्ण दत्त पालीवाल पहुँची और वहाँ पर एक द्वारिकाधीश का मन्दिर है जो विशेष प्रसिद्ध है। उस पर सत्याग्रह हुआ कि विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार और हरिजनों का प्रवेश।

प्रश्न :– अच्छा यह सन् 1930 के आस–पास का किस्सा होगा?

उत्तर :– हाँ यह सन् 1930 ही रहा होगा। हमें तो तब इतना ज्ञान भी नहीं था। इतने पढ़े लिखे नहीं थे कि हम सबों को नोट करते तो हमने कहा कि हमने अपनी अम्मा को पटाया। अपनी ताई को हमने कहा अम्मा चाची से मिल आवें। अब अम्मा बोली, मैं तो कभी मिली नहीं हूँ। मैं तो कभी जाती नहीं हूँ। वो समझ गई कि ये किस वजह से कह रही है। तो मैंने बहुत जिद् की तो वह मेरी जिद् के आगे झुक जाया करती थी। तो मुझे वह ले गयीं। जब मुझे वह ले गयींतो मैंने कहा चाची मेरा भी नाम स्वयंसेवकों में लिख लो। अम्मा बोली नेक रुक जा बहू, नेक रुक जा लेकिन उन्होंने भी लिख लिया। हमने भी लिखा लिया। अब निकलने को था, जुलूस तो उन्होंने कहा कि हम जुलूस में भी जायेंगे। अब पहले लड़कियां कहाँ निकलती थीं। अम्मा कहें घर चल घर से आ जाना। हमने अम्मा की एक नहीं सुनी हम जुलूस में चले गये। अब हमारी अम्मा बेचारी को भी साथ–साथ जाना पड़ा। जब हम वहाँ से लौट कर आये तो हमने कहा कि हमको घर से ले लेना। ऐसे हमकों नहीं आने देंगे ये। तो अब हमारे दादा जी को मालूम पड़ा। ताऊ जी को तो वह आये उन्होंने कहा आज मैंने सुना है कि तुम लोग सारे शहर में घूमें हो जुलूस में। तो अम्मा ने कहा मेरी मजबूरी थी मैं इस लड़की को अकेले छोड़ कर आ नहीं सकती थी। इसलिये मुझे भी जाना पड़ा खैर दादा जी ने मुझसे कुछ नहीं कहा उसके बाद में शाम को मिसेज पालीवाल ने किसी को भेज दिया कि प्रेमवती को ले आओ तो दादा जी ने कह दिया कि वह अब नहीं आ सकती। उसके बाद अब मैं मौका देखूँ कि कैसे जाऊँ तो पहले साधारण घरों में बाथरूम वगैरह नहीं हुआ करते थे। अलग तो दिन छिपा हुआ था। अम्मा ने कहा, कहाँ जा रही है लली, तो मैंने कहा पेशाब को जा रही हूँ तो चुप हो गयीं, मैं चुप चाप खिसक आयी। वहाँ बाहर ही एक और लड़की बैठी हुयी थी। मेरी उम्र की तो मैंने उससे कहा ओमवती मैं तो जा रही हूँ पिकेटिंग में तू चल रही है। उसने कहा चल। मैंने कहा मैं सब तरह से तैयार होकर आई हूँ, चाहे घर से निकाल दें, चाहे कुछ करें तेरी शादी हो गयी है। तेरह चौदह साल की उम्र में तेरी शादी हो

जाती तू बता। तो उसने कहा मैं भी तैयार हूँ, तो वह भी चल दी मेरे साथ। अब जब मैं नहीं लौटी, तो अम्मा बड़ी परेशान हुयीं, फिर वहाँ पर एक मकान था, हमारा पूरा मुहल्ला ऐसा था—जैसे एक गढ़ हो। चारों ओर से मकान बने हुये थे। बीच में एक बड़ा चौक था। फिर एक शिवालय था, एक कुँआ था, फिर उसके बाद दो चौक और पड़ते थे। तो अम्मा बेचारी तो जहाँ रात को स्त्रियां चाहे जिस समय तक बैठी रहती थी, एक ही इंट्रेंस, बाहरी आदमी कोई घुस नहीं सकता था। तो वहाँ चार पांच स्त्रियां बैठी रहीं हमारे इन्तजार में गोली चलने की नौबत आ गई, लेकिन अरेस्ट नहीं हुये। अब हम घबड़ाये कि हम अब कहाँ जायें। चाची आ गई। हमारे साथ मिसेज पालीवाल सुखदेवी, पालीवाल आयीं तो अम्मा हमारी बिना पढ़ी लिखी थी, पर बड़ी पालिटीशियन थीं। बड़े प्यार से हमें घर ले गयीं। वहाँ पहुँच कर दूसरे दिन हमारा बिस्तरा आगरे को बांध दिया। अब हमने कहा आज का दिन और किसी तरह से निकल जाय, तब तो हम अरेस्ट हो ही जायेंगे। वह इत्तफाक से ऐसा हुआ कि हम गाड़ी पर पहुँचे तो हमने कहा दादा जी इस कम्पार्टमेन्ट में तो बदबू आती है। तो उन्होंने कहा अच्छा दूसरे में बैठ। दूसरे में बैठे तब तक गाड़ी चल दी। गाड़ियां थी, एक दो तब फिर उस दिन आ नहीं सके। फिर हम भाग गये, रात को फिर हम मिसेज पालीवाल के साथ अरेस्ट हो गये। दो महीने की शायद सजा हुयी, उसके बाद हम लोग छोड़ दिये गये।

प्रश्न :— ये सन् 42 का किस्सा है?

उत्तर :— नहीं ये सन्............................।

प्रश्न :— 40 का है?

उत्तर :— नहीं ये सन् 30 का किस्सा है। जब हम बच्चे थे।

प्रश्न :— बच्चे थे, तभी ये पिकेटिंग वगैरह? विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार?

उत्तर :— उसके बाद बाबू बनारसी दास से हमारे दादा जी को लिखा कि आपकी श्रीमती (नाखुशी में) बड़ा नाम पैदा कर रही है, जेल खाने पहुँच गयी। तो सब लोग परेशान थे। अनमैरिड लड़की से कोई शादी नहीं करेगा। फिर जब हम छूट गये तो सारे फिरोजाबाद के लोगों ने कहा भगवान तेरी सेवाओं की जरूरत नहीं है हमें, तू जा यहाँ से। चाचा जी को तार दिया और हमको बनारस भेज दिया। उसके बाद जब हम फिरोजाबाद आते थे, तो हमको जब मौका मिलता था, तब मीटिंग में चले जाया करते थे, बोल देते थे। लेकिन हमकों फिरोजाबाद आने का मौका ही नहीं दिया जाता था, उसके बाद सन् 33 में चाचा जी से हमने ये बात कह दी थी, कि हम शादी करेंगे, किसान के लड़के से। उन दिनों किसानों के प्रति बड़ी आस्था थी। हमें, चाचा जी की तीन लाइनें भी याद हैं :—

करुणेश करुणा कीजिये प्रेषित महान किसान,
अब जान यहीं से जा रहे प्रिय देश की जो जान।
बाकी तीसरी लाइन हमको याद नहीं।

''जीवन दिया है आपने, पर अन्न दाता है यही।'' ये उनकी कविता थी, तो उस तरह की भावना थी, किसानों के प्रति तो हमने कहा शादी करेंगे, पढ़े लिखे लड़के से पर किसान के लड़के से ही। ना हम जमींदार के लड़के से करेंगे और सरकारी नौकर से भी नहीं करेंगे। आप आश्चर्य करेंगे, उस समय ऐसा रिवाज भी नहीं था कि हमारे लिये आफर आये, ऊँचे—ऊँचे लोग आते, मगर हमने मना कर दिया और मिश्रा जी के साथ हमारी शादी हुयी।

प्रश्न :– मिश्रा जी का पूरा क्या नाम था माता जी?

उत्तर :– मिश्रा जी का नाम था, पं0 भोगी लाल मिश्रा, एडवोकेट एम०एल०सी०, स्वतंत्रता सेनानी।

प्रश्न :– कहाँ के रहने वाले थे?

उत्तर :– ये आगरा के फिरोजाबाद तहसील में पाकरी थाना है, अब तो वह तहसील हो गया है। शायद और फिरोजाबाद अब जिला हो गया है। तो इनके संग हमारी शादी हो गयी सन् 33 में, उसके बाद हमारे ऊपर से सब प्रतिबन्ध उठ गये थे। फिर तो रात दिन यही काम करते थे। दोनों आदमी, मिश्रा जी पढ़ते थे, हम भी पढ़ते थे क्योंकि हम पहले पढ़े नहीं थे। आगरा कालेज से हमने हाई स्कूल किया, फिर आगरा कालेज में एडमीशन लिया उसी बीच में फिर हम अरेस्ट हो गये।

प्रश्न :– अरेस्ट किस सन् में हुयी थी आप?

उत्तर :– अरेस्ट हम सन् 40 में भी हुये।

प्रश्न :– कौन सी जेल में सन् 40 में? बन्दी आपको किस जेल में बनाया गया?

उत्तर :– बन्दी? बन्दी हमको बनाया गया था। मोती कटरे में उसके बाद फिर हम काम करते रहे। फिर छूट गये आसानी से। हम विद्यार्थी थे तो छोड़ दिया। उसके बाद बन्नी सिंह सी.आई.डी. इन्सपेक्टर मिश्रा जी भी अरेस्ट हुये थे और दो साल बाद सन् 42 में छूट गये। जब अरेस्ट हुये थे तो बन्नी सिंह आये, उन्होंने मिश्रा जी से कहा, मैं मिसेज मिश्रा से बात कर लूँ। उन्होंने कहा, कर लीजिये। वह चाहते थे, हम उन्हें बतला दें, हमारे यहाँ हथियार है, हथियारों की फैक्ट्री है और हम सब कुछ कर सकते हैं। वह बार–बार यही कहें कि आपके पास हथियार नहीं होंगे तो आप क्या कर सकती हैं। हम बार–बार यह कह दे कि हमें हथियारों की जरूरत ही नहीं। हम तो यह आग पैदा कर देना चाहते हैं, आप लोगों के दिमाग में कि हम गुलाम नहीं रहेंगे। तो आपसे आवश्यकता पड़ेगी तो आपसे हथियार लेकर सरकारी हथियारों को लेकर निकल पड़ेंगे। जब दो घंटे वह हमसे उगलवा नहीं पाये तो हमारे यहाँ कुछ लिस्ट रखी हुयी थी नामों की और उसमें बहुत से इम्पोरटेन्ट नाम थे, सब अरेस्ट हो जाते तो हमने उनसे पूछा आप पानी पियेंगे? उन्होंने कहा, पियेंगे। पं० ईश्वरी प्रसाद का नाम आपने सुना ही होगा, उनके भाई ने हमें एक कोने में एक कमरा दिलवा दिया था, एक जगह मोती कटरे में, वैसे हम आमतौर पर रहे थे किराये पर राजा मन्डी में, तो उसमें एक छोटा सा किचन था, कोयले में पहले खाना बनता था तो लकड़ी के कोयले जल रहे थे तो हमने कुछ कागज तो उसके हवाले किये, कुछ पीछे कुम्हारों की झोपड़ी थी, उसमें फेंक दिये फिर हम जम गये बैठ के। जब उनको यह मालूम हुआ कि ये नहीं बतायेगी तब उन्होंने मिश्रा जी से कहा मिश्रा जी इन्हें अरेस्ट करा दीजिये मेरी बच्ची होने वाली थी, यही डा० वीणा मिश्रा।

प्रश्न :– शुक्ला जी बता रहे थे, जिक्र कर रहे थे, यही किस्सा?

उत्तर :– हाँ (वीणा मिश्रा)। तो उन लोगों ने कहा हम तो यह सोच रहे थे कि ये फारिक हो जाये तब ले जायेंगे, लेकिन ये तो बड़ी बुरी फंसी हुयी हैं और कोई भी नहीं बल्कि बड़ी भयंकर षडयन्त्र में फंसा दिया जायेगा। इसलिये जल्दी से जल्दी इन्हें अरेस्ट करवा दीजिये बल्कि जल्दी से जल्दी इन्हें सत्याग्रह करवा दीजिये। तब सन् 42 में फिर हमने सत्याग्रह किया, उसमें हमारे लड़के को भेजने के लिये बनारस का तय हो गया था। हमारा लड़का था डाक्टर, जो आज कल डा० सर्वदमन मिश्रा है, वह लड़का था साढ़े छः साल का। तो वह केवल दिखाने के लिये लोग बाग ले गये। अब वह हमारे

साथ खड़ा हो गया और छोटी सी डन्डी भी ले ली। अब उसमें जब हम नारे लगा रहे थे, तो वह भी नारा लगा रहा था। इतने में हम लोग गली में घुस गये, पुलिस को ट्रेस नहीं मिल रही थी, मन कामेश्वर की गलियां ऐसी हैं छोटी–छोटी। एक जगह जाकर उन्होंने डन्डा अड़ा दिया। फिर वहाँ पर और सब लोग तो भाग गये, कोई किसी के घर में घुस गये। एक बेचारा परदेसी था कासगंज से घी लेकर आया था, वह अरेस्ट कर लिया गया। वह बहुत कहे मैं तो घी लेकर आया था, मेरे बच्चे भूखे मर जायेंगे, लेकिन उसको अरेस्ट कर लिया। लड़के से जब वह डन्डी छीनने लगे तो लड़का बहुत तेज था। उसने दरोगा के मुंह में खोंस दिया। इस पर उसने थप्पड़ मारा। फिर यह बड़ा खूँखार हो गया, तब इसको भी ले गये थाने कोतवाली। फिर उसको वहाँ बन्द कर दिया। अब हम आवाज तो सुनते थे लेकिन हमको यह नहीं मालूम कि किधर किया। हम कड़ा जी किये बैठे रहे, जी तो घबड़ाता था और यह यही चिल्लाता रहा पुलिस का नाश हो, पुलिस का नाश हो, आखिर में उन्होंने निकलकर जब देखा कि बेहोश हुआ जाता है तो निकाला, मुंह धुलवाया, बाजार ले गये, मिठाई दिलवाई। उसके बाद में वह दरोगा जो था, वह ये कह रहा था, दरोगा था या इन्सपेक्टर, हमें नहीं मालूम, वह कह रहा था 'झण्डा नीचा रहे हमारा'। तिरंगे झण्डे को मैंने कहा तुम्हारा झण्डा नीचा तो है ही, उसको रहा नहीं यह आपको। मैंने कहा तुम तो कह रहे हो हमारा झण्डा। फिर मैंने कहा बच्चे का वारंट. फिर हमारे साथ ही कर दीजिये तो बोले आपके साथ क्यूँ कर दें मैंने कहा, आप अरेस्ट करके ही तो लाये हैं या छोड़ दीजिये। तो कहने लगे क्यूँ छोड़ दें, हम अरेस्ट कर के लाये हैं, अपनी इच्छा से जहाँ चाहेंगे, वहाँ रखेंगे और हम कांग्रेसियों के साथ थोड़ी रियायत भी करते हैं। तो मैंने कहा कि क्या हम कांग्रेसी नहीं हैं, तो कहने लगे, बिजली का तार काटना, पटरियां उखाड़ना, आग लगाना, यह कांग्रेसियों का काम है। मैंने कहा, मैं तेरे घर में आग लगा आई या कोतवाली में आग लगा आई। बोला, आपकी वाणी से मालूम पड़ता है आप क्रान्तिकारी हैं। मैंने कहा, मेरी वाणी में बम बरसते हैं, दूर खड़ा होइयों। इतने में एक दुर्गा प्रसाद तिवारी चूँकि हमारा घर बहुत फेमस था, चाचा जी मैनपुरी षडयन्त्र केस में भी रह चुके थे, तो बहुत से लोग जानते थे, बहुतों से जान पहचान भी थी और मिश्रा जी को बीइंग अलायर बहुत सिम्पल मानते थे। पुलिस वाले भी यद्यपि वह इतने सिम्पल थे, नहीं कार्य करने में। वो बोले मिश्रा जी तो बहुत सीधे–साधे हैं, ये बहुत तेज हैं। इतने में वहाँ बड़ा हुजूम इकट्ठा हो गया, इस सारी वार्ता में। इतने में दुर्गा प्रसाद तिवारी आये, वह एस.एस.पी. थे सी.आई.डी. के। उन्होंने देखा, अरे पंडित जी की लड़की यहाँ पर, तो उन्होंने कहा, क्या बात है क्यूँ सब इकट्ठे हो गये हो? कि साहब यूँ कहती है कि लड़के का वारंट हमारे वारंट पर लिख दीजिये, तो उन्होंने कहा और साढ़े छः बरस के बच्चे को किसके साथ भेजेंगे। कहीं अलग जेल में जायेगा। इन्हीं के माँ के ही साथ में जायेगा, लिख दो इसका नाम। तब उसको हमारे साथ भेज दिया। फिर हम जेल में रहे। फिर ये बच्ची होने को थी। तो कभी–कभी दादा जी यहाँ डी.एम. थे, उनसे वार्ता हुआ करती थी। एक बार मिश्रा जी ने कहा कि शायद हमारा यहाँ की जेल से ट्रान्सफर हो जाये, तो यहाँ पर ब्रह्म दत्त अग्निहोत्री हैं। ब्रह्म दत्त अग्निहोत्री जर्मन सिटीजन के नाते अरेस्टेड थे, तो उनको तुम हमारे जाने के बाद कुछ हेल्प कर दिया करो। हमारे जेल जाने के पहले की बात है तो हमने कहा हम उन्हें पहचानते हैं नहीं तो उन्होंने कहा, इन्टरव्यू, तो हमने इन्टरव्यू लिया। उनको चाचा लिखा, वहीं मिस्टर महेन्द्र थे तो उनकी पत्नी बोली, मुझे भी ले चलो, हमने कहा, तुम भी चलो, तो हम गये उनसे तो केवल परिचय करना था, तो किया,

फिर महेन्द्र जी से बात चीत करते रहे। उसी दिन मिश्रा ने कहीं दो चिट्ठी भेजी थी, वह पकड़ी गयी, तो हमें डी.एम. से हर बात के लिये परमीशन लेनी पड़ती थी। तो हम डी.एम. के पास गये किसी और के परमीशन के लिये, तो वह बोला, मिसेज मिश्रा आपसे हमें यह उम्मीद नहीं थी तो हमने कहा क्या? उसने कहा कि आप मिस्टर मिश्रा की चिट्ठियां लायीं? मैंने कहा, शिवदाता साहब, ऐसी बात आप मुझसे मत कहिये और मुझसे यह उम्मीद भी मत करिये। तो बोले कि आप ब्रह्म दत्त अग्निहोत्री से मिलने गयीं? मैंने कहा गयी, कहने लगे कि मिसेज महेन्द्र गयी? कि हमने कहा, गयी। तो आप उनसे मिलने क्यों गईं? मैंने कहा मेरे हसबैन्ड थे, ऐसे–ऐसे कहा था। आपने तो आपके वह कौन लगते थे? मैने कहा, चाचा। तो कहा रियल अंकल थे? मैने कहा, नहीं चाचा के उम्र के थे। तो बोले कि आपको फ्रेन्डस को कुछ कम समय मिलता था। तो मैने कहा, कोई भी इन्डियन लेडी किसी को लिखते समय फ्रेन्डस शब्द नहीं लिखेगी, कहने लगे क्या । कि ऐसा है? मैने कहा हाँ। रतन मुनि जैन में नेहरू जी आये थे तो उन दिनों बाह में डाकुओं के नाम पर पुलिस ने बड़ा अत्याचार किया लोगों को ठूँठों से भरे खेले में ले जाया गया और घर–घर में घुस कर स्त्रियों से बेतूकी बातें कीं। उनके सामान वगैरह ले गये। इसकी शिकायत विद्यावती राठौर, जो एम.एल.ए. थीं, उन दिनों, उन्होंने उनसे की, वह बाहर क्षेत्र को ही बिलांग करती थीं लेकिन नेहरू जी ने यह कहकर कि वह डकैत थे, वह डकैत थे, यों कह कर खतम कर दिया, चली आई। हम मीटिंग में से बोले तो लोगों ने कहा कि आप पास जाकर कहिये, तो मैंने पास जाकर कहा, कि वह डकैत थे आप यह कहते हैं कि वह डकैत थे। उनकी स्त्रियां डकैत थीं। तो आपके यहाँ अदालत किस लिये है। जब डकैत थे, तो उनको आप अदालत में बुलाते और सजा दिलवाते। उस वक्त जगन प्रसाद रावत उसके पार्लियामेन्ट सेक्रेट्री थे, पुलिस के उन्होंने कहा रावत जी क्या बात थी तो उन्होंने कहा साहब इन्क्वायरी हो रही है, हम लोग गये थे इन्क्वायरी में तो ये बात सब सही पायी थी। इसलिये कहा तो इस तरह की बात हो जाती थीं अब इन्द्रा जी कहती थीं ये करो वो करो। अब हर आदमी हर काम तो नहीं कर सकता था। एक बार जब यह आई सरोजनी नायडू।

प्रश्न :– अच्छा?

उत्तर :– जब वह गवर्नर थीं तो वह आयीं। यहाँ सर्किट हाउस में मिलने गये। तो हमने कहा, आप एक मीटिंग आप स्त्रियों की कन्वेशंन करवा दीजिये। वो बोलीं, मीटिंग तुम करवाना चाहती हो, तो यहीं बुलवा लो स्त्रियों को और सर्किट हाउस (इन दिनों आगरा बढ़ गया है) काफी दूर पड़ता था। मैंने कहा, इतनी दूर कौन आयेगा। पांच–पांच रुपये खर्च करके। तो बोले, जिसे मुझे सुनना होगा, वह आयेगा, तो मैने कहा, वह नहीं सुनना चाहते, हम उनको सुनवाना चाहते हैं। जैसी ये हैं वैसी आप बनिये। तो बोली, तुम्हें मालूम है। मैंने कितना काम किया है? मैने कहा, आपकी उम्र की हो जाऊँ तो शायद मैं भी उतना काम कर लूँ। तो उन्होंने कहा, चुप नहीं बैठेगी, मैं थप्पड़ लगाऊँगी बैठ जा चुप चाप। तो मैं बैठ गई उनके पास और मेरे पास आना गवर्नर हाउस।

प्रश्न :– तो इस समय आपकी उम्र कितनी होगी माता जी?

उत्तर :– इस समय मेरी 82 वर्ष। एक बार काटजू साहब आये तो काटजू साहब ने कहा। तब मीटिंग लाखों की हुआ करती थी। दो ही आदमी स्टेज पर एलाउ हुआ करते थे। मिश्रा जी सेक्रेट्री थे, सेठ अचल सिंह प्रेसीडेण्ट थे।

प्रश्न :– तो यह एम.पी. के मुख्य मन्त्री थे, सन् 47 के बाद? तब की ये बात है ये काटजू जी?

उत्तर :– हाँ काटजू

प्रश्न :– जब काटजू एम.पी. के मुख्य मन्त्री रहे तब की बात है?

उत्तर :– ये शुरु–शुरु की ही बात है।

प्रश्न :– जब देश आजाद हुआ?

उत्तर :– नहीं, नहीं। ये उत्तर प्रदेश के किसी मन्त्री मण्डल में थे शायद।

प्रश्न :– नहीं, वह सन् 37 में जब गोविन्द बल्लभ पन्त की सरकार बनी है उस समय में थे। उस समय यह मिनिस्टर थे।

प्रश्न :– अगर 37 का नहीं है। तो ये मुख्य मन्त्री जो हैं?

उत्तर :– नहीं, ये स्वतन्त्रता के बाद।

प्रश्न :– ये मुख्य मन्त्री रहे मध्य प्रदेश के?

उत्तर :– हाँ। तो इन्होंने बोला कि मैने। ये कनवोक्शन में आये थे। तो इन्होंने कहा कि कोई सज्जन मेरे पीछे एक लिफाफा रख गया चुपचाप। मैंने समझा कोई सज्जन मुझे निमन्त्रण देने आये हैं। तो मैने जब खोला तो उसमें मास्टरों की धमकी थीं कि हम स्ट्राइक कर देंगे, नहीं तो हमारी तनख्वाह बढ़ाओ। उन्होंने कहा हमारे पास नहीं है। हम चाहते जरूर हैं कि आपकी तनख्वाह बढ़ायें, लेकिन हमारे पास पैसा नहीं है। पहले यह लोग पांच सौ रुपये लेते थे, फिर इन्होंने डेढ़ हजार कर दिया था मिनिस्टरों ने। तो हमने कहा ये लोग कहते हैं कि आपने अपनी तनख्वाह तो बढ़ा दी, लेकिन हमारी नहीं बढ़ायी। अगर रोटी एक है तो आधी–आधी खाइये। आप अपनी बढ़ायेंगे तो हमारी भी डिमान्ड होगी, तो वह इसके लिये तैयार नहीं थे, बेचारे कुछ घबड़ा गये। बोले, अगर मैं गलती करूँ तो क्या आप भी गलती करेंगे? अगर मैं शराब पियूँगा तो क्या आप भी पियेंगे? मैंने कहा, बेशक। या तो हम जो आप करेंगे वह करेंगे वरना हम आपको अपना लीडर नहीं मानेंगे, इस बात पर फिर हमारे ऊपर जवाब तलब हुआ कांग्रेस कमेटी से। तो हमने कहा हमको नहीं मालूम था कि आपके पास रिजनेबल आन्सर नहीं है, आपने अपनी तनख्वाहें बढ़ा ली हैं। हम काहे को कहते पब्लिक में, हम तो समझते हैं पब्लिक हमारी जान खाती है तो एक बार निपटारा हो जायेगा। पब्लिक के बीच में सदा बात साफ हो जायेगी।

प्रश्न :– अच्छा एक बात बताइये माता जी, श्री राम शर्मा जी जो आगरा बम केस में थे, उनके विषय में कुछ प्रकाश डालेंगी?

उत्तर :– हाँ। श्री राम शर्मा के सम्पर्क में तो मैं ज्यादा नहीं रही, वो तो चाचा जी के फ्रेन्ड थे।

प्रश्न :– अच्छा आया करते थे, आपके चाचा जी के पास?

उत्तर :– हाँ चाचा जी के फ्रेन्ड थे। वह जब आते थे तो मैं और वह दोनों मिलने जाया करते थे। उनसे सब कुछ था, लेकिन मेरी उनकी निकटता नहीं थी। वह कुछ मुझसे चिढ़ते थे मालूम नहीं क्यों? तो लेकिन वैसे उन्होंने इस क्षेत्र में क्या किया ज्यादा तो मैं नहीं जानती। गोपी नाथ शर्मा थे, बसन्त लाल झा थे और ये दो–चार आदमी थे, पूर्णिमा थीं वह उनके साथ अरेस्ट हुयीं थीं। उनके दो लड़के और तीन लड़कियां, तो वो शिकारी के नाम से ज्यादा जाने जाते थे, उन्होंने शिकारी के ऊपर कुछ किताबें भी लिखीं थीं। तो वह उसी दिन अरेस्ट हुये थे सन् 42 में जिस दिन मैं हुयी थी।

प्रश्न :– अच्छा, ये श्री शर्मा जी?

उत्तर :– श्री शर्मा जी ये चांदीवाली कोठी यहाँ कहलाती है। पालीवाल पार्क के पास जैसे ही सुना, पुलिस आ गई है, श्री राम शर्मा भारी बदन के थे तो उन्होंने झटपट जनानी धोती पहन कर घूंघट मार के आटा गूंथने लगे। इतना भारी भरकम पुरुष, आटा गूंथे, धोती पहने तो अन्दाजा तो लग ही जाता है और ये पूर्णिमा जी सास बन गई पतली दुबली लम्बी तो थीं ही। तो उन्होंने कहा कि हमारी बहू है। कि बहू है तो उनका मुंह यूँ खोल दिया, तो शर्मा जी थे तो एक चांटा भी मारा तो उनका एक कान भी खराब हो गया। उसके बाद उनको नजर बन्द कर दिया गया, कोई केस साबित हुआ नहीं। एक लड़की है उनकी उद्‌यन। उनका एक लड़का है। वह पत्रकार है। एक लड़का रमेश शर्मा है, वह भी प्रोफेसर रहा है।

प्रश्न :– हाँ, वह कश्मीर विश्वविद्यालय में। उसमें हिन्दी के विभागाध्यक्ष रहे?

उत्तर :– हाँ। और कमला शर्मा उनकी लड़की है, वह हमारे साथ जेल में रहीं।

प्रश्न :– अच्छा माता जी आपकी जो वीणा जी हैं, उन्होंने भी स्वतन्त्रता संग्राम में भाग लिया था?

उत्तर :– हाँ। ये तो पैदा हुयी थीं वहाँ।

प्रश्न :– अच्छा जेल में?

उत्तर :– हाँ।

प्रश्न :– ये किस जेल में पैदा हुयीं थीं?

उत्तर :– ये ऐसा हुआ कि जेल में नहीं रखते हैं गर्भवती को, तो इन्होंने हमको एस.एन. हास्पिटल भेज दिया।

प्रश्न :– सरोजनी नायडू?

उत्तर :– हाँ सरोजनी नायडू है। उस समय कौन सा कहलाता था, हमें तो याद नहीं है। तो इस अस्पताल में भेज दिया। हमने उनसे कहा। वहाँ एक मिसेज तिलक थीं डा०। उन्होंने हम से कहा, मिसेज मिश्रा! आप परेशान न हों आपका केस मैं करुँगी और वहाँ जो एंग्लो इण्डियन नर्स थी। वह अपने को अंग्रेजों की अम्मा समझती थी। वह बड़े रौब में रहती थी तो एक बार वार–फण्ड के लिये चन्दा करती हुयी, मिसेज तिलक ऊँट पर से गिर पड़ी। उनका फ्रेक्चर हो गया तो वह तो छुट्टी पर चली गयीं। अब कोई लेडीज डाक्टर नहीं। मेरे पास आई एंग्लोइण्डियन नर्स बोली। अब आपका पुरुष डा0 केस करेंगे। मैंने कहा, मैं पुरुष डा० से केस नहीं कराऊँगी, तो फिर मैंने एक लम्बा चौड़ा तार डी. एम. को भेजा और मैंने कहा, या तो दो तीन दिन के लिये अन्दर मुझे सुरक्षित स्थान पर पहुँचा दीजिये या जेल भेज दीजिये। अगर पुरुष डाक्टर केस द्वारा ट्रीटमेन्ट की नौबत आयेगी, तो मैं कमरे का दरवाजा बन्द कर लूँगी।

प्रश्न :– तो ये सन् 42 का किस्सा था?

उत्तर :– ये सन् 43 का। तो मैंने कहा, मैं बन्द कर लूँगी और इसके लिये आप जिम्मेदार होंगे।

प्रश्न :– अच्छा ये 42 वाले आन्दोलन में आपको कितने महीने की सजा हुयी थी?

उत्तर :– दो साल की एक में हुयी है। हमारे सर्टीफिकेट में लिखी हुयी है और छः महीने की एक में हुयी है। दोनो साथ–साथ चली थीं।

प्रश्न :– अच्छा धन्यवाद माता जी।

आचार्य दीपंकरशास्त्री

मेरा बचपन का नाम केवड़ा नन्द है और 1918 में मेरा जन्म हुआ था। मेरे पिता जी का नाम ऋषिकेश शर्मा था। मैं कुछ कारणों से 12 वर्ष तक की उम्र में कुछ पढ़ नहीं पाया। अनिवार्य कारण यही था कि परिस्थितियां ठीक नहीं थी, वातावरण भी ठीक नहीं था, पढ़ने लिखने का। लेकिन पता नहीं क्यों, मैं बार बार पढ़ने के लिये लालायित रहता था और मुझे निराश होना पड़ता था। घर बैठ नहीं सकता था तो जमुना के किनारे मैंने चरवाहा का जीवन 12 वर्ष तक व्यतीत किया। 12 वर्ष की आयु में एक दुर्घटना हुई और मैं अपना दायां पांव गवां बैठा। सिविल हास्पिटल में आपरेशन हुआ, जब मैं लौटा तो मैंने ये निश्चय कर लिया कि अब पढ़ने के अलावा कोई दूसरा चारा नहीं है। पर मेरे पिता दूसरी बात सोचते थे, वो सोचते थे अपंग होने के कारण ये पढ़ नहीं सकता। मेरे बाबा ने मेरी मदद की और वो मेरे पिता से बोले कि इसको पुण्डरीगांव में छोड़ आओ। वहाँ जो पण्डित पढ़ाते हैं वह हमारे ही पिता की पाठशाला में पढ़े थे। मेरे परबाबा संस्कृत पाठशाला में पढ़ाया करते थे। वो मुझे गांव छोड़ आये। छः महीने में मैंने प्रारम्भिक हिन्दी पढ़ी, संस्कृत पढ़ी और प्रारम्भिक शिक्षा पढ़ी। छः महीने में सब कंठस्थ हो गया तो उन पण्डित ने मेरे पिता को बुलाकर कहा कि मैं इतना ही पढ़ा सकता हूँ। आप इसको ले जाइये । और ये ग्रामों में जैसा पुरोहितों का काम होता है वैसा ही कर सकता है। लेकिन मुझे वह सब नहीं करना था तो आखिरकार जब मैं 13 साल का हो गया तो मैं बाबा को मना के रात के 1 बजे घर से निकला और हरिद्वार आ गया। हरिद्वार में मैं पण्डित नंददेव शास्त्री जी से मिला। ये सन् 1931–32 की बात होगी वहाँ दो चार महीने पढ़ा। फिर मैं अमृतसर चला गया। मैं वहाँ लक्ष्मी नारायण मन्दिर में रहा, जहाँ पर वाचस्पति शास्त्री थे। उनसे मेरा सम्पर्क हुआ, उनकी मैं सेवा करता था और वो मुझे प्रारम्भिक ज्ञान पढ़ाते थे। और वहाँ हिन्दू डिग्री कालेज में जो संस्कृत विभाग था उसके नेक चन्द्र शास्त्री से मुलाकात करवायी। वहाँ मैंने प्रयाग की परीक्षा दी और उस परीक्षा में मैं पूरे पंजाब में नम्बर एक रहा। इस तरह 16 रुपये स्कालरशिप मेरी दो वर्ष की बंध गयी और ब्रह्म महाविद्यालय के अधिवेशन के लिये लाहौर से मेरा एक पत्र आ गया और ये कहा गया कि आपको दो साल के लिये वहाँ एडमीशन हो जायेगा। मैं फिर वहाँ चला गया। वहाँ मैं दो तीन महीने मुश्किल से रहा, इसलिये कि दो साल में विशारद करनी पड़ती थी। संस्कृत की और पुस्तक मैंने देखी। वहाँ आठ–दस महीने की पढ़ाई थी तो सोलह रुपये के लालच में दो साल खराब करूँ। ये मेरे लिये सम्भव नहीं था। आखिर मैंने उसका मोह छोड़ा और चल दिया। मैं जिस ट्रेन से बैठकर बनारस जा रहा था, उस ट्रेन में मुझको एक सज्जन मिले, वह जा रहे थे कानपुर। वह बौधिस्ट थे। गुरुकुल कांगड़ी महाविद्यालय के वेदालंकार थे। उन्होंने कहा कि मैंने एक बौधिस्ट संस्था खोली है और पिता ने उस जमाने में दो ढाई लाख रुपये बहुत बड़ी रकम थी, वह लगा के संस्था खोली है। आप वहाँ पर मेरे साथ चले। मैं उनके चक्कर में आ गया। वहाँ मेरे 2–3 महीने खराब हुए। लेकिन मुझे महसूस हो गया कि भाषण बाजी करने के अलावा कोई ठोस ज्ञान की बात नहीं है और कुछ न मिलेगा। चला था बनारस के लिये और बीच में अटक गया था। 4 महीने खराब किये और अंत में, मैं फिर वहीं चला गया। बनारस चला गया। यह बात होगी 1933–34 के आस–पास की। वहाँ से मैं सीधा आर्य समाज मन्दिर में चला गया, बहुत अच्छा मन्दिर था। वहाँ एक आत्मानन्द शर्मा नामक ब्रह्मचारी थे, जो नहा–धो रहे थे, अपने कपड़े सुखा रहे थे। सफेद

दाढ़ी थी। मैं उनके व्यक्तित्व से बड़ा प्रभावित हुआ। बात पूछी, कहाँ से आ रहे हो? मैंने कहा जी, मैं लाहौर से आया हूँ। मैंने कानपुर का नाम ही नहीं लिया। लाहौर तो विद्या का बहुत बड़ा सेंटर था। वह बोले, लाहौर, तो दूसरा बनारस है तुम उसे छोड़ कर क्यों आये हो। मेरा काम नहीं चला वहाँ कारण बताया तो वह बहुत संतुष्ट हुए। उन्होंने फिर मुझे रहने की व्यवस्था एक आर्य छात्रावास देकर की। किसी दानी ने अपना मकान आर्य विद्यार्थियों को रहने के लिऐ छोड़ दिया था। उसी छात्रावास में एक कमरा मिल गया। रहने की समस्या हल हो गयी, लेकिन नित्यानन्द वेद विद्यालय आर्य समाज की ही एक संस्था थी। वहाँ मैंने एडमीशन ले लिया। उन्होंने ब्रह्मचारी जी से करवाया। वहाँ एक पंडित धुन्नीराज शास्त्री थे महाराजे। महाराष्ट्र के बड़े काबिल आदमी थे। उन्होंने मुझे कहा कि आप मध्यमा का इम्तहान दो। दस महीने में सम्पूर्ण मध्यमा की तैयारी करनी थी। सम्पूर्ण मध्यमा करने के लिये, तीन पण्डित चाहिए थे। पढ़ाने के लिये कोई व्याकरण पढ़ायेगा, कोई साहित्य पढ़ायेगा, कोई दूसरी चीज पढ़ायेगा। वह बड़े कृपालु थे। उन्होंने कहा कि व्याकरण तुम्हें मैं पढ़ाऊँगा, साहित्य और दर्शन दूसरे पण्डित पढ़ायेंगे। बहरहाल मेरी व्यवस्था ठीक हो गयी। मेरे सामने मुख्य कठिनाई आर्थिक थी, वह मैंने चोरी की। उनसे नहीं बताया कि, मेरा कोई साधन नहीं है। मैंने सोचा कि ये बेचारे मेरा पढ़ाई–लिखाई का इन्तजाम कर रहे है, खाने पीने का भी करेंगे तो भारी पड़ जायेगी। दो तीन महीने में मेरे पास पन्द्रह रुपये थे। मेरे पास जब मैं वहाँ गया, दो रुपये मेरा खर्चा था। तो दो रुपये में मुझे अरण्डी का तेल लाना पड़ता था। तो छः आने, सात आने, आठ आने खर्च होता था। बाकी डेढ़ रुपये में अपना गुजारा करता था। कभी चने लेकर खा लिये, कभी रोटी। इस तरह मेरा पेट खराब हो गया। जब मैं बहुत दुबला हो गया तो एक दिन पण्डित बामाचरण भट्टाचार्य वहाँ पढ़ाते थे। वह बोले कि तू दुबला कैसे होता चला जा रहा है। फिर मैंने सारी स्थिति बता दी थी कि एक डेढ़ रुपये में मुझे गुजारा करना पड़ता है, जो हो नहीं पाता है, थोड़ा भोजन भी ना मिले तो शरीर में जान कहाँ से आये तो उन्होंने मुझे राजा बल्देव दास बिरला, जो कि घनश्याम दास ज़ी बिड़ला के पिता जी थे, उनके यहाँ श्रीमद्भागवत सुनाने के लिये लगा दिया। क्योंकि मैं जन्म–जात साहित्यिक कवि था, संस्कृत जिस क्लास में पढ़ता था, उससे कठिन संस्कृत में कविता लिखता था तो लोग अचम्भा करते थे कि ये कैसे करता है। श्रीमद्भागवत काव्य मैं बहुत आत्मविभोर होकर उनको सुनाता था। एक महीना हुआ तो उन्होंने 150 रुपये मुझे दिये वो 150 रुपये लेकर मैं आश्रम चला आया। इतनी बड़ी रकम मैंने देखी नहीं थी। आज के हिसाब से 1500/– रुपये बैठती है। मैंने कभी देखी नहीं थी, मैंने कहा, इसका मैं क्या करुँगा। तो मैंने कही कि मैं 10/–रुपये ले सकता हूँ। मेरी रिक्वायरमेंट 10/–की। भूख की भी पूर्ति हो जायेगी। बाकी सब ठीक है। तो बोले, दस देना तो मेरे लिये तौहीन है, हम राजा बल्देव दास बिरला हैं तो कम से कम पचास लो। तो हमने गुरुजी को भेज दिया कि आप जाओ, आप ले लो, जो कुछ ले सकते हो। वह पचास रुपये ले जाते थे वो और विद्यार्थियों को बांट देते थे। मैं दस रुपये ले लेता था, लेकिन दस रुपये मेरे लिये बहुत थे। परिणाम यह हुआ कि मेरी सेहत भी ठीक होने लगी। मेरी पढ़ाई भी ठीक होने लगी। इस बीच मेरे कमरे में, एक पाण्डेय जी अभिभावक थे, उन्होंने बिजली की व्यवस्था ठीक कर दी थी। पढ़ाई अच्छी होने लगी, सम्पूर्ण मध्यमा में मेरा नम्बर तीसरा आया। छात्रवृत्ति मिल गयी, करीब 16–17 रुपये की रकम थी, संतुष्ट हो गया पढ़ाई होने लगी। मैं व्याकरण शास्त्री नहीं करना चाहता था, इसलिये कि मुझे कोई आवश्यकता नहीं थी क्योंकि मेरा साहित्यिक स्वभाव ही

था। तो उसमें मैं माथापच्ची क्यूँ करुँ। जो कठिन विषय है, वहीं करना चाहिये। तो संयोग की बात है 1935 में राहुल सांकृत्यायन वहाँ आ गये। आर्य समाज मन्दिर में उन से मिलने चला गया। तो आत्मानन्द ब्रह्मचारी बोले बड़ा मेधावी छात्र है, बड़ा अच्छा है, बड़ी प्रशंसा की। वह मुझसे बात करने लगे। मेरी बात से वो संतुष्ट हो गये। उन्होंने कहा, बच्चे! क्या पढ़ते हो? मैंने कहा किसी भाषा का प्रवेशद्वार। तो कहने लगे तो बच्चे तू जिन्दगी भर प्रवेशद्वार पर ही खड़ा रहेगा। मैंने कहा, फिर मैं क्या करुँ। उन्होंने कहा और कोई विषय लो, दर्शन–शास्त्र लो। ये करो वो करो। तो मैंने विषय बदल दिया। मैंने व्याकरण शास्त्र की जगह न्यायशास्त्र ले लिया। लेकिन वहाँ भी दिक्कत वही थी। दो किताब थीं, जो साल भर में पढ़नी थी। तो दो ही किताब क्या पढ़ते हो। बामाचरण ने सन् 1936 में, मेरा एडमीशन कलकत्ता विश्वविद्यालय में सिफारिश करके करा दिया। तो रहता, तो मैं दो ही महीने वहाँ था, कलकत्ते में मेरी हाजिरी भरी जाती थी। अब वो उनको कोई तीन तिकड़म थी, मैं इस तरह से दो विश्वविद्यालयों का विद्यार्थी हो गया। वाराणसी संस्कृत विश्व विद्यालय का विद्यार्थी और कलकत्ता विश्वविद्यालय का भी। वहाँ से मैंने संस्कृत वेदान्त मीमांसा की और वाराणसी से मैंने व्याकरण न्याय शास्त्र कर लिया। मैं अच्छा कवि था, अच्छा वक्ता था, अच्छा लेखक था, बहुचर्चित था। बनारस के 7 हजार विद्यार्थियों में दो–चार में मेरी गिनती थी। जिन्दगी का ठीक नहीं था। जब छुट्टी होती थी, घूमने चला जाता था। सारा हिन्दुस्तान मेरा घूमा हुआ है। क्योंकि सब अपने घर चले जाते थे। मेरा कोई घर नहीं था। पैसा काफी मिल ही जाता था। पांच–सात रुपये महीने जोड़ूँ तो 100–150 रुपये जुड़ जाते थे। उस समय 100–150 रुपयें में कहीं भी घूम आओ। तो यूँ मेरी जिन्दगी चली। मैं आखिरी इम्तहान देकर लौटा, ये 1942 की बात है। उस वक्त, उस साल मुझे गंगा–सागर घूमना था। गंगासागर तो मैं चला गया, घूम भी आया, देख भी आया लेकिन मैं बड़ा उदास था। इधर गांधी जी के बयानात आ रहे थे, भाषण आ रहे थे। 1942 के तूफानी दिन थे, सारे देश में आजादी की लहर थी तो मैं उस समय खोया खोया सा रहता था। मेरा बदले हुये स्वभाव देखकर मेरे साथी, मेरे गुरुजन मेरे पड़ोसी सभी चकित रहते थे, इसको हो क्या गया है, लेकिन एक दिन अपने वार्डन पाण्डेय जी से, जो राष्ट्रवादी थे, मैंने कहा अब पढ़ूँगा नहीं और 9 अगस्त को हमने जुलूस निकाला जो बहुत अच्छा निकला। 9 अगस्त का जुलूस हमारा बहुत ही अच्छा और 10 का भी अच्छा था। परिणाम यह हुआ कि मैं स्पीकर तो था ही लेकिन पहले दार्शनिक विषय का था, लेकिन राजनैतिक भाव लेकर जब भाषण देने लगा तो लोगों में आग लग जाती थी, स्वतंत्रता के लिये। फिर तो मैं बनारस से निकल गया। हालांकि बनारस से निकलने के बावजूद मैंने बनारस नहीं छोड़ा। श्री धर के नाम से काम करने लगा था। एक दिन पं० मदन मोहन मालवीय जो मेरे मित्र थे वो "आज" अखबार में सम्पादकीय का कार्य करते थे। मैं उनके यहाँ ठहरा हुआ था तो उससे पहले एक घटना यह हुई कि 13 तारीख से मैंने एक 'रणभेरी' अखबार निकालना शुरु किया था, दो पेज का बस। इसको मुझे मजबूत बनाना था।

हैंड प्रिंट से हम दो सौ चार कापी निकाल लेते थे तो उससे बनारस में हलचल मच गयी। तो हमारी कार्य करने की शैली ऐसी थी कि जहाँ हम उसको छापते थे, दूसरी जगह चले जाते थे। इस तरह से हमने आठ दस दिन वो अखबार निकाला और बहुत कामयाब हुये। अब हमारा पीछा होने लगा। शैली से उन्होंने अन्दाज लगा लिया कि ये उसी का दिमाग करता है। उसी की तलाश में वो लोग

मदन मोहन मालवीय के मकान पर आये। तो चारों तरफ मकान घेर लिया। तो वहाँ दूसरी मंजिल पर एक छोटी सी खिड़की थी, नीचे गंगा बह रही थी, अगस्त का महीना था, बढ़ी हुई थी और मैंने उसमें छलांग लगा दी, मेरी परेशानी पांव की इस लकड़ी को सम्भालने की। उन्होंने सोचा, साला डूब गया होगा। अथाह सागर सी हो रही गंगा। सिपाही कोई मुसलमान था। उसने गोली चलाना शुरु कर दी, इसलिये नहीं लगती थी कि बीच में दीवार थी, मैं तैर कर आगे निकल गया था। एक मैं डोंगी के पास में सोया था। उसने कहा कौन है? मैंने कहा, दाड़िक आदमी हूँ। उसने कहा, तू दाड़िक आदमी है, तेरे ऊपर गोली चल रही है। मैंने कहा "हाँ" तो उसने मेरी मदद की और मैं डोंगी पर बैठ गया तो मैने कहा, तू मेरी लकड़ी ले ले, तो उसने लकड़ी संभाल ली और देखा कि मैं अपाहिज हूँ तो उसने कहा, हे! परमात्मा इन अंग्रेजों का नाश हो, ये अपाहिज आदमी को भी नहीं छोड़ते। आजादी की चाह कितनी गहराइयों तक थी, लोगों के मन में इसका अन्दाजा लगाया जा सकता है। गांधी जी इतने गहरे बैठे थे, सब के मन में खैर.......वो मुझे गंगा के उस पार छोड़ आये। वहाँ बहुत सी निषादों की झोपड़ियां थीं, उनमें से वो भी एक निषाद था। रामनगर में हमारे साथी थे, वहाँ उसके यहाँ गया। फिर वहाँ से घूमता फिरता मैं करीब 7 सितम्बर तक मुरादाबाद, इलाहाबाद और जलेश्वर रोड और राजा अवागढ़ से मिलकर और अर्जुन सिंह भदौरिया की तलाश में घूमता रहा, फिर मैं हरिद्वार चला गया। फिर मैं वहाँ से दिल्ली चला गया। वहाँ दो तीन दिन चक्कर काटके, मैं जानता था, मेरा वारंट भी है, गिरफ्तारी का इनाम भी है, लेकिन मैं पकड़ा नहीं गया। फिर अरुणा जी से मिला। अरुणा जी से इसलिए मिला कि हमारा कोई नाम नहीं था। हम कोई बड़ा काम करें तो कोई यकीन करता। हमें किसी नाम वाले की जरूरत थी। तो वह हमें मिल गयीं, फिर, मैंने कमेटी बनायी। कमेटी में मैं था और रमेश पालीवाल था आगरे के। एक ए.डी. नारायण थे केरल के, और एक अच्युत वर्धन थे महाराष्ट्र के, और एक मेहता जी थे गुजरात के। अरुणा जी इसकी चेयरमैन थीं। मेरे जिम्मे छोड़ा गया पंजाब, राजस्थान और सिंध के नार्थ–वेस्ट सीमांत प्रदेश। इसलिये कि थोड़ी बहुत बोली, मैं समझ सकता था। मैं उसी स्थिति में फरार होकर सितम्बर से लेकर सितम्बर, अक्टूबर, नवम्बर, दिसम्बर से जनवरी, फरवरी, 23 मार्च तक मैं ऐसे ही रहा और मैंने सियालकोट का दौरा किया। मुल्तान गया, थानेवाल गया, पेशावर गया। दो बार सरगोधा गया और कुल 323 लोगों की टुकड़ी बनवा के "झण्डा ऊँचा" के नारे लगवा के लाहौर में अपने आप को गिरफ्तार करवा दिया। मैं तोड़ फोड़ पर कोई यकीन नहीं करता था, आग लगाने पर मेरा यकीन नहीं था। लोगों के मार–काट पर मेरा यकीन नहीं था, गांधी वादी था और 23 मार्च 1943 में अपने 8 महीने के फरारी जीवन के बाद, मैं लाहौर में गिरफ्तार हो गया। उस समय मेरा नाम आचार्य दीपंकर था। इस बीच कई नाम रक्खे, जब गिरफ्तार हुआ तो आचार्य दीपंकर नाम से ही गिरफ्तार हुआ। फिर 45 दिन विभिन्न हवालातों में बहुत यातनाओं का सामना करना पड़ा और जब मैं जेल गया, उस वक्त स्ट्रेचर पर लाया गया था। मैं बोल नहीं सकता था। मेरे बचने की कोई उम्मीद नहीं थी। इतना मुझे सताया गया था। फिरोजपुर कैन्ट जेल में आया, जहाँ दो आदमी मेरठ के थे, दिल्ली के बहुत से थे, हरियाणे के बहुत से थे, पंजाब के थे। साढ़े तीन सौ आदमी थे। तो उन्होंने मुझे बचा लिया था। मेरे नाम से सब परिचित थे। हालाँकि अब तक शक्ल किसी ने देखी नहीं थी। सब कहते थे कि एक पांव का हीरो है और आजादी लड़ाई लड़ रहा है। उन्होंने हमारी बहुत सहायता की। तो इस तरह लम्बे अरसे की चिकित्सा के बाद बच गया। फिर वहाँ मुझे मालूम हुआ कि हम दस पन्द्रह

आदमी बहुत वी.आई.पी. हैं। हमें 20 रुपये महीना किताबें–अखबारों के लिये, 15 रुपये रोजाना हमारा राशन का भत्ता है खाने पीने का। ऐसे 350 आदमियों को बाकी 7 आने रोज का राशन मिलता था। इस बात की हमने हड़ताल की 21 दिन की हड़ताल हुई। 21वें दिन मैंने पानी बन्द कर दिया तो उससे भयभीत हो के सरकार पर दबाव पड़ा और 14 आना प्रति दिन का राशन हो गया। मैंने हड़ताल छोड़ दी। लेकिन दुर्भाग्य से मुझे फिर टाइफायड हो गया। इलाज के वास्ते पहले मुझे लाहौर और फिर कहीं और भेज दिया। कोई दूर जगह थी, लेकिन एम्बुलेंस से रात में भेजा गया। महीना डेढ़ महीना के बाद मैं ठीक हो गया। गवर्नर ने ये आदेश दिया कि ये जहाँ रहेगा कुछ ना कुछ उपद्रव जरूर करेगा। इसे ऐसी जगह भेज दो जहाँ की ये भाषा न जानता हो, न कोई बात होगी, न बात आगे बढ़ेगी, अकेला पड़ा रहेगा, जितना खर्च आयेगा ठीक है। 150 कैदी थे वहाँ, भेज दिया था। वहाँ कैदियों को आदेश यह था कि कोई मेरे से बात नहीं करेगा। वहाँ जेल में मेरे अलावा कोई राजनैतिक बन्दी नहीं था और सारे के सारे कातिल थे। कोई चोर था या कातिल था। कोई डकैत था या किसी अपराध में जेल आया था। खाना बनाने वाला खाना बना देता था। मगर मेरे से बोल नहीं सकता था। कपड़ा धोने वाला कपड़ा धो देता था, मैं अगर बात करना चाहूँ तो वह बात नहीं करता था। ऐसे ही पांचों आदमी आते थे, अपनी–अपनी ड्यूटी करके चले जाते थे। अखबार वाले से कहा, अखबार लाकर देना, गेट से अखबार लाकर दे दिया। बात खतम। आखिर मैंने एक दिन, एक मशवकती से कहा भाई मेरे बोलने पर तो पाबंदी नहीं है। तुम्हारे बोलने पर पाबन्दी है। मेरी बात सुनो और इशारे से उत्तर दो। मैंने उससे पूछा कि तुम जेल में कैसे आये तो उसने इशारे से बताया कि एक आदमी मारा था, उन पांचों से मैंने पूछा सवाल तो पांचों ने यहाँ बताया कि एक आदमी मारा था। तो मैंने अन्दाजा लगाया कि सारे कैदी आदमी मार के आये हैं। फिर वह धीरे धीरे चोरी से बोलने भी लगे सब हालात मालूम होने लगे तो एक दिन मैंने बल्लोच के कैदी से कहा। बल्लोच और सिन्ध लाहौर बार्डर पर है तो मैंने कहा बल्लोच जाति खतम होने वाली है। तब तक मेरी 25–26 वर्ष की उम्र हो ही चुकी थी लेकिन वह ऐसा सोचते थे कि ये कोई भविष्य वक्ता साधू सन्त है और इसने श्राप दे दिया है कि बल्लोच मरेंगे। बल्लोच जाति समाप्त हो जायेगी तो पूरी जेल में तहलका मच गया। यह कहना गलत है कि हिन्दी तब सब जगह बोली समझी जाती नहीं थी, उस समय भी समझी बोली जाती थी। उन्होंने कहा तुम, तो बोला बल्लोच सब मारे जायेंगे मैंने कहा हाँ सब मारे जायेंगे। तो वो जो मशवकत का काम करते उनमे करीब 30–40 बल्लोच कैदी थे। उन्होंने कहा मलंग से पूछो। ''मंलग'' वहाँ फकीर को कहते हैं। बल्लोच की भाषा में'' क्या हमारे बचने का कोई तरीका है तो उसने कहा साहब सब कैदी कहते हैं कि क्या बल्लोच जाति किसी तरह बचेगी? मैंने कहा, हाँ बचेगी और जरूर बचेगी। फिर मैं रात के 9 बजे बैरक के सिरे पर चढ़ गया, बैठकर भाषण दिया मैंने न तो गांधी का नाम लिया, न आजादी की चर्चा की, ना देश की चर्चा की, मैं कौन हूँ इसकी चर्चा भी नहीं की। मैंने सिर्फ एक ही बात कही कि बल्लोचों में जो ये बात पैदा हो गयी है कि आदमी–आदमी को मारते हैं इसका नतीजा क्या होगा, मैं बल्लोचिस्तान की बात सुना रहा हूँ कि तुम एक के बाप को मारोगे वो तुम्हारे बेटे को मारेगा, तो ये जो मैंने कहा कि बल्लोच जाति का खात्मा होने वाला है, ये कोई भविष्यवाणी नहीं की है ना कोई श्राप दिया है। ये जो तुम कर रहे हो उसका स्वाभाविक नतीजा है कि धीरे धीरे तुम्हारा संहार हो जायेगा और इसका एक ही उपाय है कि तुम लड़ना बाहर बन्द करो। लेकिन अब तुम बाहर जा नहीं सकते।

अपने बच्चों को समझा नहीं सकते। तुम लड़ते लड़ते अन्दर आये यहाँ लड़ते हो, रोज तुम्हारे मुकदमा चलते हैं और किसी की सजा यदि 14 वर्ष है तो वह बढ़कर 20 वर्ष हो जाती है तो क्या फायदा हुआ। परिणाम यह हुआ है कि ढाई महीने बाद उनमें लड़ाई–झगड़ा बन्द हो गया। एक दिन ऐसा हुआ कि मेरे पास कोई किताब पढ़ने वढ़ने को नहीं था। मैंने उस बल्लोच से कहा, यहाँ लाइब्रेरी है वहाँ से कोई एक किताब ले आओ तो बल्लोच भी अनपढ़ था लाइब्रेरी का लाइब्रेरियन भी अनपढ़ था। तो उन्होंने पांच–छः मोटी–मोटी किताबें गठरी बांध के मेरे पास भेज दीं। उन किताबों में कौटिल्य का अर्थशास्त्र एक किताब थी। अंग्रेजी में, ऊपर संस्कृत, नीचे अंग्रेजी में किताब देख कर हैरान रह गया मैं, किताब यहाँ कैसे आयी, बहरहाल यह मैंने बहुत जानना चाहा। किसी ने बताया नहीं कि कैसे आयी लेकिन मेरे लिये तो एक दुर्लभ पुस्तक आ गयी। मेरी मनपसन्द पुस्तक आ गयी। मैं उसी को पढ़ता रहता था। अच्छा अब वह ढ़ाई हजार पुरानी भाषा थी तो उतनी पुरानी भाषा समझने में दिक्कत होती तो नीचे फुट नोट थे अग्रेंजी में। वह पुस्तक मेरे लिए बहुत ही उपयोगी साबित हुई तो मैं उसी में डूबा रहता था। तो 24 घण्टे उपन्यास जैसा आनन्द आता था पढ़ने में। एक दिन वह सुपरिन्टेण्डेन्ट आया कि हम आपका हुकुम आया कि वजन लेंगे तुम्हारा हमने कहा ले लो तो मेरा दो ढाई पौंड वजन बड़ा हुआ था। जब मैं लाहौर से आया, एक तो मैं वहाँ से बीमार आया था। यहाँ मैं ठीक हो गया था इसलिये वजन बढ़ गया। दूसरे वह सोचते कि एकान्त में भुगतेगा। एकान्त स्वयं सजा होती है, जिसमें आदमी का वजन घटता है तो मुझे वहाँ ऐसा कोई दुःख था नहीं तो वो मुझसे बोला कि ढाई तीन पौंड वजन आपका बढ़ा है, वह कैसे बढ़ा। मैने कहा मैं एकान्त में हूँ। मौर्य साम्राज्य का संस्थापक तो मेरे साथ जेल में बन्द है। विष्णु गुंप्त, कौटिल्य की पुस्तक पढ़ता रहता हूँ। मैं अकेला कहाँ हूँ। वह बहुत हँसा। उसने कहा पुस्तक दिखाओ। मैंने पुस्तक दिखाया, फिर वह बोला हम आपका बड़ा एहसान मानते हैं, जेलर साहब बता रहे थे कि अब तो मुकदमें आते नहीं हैं और कैदियों ने लड़ना बन्द कर दिया है। आपने क्या इन पर जादू करा है मैंने कहा, मैंने क्या जादू किया है, मैंने तो इनको समझाया था जो इनके समझ में आ गयी इनके अक्ल में आ गयी। इसमें मेरा क्या चमत्कार है। इनकी अक्लमन्दी की बात है। बोले ये तो बहुत अच्छा है, आप जब छूट जाओगे मैं छुड़वा भी सकता हूँ। मैं बहुत बड़ा अफसर हूँ। आप बलोचिस्तान में एक आश्रम बनायें और मैं आपको एक हजार एकड़ जमीन दूंगा। वहाँ जमीन की कमी नहीं थी, बलोचिस्तान में। मैंने कहा जब छूटेंगे तब देखेंगे। जब आजादी आयेगी तो कुछ सोचेंगे। अभी से क्या योजना बनायें। अभी तो हम जेल में है, आप भी हैं। हम कैदी हैं। आप सुपरिटेण्डेन्ट हैं। ऐसे ही बातचीत चलती रही। छः–सात दिन बाद ही हुकुम आया कि इसका तबादला करके इसे मुल्तान भेज दो। लेकिन मुल्तान की बजाय लाहौर भेज दिया, वहां मुझको ये लाभ हुआ कि सरदार भगत सिंह के साथ मेरी भेंट हुई, जिनको फांसी हुई थी। मगर आजीवन कारावास हुआ था। पंडित नंदलाल शर्मा आदि वह चारों वहीं रह रहे थे। तो 25–26 वर्ष का इफ्तिखारूद्दीन भी थे। जो पंजाब कांग्रेस कमेटी के पहले अध्यक्ष थे। उसी में मौलाना दाउद गजनवी थे। वही लाला देशबन्धु गुप्ता भी थे जो बहुत बड़े नेता थे, कांग्रेस के। वह रहने वाले दिल्ली के थे। वहाँ लाला पण्डित नेकीराम शर्मा भी थे। पण्डित भगवत दयाल शर्मा जो कभी मेरे साथ पढ़ते थे, बनारस हिन्दू विश्व विद्यालय में वह भी मुझे वहाँ मिले। मैंने सोचा वाह यहाँ पूरा परिवार जुड़ गया। जेल से छूटा तो मैं बनारस चला गया। वहाँ मेरी पुस्तकें पड़ी थी। बड़ी बेशकीमती किताबें, मैंने सोचा वह सब सड़ गल

गयी होगी। उनको सम्भाला फिर मैं बाबू सम्पूर्णानन्द जी से मिला। वह बोले कि अब तो साल दो साल में आजादी आने वाली है। अब किसी चक्कर में मत पड़ो। तुम दुबारा जेल जाओगे मैंने कहा मैं अभी भी तो जेल में हूँ। अब भी तो नजरबन्द कहलाता हूँ। मैं उसी जेल में सुखी हूँ। मगर उन्होंने मुझे समझा बुझा के वापस भेज दिया। मैं फिर वहाँ चला आया। ये नजरबन्दी मेरी मार्च 1947 तक चली और अगस्त 1947 को आजादी आ गई। और आजादी से कुछ महीने पहले तक नजरबंदी रही। मैं बनारस का था। फिर बनारस छोड़ कर मेरठ वाला हो गया। सेनानियों से मिलता जुलता था। फिर मैंने किसानों में काम करना शुरू कर दिया। सन् 1947 से लेकर सन् 57 तक ना कोई मेरा घर था, ना किराये का कोई कमरा था। एक किसान के यहाँ टाइम के अलावा दूसरे टाइम रोटी नहीं खाता था। किसी के यहाँ रूकता नहीं था। एक फकीर की तरह से, मैंने पूरे 10 वर्ष व्यतीत किये, लोग यह नहीं जानते थे कि ये किस जाति का है किस बिरादरी का है। कोई पूछता था कि आपकी क्या जात है तो मैं कहता मेरी कोई जात नहीं। यही चलता रहा। फिर कम्यूनिस्ट पार्टी ने मुझे गोरखपुर , बलिया, गाजीपुर काम करने के लिये भेज दिया, मैं वहाँ चला गया और ऐसे ही चलता रहा। यू. पी. किसान सभा का जनरल सेकेरेट्री हो गया। मैंने 16 लाख मेम्बर किसान सभा के बनाये। बड़ा संगठन खड़ा हो गया। उत्तर प्रदेश पी. डब्लू. डी. कर्मचारी संघ बनाया। 10 वर्षों में इतने संगठन खड़े किये। हमने बड़े–बड़े संगठन यू. पी. के स्तर के। ऐसे में ही एक बार फितूर सवार हो गया 1957 में चुनाव लड़ने का, मैं चुनाव लड़ गया और मेरे पास पैसा एक नहीं था, फार्म भरने के लिये। पैसे दूसरे से लिये फिर फटा हुआ फार्म लिया और वही भर दिया। लोगों ने मुझे चुन लिया, कांग्रेस के मुकाबले। मुझे एम. एल. ए. बना कर भेज दिया गया। फिर कांग्रेस वालों ने मुकदमा करके वहाँ से हटा दिया। हम तुम्हें यहां नहीं रहने देंगे। मै मुकदमा हार गया। मुकदमा हार के फिर दुबारा सुप्रीम कोर्ट में अपील की। उन्होंने भी मेरी अपील नहीं सुनी फिर खैर......... इलेक्शन–कमीशन ने मुझे चुनाव लड़ने की इजाजत दे दी। मैं दुबारा चुनाव लड़ा , फिर जीत गया। इस बार 15 हजार से जीता था तो इस तरह से मैं तीन बार विधान सभा का सदस्य हुआ और अब तक पचासों पुस्तकें लिख चुका हूं और हजारों लेख लिख चुका हूं और सामाजिक जिन्दगी से मेरा अटूट रिश्ता रहता है। मैं तीन बार विधान सभा में रहा। मुझे जीतने का भी अनुभव है, हारने का भी अनुभव हैं। मैं नहीं समझता कि देश की सेवा की जाय तो देशवासी नाराज होंगे। लेकिन आज जो राजनैतिक स्तर आ गया है। उसने राजनैतिक तृष्णा – पैदा कर दी है। नफरत पैदा कर दी है। आदमी को पैसा ही पैसा चाहिए। हमें तो समझ में नहीं आता है कि आखिर कितना पैसा जरूरी है, लेकिन संतुष्ट नहीं है आदमी।

श्री द्वारिकाप्रसाद महेश्वरी



प्रश्न :— श्री द्वारिका प्रसाद माहेश्वरी जी, मैं आपका संस्मरण टेप करना चाहता हूँ। मैं उत्तर प्रदेश राज्य अभिलेखागार से आया हूँ, आप अपना जीवन परिचय संक्षिप्त रूप में दें।

उत्तर :— डा० अमर सिंह जी एवं आपके साथ आये श्री जगदीश जी, मैं आपका बहुत आभारी हूँ कि शिक्षा विभाग से जुड़े हुये इस व्यक्ति को याद किया। ये तो वस्तुतः देश की सेवा का प्रश्न है और जब हम अतीत पर प्रकाश डालते हैं तो हमारे आँख के सामने अनेक ऐसे चित्र आते चले जाते हैं। जिन चित्रों की रेखायें चाहे हमने स्वयं बनायी हों या न बनाई हों। चाहे उसमें स्वयं हमने रंग भरे हों या न भरे हों लेकिन फिर भी किसी न किसी प्रकार हमारा योगदान चाहे वैचारिक रहा हो या क्रियात्मक शरीर से रहा हो चाहे और किसी अन्य प्रकार का रहा हो वह अवश्य रहा और उस नाते जो विचार भावना के लोग है, देश प्रेम से जुड़े हुए, उन सबका मैं आदर करता हूँ, नमन करता हूँ और मैं सोचता हूँ। सभी देश प्रेम के प्रति समर्पित हैं। आपने मुझसे पूछा है कि मै अपनी जन्म तिथि जन्म स्थान और शिक्षा के बारे में प्रकाश डालूँ। आगरा शहर से लगभग दस किलोमीटर दूर ग्वालियर रोड पर एक गांव है, जिसका नाम रोहटा है। उस रोहटा गांव में मेरा जन्म हुआ था, एक दिसम्बर 1916 में किसान परिवार में और वहीं से मैं आता जाता था आगरा पढ़ने के लिये। मेरी प्रारम्भिक शिक्षा गांव में ही प्राइमरी विद्यालय में ही हुयी। वहीं से मैंने दर्जा चार पास किया था और उसके पश्चात् आगरा में मिडिल स्कूल में पांचवीं दर्जा में दाखिल हुआ था, लेकिन मैं अस्वस्थ हो गया था, जिससे मुझे बीच में छोड़ देना पड़ा। फिर उसके सदर में एक प्राइवेट स्कूल था जिसे महाली सज्जन चलाते थे, मैं उसमें दाखिल हो गया और तब से मैंने हाई स्कूल की परीक्षा उस मैट्रिक मिशन हाई स्कूल से की और तत्पश्चात् आगरा कालेज से मैने इण्टरमीडिएट, बी.ए. और एम.ए. किया। सन् 42 में मैंने एम.ए. किया और 42 के बाद में मेरा जो चुनाव था, वह इलाहाबाद की एक प्रशिक्षण शिक्षा संस्था के गवर्नमेन्ट बेसिक ट्रेनिंग कालेज के लिये हो गया था। गवर्नमेन्ट बेसिक कालेज इलाहाबाद महात्मा गांधी की उस बेसिक शिक्षा योजना, बुनियादी योजना पर आधारित था। जिसके अन्तर्गत देश के विकास के लिये ये प्रस्ताव किया था कि हमारे बालकों को शुरु से तीन चीजों की विशेष रूप से शिक्षा दी जाय जो कि आजाद भारत में क्या भारत में वैसे भी तीन चीजें मुख्य हैं, वह क्या? एक तो खाना, एक कपड़ा तीन में एक है, आवास ये हरेक की जरूरत है मूलभूत आवश्यकतायें। उन्होंने कहा था चूँकि भारत कृषि प्रधान देश है तो शिक्षा का माध्यम कृषि या उससे जुड़े हुये विषय को। दूसरा अपने तन को ढकने के लिये, स्वयं अपने आप कपड़ों का निर्माण करें, कातें, बुनें विदेशी वस्त्रों का इस्तेमाल न करें और तीसरा यह था कि स्वयं अपने आवास की व्यवस्था करें तो इन तीन मूलभूत मानवीय्य आवश्यकताओं के आधार पर उन्होंने इस शिक्षा की योजना बनायी थी। इसलिये इसको बेसिक शिक्षा कहा गया। यानि मूलभूत आवश्यकताओं की शिक्षा बालकों को दी जाय। विशेष बात डा० अमर सिंह जी ये थी कि उन्होंने ये भी कहा था कि देखिये कितना देश प्रेम भरा था, सार्वजनिक चिन्तन था,

उनका कि जब हम अपने हाथ से बनी हुयी चीजों के विचार हो, तो उनके कपड़े पहनेंगे, खायेंगे, हम वैसे ही हमारे देश के प्रति लगाव होगा विचार होगा और जो विदेशी खानपान और रहन–सहन में रहते हैं, उनको आप चाहे कितना ही शास्त्री पक्ष दीजिये। लेकिन वह बात नहीं आ पाती जो देश की धरती से उपजे अन्य वस्त्र और आवास की मिट्‌टी से आती है। तो ये स्वयं ही हम लोगों में वैचारिक धरातल पर, शिक्षा के धरातल पर, देश प्रेम का एक बीजारोपण होता चला जाता था बालकों में। तो मैंने वहाँ पर ट्रेनिंग कालेज में सार पर जैसे बी.एड. की परीक्षा होती है, पहले बी.एड. नहीं होता था, एल.टी. की परीक्षा मैंने पास की और वहीं पर मैंने सन् 42 के बाद बोर्डिंग हाउस में रहता था, अब मैं उस घटना का चश्मदीद वर्णन करता हूँ कि सन् 42 में अगस्त 8 या 9 था, अब मुझे इतना याद नहीं है लेकिन ''करो या मरो'' का आन्दोलन छिड़ गया था। गांधी जी के कहने पर और इलाहाबाद में एक क्रान्तिकारी आ गई थीं और इलाहाबाद विश्वविद्यालय के लड़के एवं लड़कियां कचहरी पर, आपने तो कचहरी देखी होगी। वहीं, झण्डा लहराने के लिये हमारे विश्वविद्यालय के मतवाले विद्यार्थी, देश प्रेम के झुण्ड के झुण्ड निकले गाते हुये छात्रावास से। हाँलाकि हम तो थे गर्वनमेन्ट विद्यालय के विद्यार्थी, लेकिन फिर भी मन नहीं माना। वहाँ से निकले हम सब और कचहरी की तरफ चले गये। वहाँ हमने एक बड़ा दृश्य देखा और वह था इलाहाबाद विश्वविद्यालय के छात्र और छात्रायें सैकड़ों लाइन बनाते हुये और बड़े अनुशासित ढंग से कचहरी की तरफ चले आ रहे हैं और जब कचहंरी पर पहुँचे तो सामने से अंग्रेजों की फौज पुलिस और कोई अंग्रेज ही एस.एस.पी. था। उस समय तो वो सामने खड़ा हुआ था। उसने उनको रोका। वह चाहते यह थे कि कचहरी के ऊपर राष्ट्रीय तिरंगा झण्डा फहरायें, लड़के और लड़कियाँ यह चाहते थे। उन्होंने उनको चेतावनी दी, लेकिन लड़के नहीं माने और जब नहीं माने तो अन्त में तीन बार उन्होंने कहा, जो लड़कियां आगे थीं और लड़के पीछे थे। एक पूरी लाइन लड़कियों की आगे थी। उसने फायरिंग का आदेश दिया। जैसे ही फायरिंग का आदेश हुआ तो एक लड़की को यूँ करके जैसे ही गोली चलाई, पीछे एक लड़का खड़ा हुआ था, उसने एकदम उस लड़की को पीछे ले लिया और स्वयं आगे आ गया और उसको गोली लग गई और लड़का तत्काल वहीं पर धराशायी हो गया। उस लड़के का नाम हो सकता है मैं भूलरहा हूँ।

प्रश्न :– पदम सिंह था?

उत्तर :– हाँ–हाँ । लाल पदम सिंह।

प्रश्न :– वह रीवां डिस्ट्रिक्ट के रहने वाले थे?

उत्तर :– हाँ–हाँ वह था तो काफी वह हो गया। लेकिन फिर उन्होंने उसकी लाश लेने नहीं दी पुलिस वालों को और फिर उसको लेकर इलाहाबाद विश्वविद्यालय में लेकर गये और जो कुछ भी हुआ। तो ये मैंने देखा कि स्वयं किस प्रकार का जोश और राष्ट्र के प्रति बलिदान की भावना उन नौजवानों में थी। जिसको देखने के लिये हम गये और मेरे लिये ये ऐसी एक घटना थी जिसको मैं आज तक भूल नहीं पा रहा हूँ। मेरे सामने एक वह चित्र खिंचा हुआ है और तब मुझे लगा। ये देश इन भविष्य बालकों के हाथों में बड़ा सुरक्षित है, कोई ये न समझे कि जब ये स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी चले जायेंगे तो क्या होगा। नहीं इनमें वह रक्त है। चूँकि गांधी जी ने ऐसी शिक्षा योजना की व्यवस्था की थी, जिसकी जड़ें हमारे अन्दर राष्ट्र प्रेम की। खाना, कपड़ा, आवास सारा का सारा वह था। दूसरे मैंने देखा वहीं इलाहाबाद में ''करो या मरो'' के नारे की वजह से इलाहाबाद वीरान सा हो गया था

और तार भी टूट गये थे। ऐसा लगता था। बहरहाल ये दृश्य जो था, अपने में बहुत ही प्रेरक था और मेरे मन में आया कि क्या हम नहीं बन सकते स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी। लेकिन चाहे कुछ भी कह लीजिये, हम उस समय अपने को ऐसी स्थिति में नहीं पा रहे थे कि हम इसमें कूद पड़ें तो बहरहाल हमारी मानसिकता यह थी कि चाहे हम वैचारिक योगदान दें, चाहे कोई और योगदान दे, लेकिन हम योगदान दें। हमने वहां से साल भर बाद पास किया एल.टी. की परीक्षा। तो वहीं पर संयोग से लग गये सर्विस में। उसी ट्रेनिंग कालेज में डा० बहादुर रहमान खाँ, उस समय प्रिंसिपल थे। उस समय पता नहीं उनको हमारे प्रति क्या आकर्षण था, उन्होंने उसी कालेज में मुझे रख लिया और जब पत्र आया मेरी नियुक्ति का, तो वहीं पर उसी कालेज में काम करने के लिये गया। उस समय हुआ यह कि अमर सिंह जी, मेरे दिमाग से यह आया कि मैंने जिस इलाहाबाद की भूमि पर वह दृश्य देखा है और वे दृश्य भी देखा, जिस इलाहाबाद पर जनता अपनी जान की परवाह न करे गांधी जी की ''करो या मरो'' आन्दोलन में लग गई थी तो क्या हम लोग कुछ नहीं कर सकते तो भगवान ने, सरस्वती का वरदान कुछ थोड़ा सा था लिखने पढ़ने का, तो मैंने उस समय 47 के पहले की ही बात आपसे कह रहा हूँ। मैंने यहां तक लिखा था कि विदेशी डाकुओं ने इस देश को लूटा है। ये कविता मेरी अब भी मौजूद है। अब मुझको याद नहीं रहता है। लेकिन मौका मिलेगा तो आपको मैं सुना दूँगा। सरकारी नौकरी में रहते हुये भी और अंग्रेजी डायरेक्टर के रहते हुये भी हम लोगों में यह भावना थी कि अंग्रेजी डाकुओं ने देश का सर्वस्व लूटा है, इस तरह की कविता हम लोग मन्च पर सुनाया करते थे बगैर किसी भय के, खुल्लम खुल्ला आजादी का ये रूप हम लोगों ने देखा और वैचारिक योगदान देखा, फिर उसके बाद में, ये देखिये आजादी का अर्थ केवल वहीं नहीं है कि हमारी हथकड़ियां टूट गईं और हमें आजादी मिल गई। लेकिन आजादी का मतलब यह भी होता है कि अपने विचारों में, अपने परिधान में यानी पोशाक में, अपने रहन सहन में, अपने देश की मिट्टी से लगाव के सम्बन्ध में, हम सारी की सारी दृष्टि से जुड़े हैं, ये राष्ट्रीयता का भाव आना चाहिये। तो मैं आपसे क्या कहूँ। कहते हुये थोड़ी सी हिचक सी होती है, लेकिन मैंने जो रचनायें शुरु की उन रचनाओं में अधिकांश में देश–प्रेम, स्वतन्त्रता से सम्बन्धित आर्थिक स्थिति।

प्रश्न :– तो आपने समाचार पत्रों में लिखा या पुस्तक के रूप में?

उत्तर :– आपने बड़ा अच्छा प्रश्न किया, ये समाचार पत्रों और पुस्तकों का। असल में, मैं उस समय सरकारी नौकरी में था और जब मैंने लिखना शुरु किया समाचार पत्रों में, जैसे ''भारत'' निकलता था वहां से, इलाहाबाद से उस समय मैं लिखता था, लेकिन बाद में क्या हुआ, मुझे यह मालूम पड़ा कि सरकारी नौकर होने के कारण प्रकाशन के लिये विभाग से अनुमति लेनी चाहिये और फिर उसका पारिश्रमिक लेना है तो उसका और लेना चाहिये। तो ऐसे प्रतिबन्ध थे तो मैंने देखा कि इसमें ऐसे कुछ आपत्ति होने लगी है तो मैंने लिखना बन्द कर दिया। अखबारों में फिर साल दो साल मुझे कुछ लिखने को था। अपने विभाग से उचित माध्यम से भेजकर के, उसकी परमीशन लेता था और बाकायदे उसकी पुस्तकें छपती थी। उसी क्रम में जब तक ये प्रतिबन्ध नहीं हटा, तब तक मेरी काफी रचनायें, दूसरी कवितायें आ चुकीं थीं और एक तो मैंने खण्ड काव्य ही लिखा था, जो सन् 48 में पूरा हुआ था। वो गांधी जी को ही लेकर के, अहिंसा और सत्य को लेकर के, खाद्य अखाद्य को लेकर के, बाहरी और विदेशी चिन्तन को लेकर के, उन सबको लेकर ही विचार व्यक्त किये गये थे। वैचारिक धरातल हम

करते गये। लेकिन आपने जो प्रश्न किया अखबारों का माध्यम, वो कारण मैंने आपको बता दिया कि हर कविता लिखो, हर लेख लिखो, कहां तक उसकी परमीशन ली जाय, ये जरा व्यवहारिक नहीं था। इसलिये इसको मैंने नहीं किया। लेकिन हाँ उसके विषय में जरूर कि हमने छोटे बच्चों के लिये जरूर कवितायें लिखी। आप समझ लीजिये, उनमें ऐसे–ऐसे भाव भरे हुये हैं कि जैसे देश की एकता का भाव है, राष्ट्रीय स्तर पर जब मैं जुड़ा लिखने के लिये तो जैसे राष्ट्रीय एकता को विकसित किया जाये। ये बात मानसिकता हमें बदलनी हो तो बहुत सी बातें हमें मनोवैज्ञानिक ढंग से कहनी पड़ती हैं, किसी के भी बारे में। जैसे प्रायः कह दिया जाता है कि हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई आपस में हम सब भाई–भाई। तो मुझे लगता था अमर सिंह जी, कि ये कहना तो और चेतना जाग्रत करना है कि तुम हिन्दू हो, तुम मुस्लिम हो, तुम सिक्ख हो, तुम ईसाई हो, तुम चमार हो, तुम ब्राह्मण हो, तुम ठाकुर हो इत्यादि। ये चैलेन्ज था, चुनौती थी कि क्या करें। तो बहरहाल मैंने तलाश कि तो शायद आपने कभी कहा हो। "हम सब सुमन एक उपवन के" ये कविता मैंने लिखी थी, जिसमें कि केवल यही था कि हमारा जो पंचतन्त्र है, वो प्रकृति है, अग्नि है, जल है वायु है, आकाश है, धरती है, इत्यादि–इत्यादि। ये ही सब जो हैं, सबके लिये एक हैं। इसी से हम सब निर्मित हैं तो उसमें विविधता। कहां तो भारत वर्ष एक उपवन है और हम सब उसके सुमन है और उसमें न कोई हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई, कोई नहीं। हम सब सुमन, एक उपवन के। एक हमारी धरती सबकी जिसकी मिट्टी में जन्मा, मिली एक सी धूप हमें, सीचें गये एक से, हम बड़े हुये हैं झूल–झूल के पलनों में, हम एक पवन के, हम सब सुमन एक उपवन के इत्यादि–इत्यादि। इस प्रकार के मैंने पहले ही आपको संकेत किया था कि वैचारिक धरातल पर हम लोगों ने योगदान देने का प्रयास किया। हम समझते हैं, जब मैं पीछे मुड़ के देखता हूँ तो मुझे लगता है, सैकड़ों मेरी कल्पनायें ऐसी हैं बालकों में संस्कारिक "बीर तुम बढ़े चलो, धीर तुम बढ़े चलो, हाथ में ध्वजा रहे, सामने पहाड़ हो, सिंह की दहाड़ हो। तुम कभी रुको नहीं, तुम कभी झुको नहीं।" तो बालक आज भी उसको गाता है। तो मुझे ऐसा लगता है कि ये जो देश के लिये चलने की भावना है तो उसके माध्यम से है। जो संस्कारों को जन्म देने की कोशिश की गई। वह हमने वैचारिक धरातल पर की। इस प्रकार हमने जो कोशिश की, हमारी जो सामर्थ्य एवं सीमायें हैं, हम उसको, बालकों को प्रदान करते गये।

जब मैं प्राइमरी में पढ़ता था, गांव में तो वो ये समय था, जब हम आजाद नहीं थे। तो उस समय प्रभात फेरियां निकला करती थीं और हाथों में बच्चों को कागज के बने हुये झण्डे सींकों से, खप्पच्चियों से, बंधे हुये दिये जाते थे तो हम लोग प्रभात फेरियां लगाया करते थे। "विजयी विश्व तिरंगा प्यारा, झण्डा ऊँचा रहे हमारा।" तो हम लोग उसका अर्थ नहीं समझा करते थे। लेकिन एक जोश था क्योंकि सब कर रहे थे, लेकिन आज मैं सोचता हूँ कि बाल स्तर पर जो योगदान था, वह भी किसी प्रकार बड़ों के स्तर से कम नहीं था क्योंकि गांव–गांव में, गली–गली में, रास्ते–रास्ते में, सड़क पर खड़े होकर के जोर–जोर से सामूहिक रूप से इस प्रकार से झण्डा ऊँचा रहे हमारा, विजयी विश्व तिरंगा प्यारा, इसकी शान न जाने पाये। इत्यादि–इत्यादि हम लोगों ने पार्ट लिया था। जब चुनाव भी होते थे, तो उसमें भी भागीदारी लेते थे।

प्रश्न :– हाँ 1937 में चुनाव हुआ था? जब पं0 गोविन्द बल्लभ पन्त चुनकर के गये थे?

उत्तर :– हाँ। तो इस प्रकार ...। अच्छा एक बात और हैं, शिक्षा से ही जुड़ा हुआ भाग है तो जब मैं इलाहाबाद में शिक्षा का अधिकारी हुआ तो वहां दो मुख्य काम थे कि अनपढ़ों को पढ़ना, लिखना सिखाया। जो पढ़ लिख जाय, थोड़ा भी साल भर में, तो उनकी साक्षरता को कायम रखा जाय, उसके लिये साहित्य निर्मित किया जाये। अब प्रश्न यह था कि किस प्रकार का साहित्य हो तो उसमें वही भारतीय संस्कृति विचार, दर्शन, फिजूल की इधर उधर की बातें कहीं। हम अपनी भाषा के माध्यम से सरल ढंग से उनको देते थे। उसमें भी हम लोगों ने कोशिश ये की, कि जो हमारे स्वतन्त्रता सेनानी जैसे रानी लक्ष्मी बाई, तात्यां टोपे रहे या जो हमारी स्वतन्त्रता की कहानी है, महाभारत है, रामायण है, जो हमारी सांस्कृतिक धरोहर है, क्योंकि देश को तो फिर से बनाना था, तो उनको भी प्रकाशित करने के लिये हमने योजना बनायी और भगवान की दया से काफी कुछ प्रकाशित हुआ। तो अच्छा। हमारे पास वह भी थी शिक्षा की फिल्मरील। उस पर हमने कोशिश ये की कि हम जो साहित्यकार हैं, जिन्होंने देश को कुछ दिया है, उस पर हम दस–दस मिनट का वृत्त चित्र बनायें। लेकिन विशेष रूप से वो बातें जो देश के लिये हैं, चाहे वह साहित्य की दृष्टि से, चाहे वह राष्ट्रीयता की दृष्टि से, जो उनके विचार थे, जैसे निराला का था तो निराला ने जैसा मैंने पहले कहा था आपसे कि, केवल स्वतन्त्रता संग्राम के फिजिकल आस्पेक्ट नहीं। लेकिन वैचारिक धरातल हैं, इसको निराला ने जब 'वह तोड़ती पत्थर' इलाहाबाद फर्श पर लिखा, तो वह क्या था, इस देश की जो गरीबी है, वह देश के सामने आ गई, वह सामने आये। तो उसको सम्मान किया। निराला जी को लेकर इस प्रकार से जो कुछ बन पड़ा, अपनी चेष्टा की। मैं समझता हूँ आज, जब मैं पीछे मुड़ कर जब देखता हूँ साहित्य की दृष्टि से, शिक्षा की दृष्टि से मुझे लगता है, जीवन यों ही व्यर्थ नहीं गया। एक चीज और है, मैं भूल जाता हूँ याद आती जा रही है। इसलिये मैं कहता हूँ।

प्रश्न :–' हाँ–हाँ बिल्कुल कहिये।

उत्तर :– कि गांधी जी की, ये योजना थी कि हम अपने कपड़े बनायें तो ये भी राष्ट्रीयता की थी, ये भी स्वतन्त्रता संग्राम का प्यार था। स्वतन्त्रता संग्राम के प्यार के लिये, जब मुझे यह कहा गया कि, जब मैं वहां सर्विस में आ गया तो विद्यार्थियों को तो सब कुछ मिल जाता है, भाषा के माध्यम से, कविताओं के माध्यम से, हम उनको कोई चीज ऐसी नहीं दे पा रहे हैं उनको, कि जो देश प्रेम के अब इस एकता के प्रति पैदा हो। तो भाई अमर सिंह जी, मेरे दिमाग में कुछ ऐसी बात आई तो वो मूलभूत बात जो थी, देश प्रेम की बात जो काम कर रहा था। तो मैंने तीस–पैंतीस कवितायें लिखी, तो कपास चुनने से लेकर साफ कर रखना और फिर जब हम बालकों को बताते थे, उसमें से जो पत्ती है, या धूल है, उसको हटाना और फिर धुनकी पर ले जा करके रुई धुनने का। जब रुई धुन गई, तो रुई धुनने में क्या आवाज आ रही है, किस तरह से, वो क्या कह रहा है, रेशा रेशा क्या कर रहा है, ये कपास नहीं है, रुई नहीं है, ये शरीर का वस्त्र है। इसका लेकर के हमने उनको दिया कि ये भारतीय परिधान जन चढ़ेगा तो ये भारत वर्ष का। गांधी जी के वैचारिक धरातल पर अपने कपड़े अपने आप पहने, बनाये, और बच्चों को हाथ की साक्षरता। हाथ की साक्षरता का मतलब क्या कि हाथ पढ़ें। पढ़े क्या कातना सीखें, बुनना सीखें, स्वाभिमान जागे, इस देश की मिट्टी से लगाव हो उनका तब जाकर काम बने।

प्रश्न :– अच्छा महेश्वरी जी, आपको राष्ट्र की तरफ से कोई सम्मान या पुरस्कार मिला?

उत्तर :– देखिये अमर सिंह जी, सम्मान और पुरुस्कार के लिये तो कोई रहता नहीं है। जो असली लेखक है, वह नहीं। लेकिन यह भी है, उससे प्रेरणा मिलती है। प्रोत्साहन होता है, आगे बढ़ने का। आपकी जिज्ञासा के लिये मैं आपको बता दूँ, सम्मान, पुरस्कार करीब तीस–पैतींस हुये, प्राप्त हुये। लेकिन दो तीन बड़े उल्लेखनीय हैं। इनमें एक है सन् 77 में प्राप्त हुआ था – उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान के अन्तर्गत, तब राम नरेश यादव जी थे चीफ मिनिस्टर। डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी इसके उपाध्यक्ष थे, उस वक्त हिन्दी–दिवस के अवसर पर साहित्यकारों को दिया गया, छांट करके, लेकिन उसमें ग्यारह को मोरार जी देसाई के हाथ से सम्मान पत्र और प्रशस्ति पत्र दिलवाया गया था, बाकी गर्वनर के माध्यम से, चीफ मिनिस्टर के माध्यम से दिया था। वह मेरे लिये बड़ा उल्लेखनीय रहा। उस समय भी मैं आपको बड़ा ही स्मरणीय और सुना दूँ कि साहित्यकार का क्या सम्मान था कि सहारनपुर के कहां के एक विद्वान आये थे, भाषा के मैं उनका नाम भूल रहा हूँ तो वो उठे नहीं, जब उनका नाम लिया गया, लेने के लिये सम्मान, तो मोरार जी देसाई साहब आगे बढ़े। जब ग्यारहों खतम हो गये तो वो उठे वहां से और उठकर के हम लोगों ने ये समझा कि इनका काम खतम हो गया अब ये जा रहे हैं, लेकिन साहब आपको आश्चर्य होगा कि उस जमाने के व्यक्तित्व क्या थे, राजनेताओं के साहित्यकारों का कितना सम्मान करते थे, वो उतरकर के नीचे मंच पर आये, सारा सम्मान की सामग्री लाकर के दिया बाजपेयी जी। उनका नाम कि महराज अब तो आप लेंगे। नीचे उतर करके दिया उसको, उन्होंने स्वीकार किया। मेरे बगल में अग्रवाल साहब, जो सम्पादक थे, ये बैठे हुये थे, मैंने कहा, ये देखिये ये है ऐंठा। तो ये बड़ी स्मरणीय घटना है कि कहां गये, वह दिन कहां गये वो लोग, कि साहित्यकार का सम्मान। साहित्यकार का सम्मान मूल्यों का सम्मान है। उसी कड़ी में मुझे 92 में उ०प्र० हिन्दी संस्थान द्वारा बाल साहित्य सम्मान दिया गया था और उन्होंने अटल बिहारी बाजपेयी जी को बुलाया था। उनके हाथ से सम्मान दिये गये थे। बड़ी प्रसन्नता इस बात की हुई कि सरकार साहित्यकारों के प्रति चाहे तब की रही हो, चाहे अब की रही हो, पूर्ण सजग रही। साहित्यकारों का सम्मान, विचारों का सम्मान है, भावनाओं का सम्मान है, देश का सम्मान है, जो देश की रचनात्मक शक्ति है, उसका सम्मान है तो ये मैंने आपसे, और भी सम्मान मिले, लेकिन आपने साहित्यिक सम्मान की जो बात कही, इसलिये मैंने ये बात कही। आपने अपनी जिज्ञासा व्यक्त की, कि आपकी सबसे पहले पुस्तक कब आई। यूँ तो अमर सिंह जी, मेरी पचास साल की काव्य–यात्रा पूरी हो गई है और यात्रा तो कभी पूरी नहीं होती, वह तो चल रही है। जब मैं अन्तिम सांस लूँगा और मैं तो कहा करता हूँ, कि जिस दिन मेरी कलम बन्द हो जायेगी मेरी सांस बन्द हो जायेगी। तो प्रत्येक साहित्यकार का यह है। बहरहाल मेरी जो पहली रचना प्रकाश में आई, वह सन् 46 में आई। उसका नाम था दीपक और उस दीपक में, क्योंकि मैं भारतीय दर्शन चिन्तन का उपासक रहा हूँ। मैंने हमेशा यह अनुभव किया है कि हमारे मनीषियों ने प्रकृति के गोद में बैठ कर लिखा है। जो कुछ लिखा है, तो उस समय कोई साहित्य नहीं रहा होगा, लेकिन उस समय ऋषि मुनियों ने वेद लिखे हैं। मैं कभी–कभी सोचता हूँ कि क्या पढ़ा था उसके पहले। तो मुझे लगता है कि पशुओं को, पक्षियों को, सितारों को, तारों को, नदियों को, इनको पढ़ा होगा और जो ये नैसर्गिक रूप से ये बात बता रहे थे उनको लिखा होगा। उसी से प्रभावित होकर मेरे मन में ये था कि प्रकृति के चित्रण को मैंने ये जो कविता लिखी, दीपक संग्रह था, उसमें मैं सिर्फ

उनके नाम सुनाये दे रहा हूँ जिससे एक चित्र बन जायेगा। दीपक, वन्दना, सरिता, निर्झर, वर्षा, चपला, तारे, सागर, बसन्त, आश्रम, कुसुम, वृक्ष, यमुना, है कहां वह अकेला काट इत्यादि। ये इतना समग्र चित्र उपस्थित करता है प्राकृतिक देन का, जिन्होंने हमारे देश को बनाया है, गंगा ने बनाया, यमुना ने बनाया, हिमालय ने बनाया।

प्रश्न :– तो "हिमालय" कविता जो आपकी रही, तो अगर उसको थोड़ा सा सुना दे, क्योंकि हमारी सीमा के जो हमारा भारत वर्ष है, उसका मुकुट भी बोला जाता है, श्रृंगार मुकुट। अगर वह कविता में याद हो।

उत्तर :– हाँ मैं आपको कुछ सुनाये देता हूँ –
गिरिधर स्वरूप पत्थर का, धारण कर क्यों आये हो।
क्या इस स्वरूप में भी कुछ जंग को देने को लाये हो।
इस मानव जंग में प्राणी जो पत्थर पर होते हैं।
ये कभी किसी को क्या कुछ लेते देते हैं।
कितना भी विषाद ग्रस्त हो जग का कोई भी प्राणी।।

X X X

इत्यादि। ये सन् 46 में मैंने लिखी थी कविता। और देखिये आपने मुझसे प्रश्न ये किया था कि जब वो आजादी का युद्ध चल रहा था, तब हमने इन लोगों के सम्बन्ध में काव्य लिखा था। मैं तो सरकारी नौकरी में था। और समझिये अंग्रेज हमारे डायरेक्टर थे। उस समय अंग्रेजी राज्य था। हमने मन्चों पर ये रचना पढ़ी। "विदेशी डाकुओं ने देश का सर्वस्व लूटा है।" आजादी के पहले की रचना है। ये मैंने उसी श्रृंखला में कि कविता तो हमेशा चौकन्ना रहता है लेखक।

प्रश्न :– अच्छा द्वारिका प्रसाद जी मैं आपसे ये प्रार्थना करुंगा कि उस समय के जो समकालीन कवि रहें हो, उनके विषय में, कवि लेखकों के विषय में तो कौन–कौन से थे, उनका परिचय और जो आपके जीवन में विशेष घटना रही हो, यदि आप कवि सम्मेलन में गये हों, कोई बैठक हुयी हो तो उसमें कोई देश के प्रति, या समाज के प्रति, राजनीति के विषय में यदि कोई वार्तालाप रही हो तो उसके बारे में बतायें?

उत्तर :– बड़ा अच्छा प्रश्न किया, डा० अमर सिंह जी, मेरी सारी उम्र इलाहाबाद में बीती और इलाहाबाद एक प्रकार से संगम ही है साहित्य का। उस दौरान हिन्दी के जो शीर्षस्थ, उस समय के कवि, लेखक, समीक्षक, आलोचक थे। सुमित्रानन्दन पन्त, महादेवी वर्मा, सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला, अज्ञेय, हरिवंश राय बच्चन, श्याम नारायण पाण्डेय, सोहन लाल द्विवेदी, मैथिली शरण गुप्त आदि–आदि और लेखकों में समालोचकों में डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी डा० राम कुमार वर्मा, अमृत लाल नागर उपन्यासकार, भगवती चरण वर्मा, कवि और उपन्यासकार यशपाल कहानी एवं लेखक और उपन्यासकार प्रेम चन्द "अश्क", श्रीलाल शुक्ल, ठाकुर प्रसाद सिंह ऐसे ही अन्य लोगों से मेरा सम्पर्क रहा। और जो आपने दूसरी बात पूछी कोई घटना संस्मरण इनमें से यूँ तो कई हैं लेकिन मैं आपको खास सुना रहा हूँ कि एक बार हमने ये सोचा कि निराला समीक्षक है तो मैंने महादेवी जी से प्रश्न किया कि मैं शिक्षा प्रसार में था, दस–दस मिनट के वृत्त चित्र बनाना चाहता था कि जिससे हम सारे देश में उसको दिखा सके। तो कितने लोग हैं, जो इनको देख पाते हैं, न सुन पाते हैं तो उसमें निराला जी के ऊपर

भी, पन्त जी के ऊपर भी, महादेवी जी के ऊपर भी, तो मैंने महादेवी वर्मा जी से कहा था कि भगवान की दया से इस समय निराला, आप पन्त जी, और मैथिली शरण गुप्त जी, कहीं ये इकट्ठे हो जायें तो मैं उनका एक वो लेना चाहता हूँ, जिससे आगे की पीढ़ी में ये रहे कि इनका साहित्यक योगदान समाज में क्या रहा। उन्हें बड़ा अच्छा लगा, उन्होंने कहा जैसे ही आयेंगे, मैं आपको खबर करुँगी मेरे यहां ठहरते हैं। आये वहां, संयोग से उनके यहां ठहरे, मैं उनसे मिला। उनसे मैंने कहा वह बोले ठीक। दूसरे दिन तय हुआ कि दस बजे निराला जी को लेकर मैं महादेवी जी के यहां पहुँचू। निराला जी को ले जाना बड़ा मुश्किल, मैं आपसे बताऊँ, कि मैं निराला जी से रात को मिला। मैंने कहा पंडित जी आप दद्दा के बारे में पूछा करते थे, वह स्वस्थ होकर आये हुये हैं। बोले कहां है वह। मैंने कहा, देवी जी के यहां वह ठहरे हुये हैं। बोले कि मैं मिलना चाहता हूँ, तो मैंने कहा कि फिर सबेरे चले, तो बोले, हाँ चलो। कैसे चलोगे, तो मैंने कहा, देखेंगे तो मैं आपसे बताऊँ अमर सिंह जी, कि मैने कभी निराला जी को ये परिचय नहीं दिया था कि मैं इस प्रकार तो मैंने कहा पंडित जी, मैं कल आ जाऊँगा, चलेंगे। उन्होंने कहा, ठीक। मैंने ये जरूर कहा कि महादेवी जी ने कहा है दद्दा से ये कह दीजियेगा कि दोपहर का भोजन मेरे यहां करे। उन्होंने कहा ठीक है। हम सबेरे गये, कमला शंकर जी आर्टिस्ट थे, उन्हीं के यहां रहते थे। हम गये, गाड़ी थी, यहां मैंने गाड़ी का बोर्ड हटा दिया और मैंने दारागंज में लाकर के खड़ी कर दी। मैंने कहा, चलिये। वह तैयार थे। जैसे ही गाड़ी पर आये, उन्होंने कहा, गाड़ी तुम कहां से लाये। मेरा माथा ठनक गया। मैंने सोचा, सब खेल बिगड़ गया। मैंने कहा पंडित जी ऐसा है, यों समझ लीजिये एक प्राण दो शरीर मेरे एक मित्र है, उनसे मैने प्रार्थना किया आप के लिये। निराला जी बैठ गये। जब वहां पहुँचे। महादेवी वर्मा जी के यहां दो गेट हैं तो एक से पंडित जी को लाये थे, एक से पंडित जी आ रहे थे। उतने में पंडित जी आ गये सामने से पोर्टिकों में उधर से हम लोग पहुँचे। पंडित जी ने नमस्कार किया। बोले पन्त आवाज बेच–बेच कर बाल सफेद कर लिये, वह उस समय आकाशवाणी में सलाहकार थे, इलाहाबाद में। खैर महादेवी को कहलवाया कि वो आये हैं। सब लोग कमरे में बैठे बात चीत होती रही। मैंने निराला जी से कहा, कुछ सुनाइये तो उन्होंने श्री रामचन्द्र पाल भज मन ये सुना था। हम चले आये। उसके बाद भी अमर सिंह जी मैने साहस नहीं छोड़ा। श्री लाल जी ने कहा, अगर तुम राम विलास शर्मा, श्री अमृत लाल नागर इनको ले आओ तो एक बार प्रयास और किया जाय। मैं आया आगरा राम विलास जी से मैंने प्रार्थना की तो राम विलास जी तुरन्त तैयार होकर आ गये। दो मिनट नहीं लगे तो तूफान एक्सप्रेस जाता है शाम को। ऊपर से मैंने नागर जी को प्रार्थना कर ली, वह भी आ गये ये लोग ठहरे हमारे यहां दो तीन दिन तक और हम लोग बराबर प्रयास करते रहे ''जूही की कली'' पंढ़ी निराला जी को अब यह रहस्य समझ में नहीं आया कि, निराला जी ने क्यों नहीं पढ़ी। हमसे लोगों ने पूछा कि आप ''जूही की कली'' पढ़ने के लिये इतना आग्रह कर रहे थे। मैंने कहा हम इसलिये कर रहे थे कि ''जूही की कली'' एक युग प्रवर्तक कविता है। जिसको मैंने सुना है महावीर प्रसाद द्विवेदी ने सरस्वती में छापकर फिर लौटा दिया था।

प्रश्न :– निराला जी की कवितायें?

उत्तर :– हाँ। निराला जी की कवितायें। तब वह मतवाला निकाला अपना। ये इसका ऐतिहासिक। खैर मैंने वह फिर फिल्म पूरी की।

प्रश्न :– धन्यवाद – धन्यवाद।

श्री अनूपसिंह त्यागी

पहले मिडिल किया। पहली जुबान उर्दू की है। पहले उर्दू से मिडिल किया, फिर हिन्दी से मिडिल किया। 1930 में, मैं अंग्रेजी पढ़ने के लिये चला गया। 1930 में नमक आन्दोलन चला हुआ था। मेरे गांव के कुछ लोग आन्दोलन का काम करते थे। उनके साथ मैं भी शामिल हो गया। घर वालों को मालूम हुआ तो उन्होंने बुलाकर मेरी पिटायी कर दी और मेरा पढ़ना छूट गया। उसके बाद एक साल घर में रहने के बाद 1932 में मेरठ चला गया। मेरे घर वालों ने मुझे सिर्फ इसलिये भेज दिया कि कोई किसी में न फंस जाय और किसी वकील के यहां मुहर्रिर कर लें। मेरठ के रिश्तेदार के यहां मुहर्रिर का कार्य शुरु किया क्योंकि मैं उर्दू पढ़ा लिखा था। उन्हीं दिनों में काम सब उर्दू में हुआ करता था। थोड़े दिन अंग्रेजी मुहर्रिर करने के बाद एक दिन कचहरी में, ये शायद सन् 1934 की बात है। शायद लगा रहा हूँ कि ठीक याद नहीं है, श्री रघुवीर नारायण सिंह जो हसौड़ा के रहने वाले हैं, वह चौधरी मंगल सिंह वकील के पास आये और कहा कि मुझे कुछ आदमियों की जरूरत है। दिल्ली इलेक्शन हो रहा है। आसफ अली साहब का और राय साहब नानक चन्द के आसफ अली साहब कन्डीडेट हैं। कांग्रेस के और नानक चन्द साहब कन्डीडेट हैं अमन सभा के, मैं तैयार हो गया। एक पण्डित हमें और मिल गये। हम लोगों को दिल्ली के लिये भेज दिया गया। इस बीच में, मैं आपको बता दूं कि सबसे पहले महात्मा गाँधी 1929 में मेरठ के दौरे पर आये थे, तो मेरे गाँव के पास ही एक डौला गाँव है। वहाँ पर उनका कैम्प था। मेरे पिता जी ने मुझसे कहा कि चलो तुझे गाँधी को दिखाकर लाऊँ। हमने कहा कि चलो गाँव से और भी लोग गये। रघुवीर जो बाद में एम. एल. ए. हुए, वह भी गए थे। मेरे पिता जी ने दो सूत की लच्छिया ले ली तो मैंने कहा इनका क्या करेंगें, तो बोले ले ली तो गांधी जी जो हैं उन्हें देंगें। इसके बाद में वह दस मिनट में गांधी जी के पास पहुँच गये। इस तरह पहले पहल 1929 में गांधी जी के दर्शन किये। रघुवीर नारायण सिंह जी ने मुझको और पण्डित राम आसरे जी को दिल्ली भेजा और जुगल–किशोर, जो वहाँ के सेक्रेट्री थे, खन्ना जी के साथ में। उन्होंने कहा उनसे पैसे ना लेना और काम करने के लिये भेज दिया। हम दोनों चले गये। वहाँ चाँदनी चौक में आफिस था, दिल्ली कांग्रेस कमेटी का। हमने तीन,चार दिन काम किया। आसफ अली साहब जीत गये। जीतने के बाद हम बड़ी खुशी चले आये। उन्होंने इनाम के थोड़े–थोड़े पैसे भी दिये। रूप नारायण सिंह फिर आ गए और बोले इस लड़के को हमें दे दो। सन् 1935 था, कांग्रेस कमेटी के दफ्तर में जरूरत थी। इसके अध्यक्ष थे बाबू ज्योति प्रसाद और जनरल सेक्रेट्री पंडित शिव बिहारी सदर वाले। मैं वहाँ क्लर्क हो गया। इसके बाद में कांग्रेस में ही काम करता रहा। सबसे पहले 1941 में, मुझे जेल जाने को मौका मिला। 1941 में मुझे 4 महीने की सजा हुई। एक महीना अन्डर ट्रायल रहा। 5 महीने की सजा मुझे व्यक्तिगत सत्याग्रह में हुई। उसके बाद सन् 1942 आ गया और मैं इन दिनों आफिस सेक्रेट्री था और चौधरी चरण सिंह कांग्रेस के अध्यक्ष थे। सन् 42 के आन्दोलन थे, ये नेता पकड़ गये और लोग फरार भी हुए। 14 आदमियों को वारंट थे, जिनमें चौधरी चरण सिंह, दुल्ली थी, पृथ्वी सिंह प्रेमी, पठन लाल द्विवेदी, मेरा नाम अनूप सिंह त्यागी, मैं था और चौधरी मुख्तार सिंह थे और कुछ लोग पकड़े गये। रघुवीर सिंह पकड़े गये। मैं फरार होकर चला गया। चरण सिंह भी फरार रहे। इस दौरान में, 16 अगस्त में, चन्द भान शहीद हो गये मवाने में। वहाँ मैं नहीं जा सकता लेकिन 18 तारीख में जो ममौरी में कांड हुआ, वहाँ पाँच आदमी शहीद हुये। वहां का मुझे पता चला तब तक मवाना का मुझे पता भी नहीं था,

क्योंकि मैं चरण सिंह की तलाश में निकल गया था। लेकिन वह मुझे नहीं मिले। पता लगा वह खंजनपुर में हैं। खंजनपुर जाना नहीं हुआ। 20 या 21 अगस्त को सारा गांव खाली था। गांव के लोग बाहर भाग गये। औरतें भी भाग गयीं थी। एक तोप गाड़ी तालाब में और बताया गया। गाँव को तोप से उड़ाने के लिये आयी थी। वहाँ एक आदमी जानता था। रामशंकर नाम को जो पहले जेल में था सन् 30 का था। ताल्लुकात थे। मैं वहाँ पहुँचा तो घर वालों ने कहा अनूप तू भाग जा, यहाँ से यहाँ खैर नहीं है, पकड़ा जायेगा। यहाँ कोई नहीं है। वहाँ से निकलता –निकलता आया रास में। रास, में मिट्ठन लाल त्रिवेदी हमारी कार्यकारिणी के मेम्बर थे, हमने कहा उनसे मिलकर कोई प्रोग्राम बना लें। मेरा भाई जो रास्ते में मिला था, वो और मैं था, कोठी में थे मिटठन लाल ने कहा, कहाँ बैठे हो पकड़े जाओगे बड़े आराम से। कहने लगे नहीं जहाँ मैं बैठा हूँ, यहाँ से जाने का रास्ता जाता है सामने। उनसे आयेंगे तो पता चल जायेगा। ठीक है मैंने कहा, फिर थोड़ी देर बैठने के बाद खाना आ गया। खाना खा रहा था, तुरन्त पता लगा कि इस कोठी को पुलिस ने घेर लिया। पुलिस ने घेर लिया तो बड़ी परेशानी हुई। मिट्ठन लाल ने कहा मैं तो पकड़ा जाऊँगा। अनूप सिंह तेरा तो पकड़ना गलत हो जायेगा। तेरे से सबका लिंक लगा हुआ है। तो मैंने कहा बचूं ये तो बड़ा मुश्किल है तू जीने में जा। एक जीना था चौधरी की कोठी में, जिसमें डंगर बाँधते थे। वह बड़ा था और एक दम कोठी में निकलता था। तो उन्होंने मुझे जीने में घुसेड़ दिया और कोठी में मोढ़े वोढ़े पड़े थे। मैं उसमें छिप गया। पुलिस आई, मिट्ठन लाल जी को पकड़ ले गयी और पुलिस फिर आ गयी तो दो सिपाहियों को ले गये। मैंने अन्दर से कमरे की सिटकनी लगा दी। मैं चौधरी साहब की कोठी के साथ–साथ भाग लिया। कोठी पिछवाड़ा करीब करीब जंगल में पड़ता था। बीच में एक मकान पड़ता था, उसमें मैंने छलांग लगा दी। थोड़ी सी चोट भी लगी लेकिन निकल गये। फौरन ही जंगल में ही गायब हो गया। एक घन्टे तक पुलिस भागी–भागी फिर भी उनके हाथ नहीं आया। शाम को जब आया तो नागर सिंह मिल गये। उन्होंने कहा, भाई अनूप सिंह जाओ तेरा भाई रोता फिर रहा है कि उसे गोली मारेगी वह इधर उधर कहीं है। मैंने कहा मुझे बढ़ई ने बताया है कि आपके बंदूक और रिवाल्वर के लाइसेंस पुलिस ले गयी है। खैर ये वाकया मेरे साथ घटा। इसके बाद मैं गांव चला आया। गांव से तलाश किया कि भाई चरण सिंह कहां हैं, पता चला खंजर पुर में है तो मैंने नारायण देव शास्त्री और मास्टर सुन्दर लाल जी के साथ में एक तांगा करके वहां पहुंचा और चौधरी साहब से मुलाकात की। 18 अक्टूबर 1942 को फिर मेरी गिरफ्तारी हुई। पहले मुझे दो महीने के लिये धारा–129 में भेजा गया, फिर मैं उसमें छूट गया। फिर जब दो महीने खत्म हुए तो बाहर निकलने से पहले दूसरी बार पहुँच गया, उसमें धारा 26 लगा दी गयी जो अनिश्चितकालीन होती है। खैर मुझे खुशी हुई क्योंकि धारा–129 और 26 के लिये एक विशेष बैरक थी। हाई जेन्ट्री उनमें थी, 1930 की पहले के बनी हुई बैरक। पहले सभी लोग बैरक में 14 नम्बर में बड़े बड़े राजे महाराजे एम0 एल0 ए0 और एम0 पी0 हुए हैं, उसके बाहर का कोई नहीं हुआ। चौधरी चरण सिंह उसमें थे। रघुवीर नारायण और दुल्ली उसी में थे। उमा शर्मा थे और सरजू प्रसाद, प्यारे लाल लक्ष्मी नारायण और ना जाने कितने लोग करीब करीब नब्बे आदमी उसी तरह के थे। इसी तरह 18 महीने बाद में जेल से छूटा और जेल से आकर फिर शुरू कर दिया और उसके बाद में यह कांग्रेस में रहा। सन् 1969 तक मैं कांग्रेस में रहा, फिर उसके बाद को–आपरेटिव शुरू कर दिया। वहीं से मैंने अपने सेनानियों का काम शुरू कर दिया था। पहले तो पेंशन थी ही नहीं, फिर सन् 72 में जब शुरू किया इन्दिरा जी ने, तो बीसों लोग आते रहे मेरे पास, मैंने फार्म बनाये और भरे 5–5 सौ रुपये लेकर के। बस जितने पेंशन पा रहे हैं सब मेरे हाथ के बनाये हुये हैं।

श्री हरिदत्तशास्त्री जी



मेरा जन्म मवाना के पास तकरीना ग्राम में हुआ है। यह बात सन् 21 की है, जो मेरी जन्म तिथि है। उसके पश्चात मैंने गांव में प्राइमरी शिक्षा ग्रहण की। कक्षा 4 उत्तीर्ण करने के बाद गुरूकुल में, जो कि मेरठ के पास रूड़की रोड पर तीन मील के फासले पर स्थित है, वहाँ पर शिक्षा प्राप्त करने के लिए चला गया। वहाँ शिक्षा प्राप्त करने का कारण था, परिवार का ऋषि दयानन्द का अनुयायी होना। आर्य समाज का पिता जी पर विशेष प्रभाव रहा, इसलिए मुझे गुरूकुल में शिक्षा ग्रहण करने के लिए भेजा गया। वहाँ पर सन् 30 से लेकर 40 तक आद्योपरान्त शिक्षा ग्रहण की, वहीं से गुरूकुल का स्नातक हुआ। स्नातक होने के पश्चात विद्या वारिधि की उपाधि से मुझे विभूषित किया गया।

मैं गुरूकुल से स्नातक होने के उपरान्त लाहौर पढ़ने के लिये चला गया था, परन्तु वहाँ से जब वापस आया तो सन् 42 का आन्दोलन आरम्भ हो गया था। गुरूकुल पहले से एक राष्ट्रीय संस्था थी तथा महात्मा गाँधी वहाँ पर पदार्पण कर चुके थे और भी अन्यान्य राष्ट्रीय व्यक्ति वहाँ आते जाते रहते थे। मुझे वहां पर बतलाया गया था कि लाल बहादुर शास्त्री, धर्मेन्द्र नाथ शास्त्री जो कि संस्कृत मेरठ कालेज में थे। वे भी गुरूकुल से ही जाया करते थे और भी कुछ लोग इस तरह के वहाँ पर रहे हैं। पण्डित अलगू राम शास्त्री जो वन मंत्री रहे हैं और उत्तर प्रदेश के जो सभापति भी रहे हैं, फिर लगातार एसेम्बली में मेम्बर भी रहे हैं उन्हीं की ये संस्था स्थापित की हुई है। वे पहले आचार्य थे, बाद में वह आजीवन कुलपति रहे। आचार्य लेखराम भी वहाँ पर जब आ गये तो उन्होंने सारा कार्यभार सम्भाला, और उन्हीं के संरक्षण में सब लोगों ने विद्या प्राप्त की और वहाँ से काफी संख्या में स्नातक निकले और राष्ट्रीय भावना से ओत प्रोत थे। सन् 42 के आन्दोलन के दौरान मैं गुरूकुल में आ चुका था और शिक्षक के रूप में वहां पर कार्य भी करना आरम्भ कर दिया था। इस आन्दोलन में जब 9 अगस्त को बम्बई में महात्मा जी का "भारत छोड़ो" प्रस्ताव पास हो गया, तो अंग्रेजों में खलबली मची उन्होंने वहां पर जितने भी उपस्थित नेतागण थे, उन सबको गिरफ्तार कर लिया। ब्रिटिश सरकार ने जगह जगह छापे मार कर गांवों में, शहरों में, और जहां कहीं भी क्रान्तिकारी थे, उनकी गिरफ्तारी की, और उन्हें जेल भेज दिया गया। हम लोग 14 अगस्त को शाम के समय अभियान पर चले यह गुरूकुल का ही सारा का सारा समुदाय था। एक कृष्णानन्द जी जो वहां पर इंगलिश टीचर थे उनके ही नेतृत्व में यह जत्था चला। उस जत्थे में, मैं स्वयं और दो विद्यार्थी अन्य थे, जिनका नाम महावीर प्रसाद और डा० राजेश्वर शास्त्री था। वाचस्पति शास्त्री भी उस समय वहां विद्यार्थी थे। पांच गुरूकुल के थे और एक व्यक्ति जो कि गर्वमेन्ट सर्विस में टेलीफोन एक्सचेंज में काम करते थे। जगन्नाथ प्रसाद अवस्थी और जो कानपुर के रहने वाले थे वो भी साथ हुए। हम लोग दौलाला से हसौली तक रेल से गये और रात्रि में ही खतौली में जगन्नाथ भी पहुंचना था। इसलिए हम लोग वहां एक आर्य समाज मंदिर में चले गये। आर्य समाज मंदिर में जाने के पश्चात जब जगन्नाथ पर आ चुके तो हम लोग अपने अभियान के लिए तैयार हो कर चल दिये।

यह उत्तर प्रदेश के सात आठ स्वतंत्रता केसों में से एक माना हुआ केस था। हम लोग जब बांयी पटरी से चले जा रहे थे तो उस समय हमारी जानकारी के बिना एक फौजी दस्ता वहां पर था। उन्होंने हार्न दिया और हार्न पर रूक गये । रूकने के बाद हमारे पास जो आपत्तिजनक चीजें थी उनको हमने नहर में फेंक दिया। गिरफ्तार करके जब हम लोग खतौली थाने में लाये गये। मामला, गर्वन्मेन्ट ने एक प्रकार से प्रकाशित किया। तो अंग्रेजों को यह दिखाई दिया कि यह संस्था पहले से ही क्रान्तिकारी संस्था थी और यहां के लोग इस तरह के काम करते रहते हैं । छापा मारा गया। उस छापे में गर्वन्मेन्ट कुछ नहीं पायी, लेकिन फिर भी आचार्य जी को ये आदेश दिया गया कि वो गुरूकुल में जितने भी उपस्थित चाहे विद्यार्थी हों चाहे शिक्षक हों हमको सूचना दी जाय। उन्होंने कहा एक आध दिन तो भेजा लेकिन फिर इस आज्ञा को अपमान जनक समझकर छोड़ दिया और किसी भी प्रकार की सूचना, गुरुकुल से सम्बन्धित, देने के लिये अस्वीकार कर दिया तथा लिख कर भी भेज दिया कि अब मैं ऐसा नहीं करुँगा। ये बात सरकारी आदमियों को थोड़ी सी खली। इसलिये कि जो उस समय में प्रशासकीय व्यक्ति थे, उन्होंने उनको धारा 129 और 26 में जेल भेज दिया और वो जेल में रहे। हम लोगों के साथ ही केस संगीन था, मुजफ्फरनगर के एडवोकेट ने बड़ी ही सद्भावना के साथ में हम लोगों के साथ व्यवहार किया, और वो लोग बिना कोई शुल्क लिये हुये उस केस को देखा करते थे। जेल में उसकी सुनवायी हुई और जेल के पश्चात् उस केस में सेशन कोर्ट को भेज दिया गया और कोर्ट में हम लोगों को सुनवायी 3 अप्रैल सन् 43 तक रही और 7 अप्रैल को हम लोगों को 5 वर्ष के कठोर कारावास में जेल भेज दिया गया क्योंकि केस संगीन था। 21 अप्रैल को हमको बरेली जेल के लिये, उसी महीने में भेज दिया गया। भेजने से पहले सचेत रही सरकार कि कहीं किसी तरह की दुर्घटना न हो तो जेल पर ही लारी लगा दी गयी और रुड़की तक हम लोगों को लारी से लाया गया। उसके पश्चात् बरेली में रात में हमारी इन्ट्री हुई।

एक बात जो इस समय घटना की बात है। जब हम जेल चले गये तो एक मास पश्चात् 16 सितम्बर को एक अभियान जेल के भीतर भी चला और जेल तोड़ दी गयी। ये जो वहां उपस्थित नौजवान थे, उन्हीं का काम था और कुछ कैदी भी साथ थे। बेड़ियों की झनझनाहट के साथ वहां पर आ गये। बाहर होने के बाद में बाबूराम डकैत जो था, उसके हाथ में चाभी आयी, जिससे कि बाहर का सारा गेट खुल गया। उनके साथ में देवी सिंह जो पहरे पर रहता था, सन्तरी से उन्होंने उसकी रायफल छीन ली। कोई देर नहीं लगाई और फायर ऊपर को कर दिया। एक प्रकार सारे जेल में सनसनी फैल गयी। वो लोग अन्दर चले आये। उनके पास गोली भी नहीं थीं। इसलिये वो उसी के अन्दर चक्कर लगाते रहे। लेकिन किसी आदमी की हिम्मत नहीं हुई कि उनके पास चला जाय। हम सब देख रहे थे और उसके पश्चात् इस तरह की घटना जब होती है तो पगली घण्टी जिसे कहा जाता है वो खतरे की घण्टी बजा दी गयी और सब लोगों को फिर तालों में बन्द कर दिया गया और जब गिनती की गयी तो एक आदमी इनमें से मिसिंग था। जेल में हमारे ग्रुप को चक्की पीसने का काम दिया गया था और वहां का यह नियम था कि दो आदमियों को तीस सेर पीसना होता था उन दिनों सेर और मन का ही जमाना था। फिर समझौते में ये हुआ कि छः आदमी 25 सेर पीसेंगे। और वो धीरे–धीरे हम लोगों ने कई दिनों में उसको पीसा और इतना महीन पीसा कि लोग कहने लगे जो दूसरे कैदी थे कि क्या करते हो तो हमने कहा हमें तो समय काटना है तो चक्की चाहे जितनी चलती रहे तो जितना पीसना

है पिस जायेगा। जहां तक मुझे स्मरण है 2 जून 43 को हम लोगों की बेल हुई। बेल हुई और हाईकोर्ट में सभी लोगों की इच्छा के अनुसार अपील कर दी गयी। उसमें धर्मवीर सिंह जो हमारा नेतृत्व कर रहे थे तथा एक अन्य को दो वर्ष का कारावास हुआ और बाकी को छोड़ दिया गया। ये तो अपनी जेल जीवन की हलकी सी कहानी है। आजादी के बाद जो डिस्ट्रिक्ट बोर्ड बना वह पहला और अंतिम था। मैं उसमें चुनाव भी लड़ा और एक वर्ष तक पब्लिक हेल्थ चेयरमैन के रूप में रहा। मुझे वो सर्विस रास नहीं आयी। फिर मैं गवर्नमेन्ट सर्विस में चला गया। पंचायत इन्सपेक्टर की मेरी नियुक्ति हुई, जहां दो वर्ष मैंने काम किया और दो वर्ष के पश्चात् मैं असिस्टेन्ट डिस्ट्रिक्ट पंचायत अफसर हो गया। क्योंकि दूसरी पोस्ट यही हमारे महकमें में थी, वहीं कनवर्ट हो गयी। अप्रैल 89 में इसी पद से मैं रिटायर हो गया। जब रिटायर होकर अपने गांव आकर खेती बारी करने लगा और भाई रुमाल सिंह दोनों यहां पर आ गये तो ये तय हुआ कि स्वतंत्रता सेनानियों को एकत्र किया जाय और इस प्रकार हम लोगों ने मिलकर ये स्वतंत्रता सेनानी परिषद बनायी। मुख्य रूप से यह रुमाल सिंह का परिश्रम था जो प्रत्येक व्यक्ति का स्थान, प्रत्येक व्यक्ति की जानकारी उन्होंने एकत्र की वह हमारे पास लिपिबद्ध है। एक रजिस्टर में हमने रक्खा है और उस रूप में हर आदमी ने कब कब कितना काम किया, कहां काम किया, कहां जेल में रहे, कितना समय जेल में रहे, इस प्रकार का छोटा मोटा सा एक विवरण भी एकत्रित है। उसके बाद हम लोगों ने मिलकर चन्द्रभान शहीद जो यहां पर हुये थे विशेष रूप से उन्हीं को सामने रख करके अपना 16 अगस्त का कार्यक्रम जो प्रत्येक वर्ष हम लोग वार्षिक सभा के रूप में मनाते हैं, उसको शुरु किया। शहीद चन्द्रभान की स्मृति सदा बनी रहे, उसके लिये हमने एक द्वार बनाया और वह द्वार है। श्री रुमाल सिंह एक निरीह कार्यकर्ता थे उनकी अपनी कोई इच्छा नहीं थी। रिटायरमेन्ट के बाद से उन्होंने यहां पर जो सेवा का काम किया है, वह मेरे ख्याल से स्मरणीय रहेगा और प्रत्येक काम में जो कि देश से सम्बन्धित था, उसमें वो भाग लेते रहे हैं और जीवन जब तक था अन्तिम क्षण तक इस सार्वजनिक कार्य में लगे रहे। सितम्बर सन् 1994 में दशहरे का दिन था उनका निधन हो गया।

डा० रमेशकुमार शर्मा



मेरा जन्म स्थान टेहरी गढ़वाल है। मेरे पिता जी उन दिनों टेहरी गढ़वाल में एक विद्यालय के प्रधानाचार्य थे। वहीं मेरा एवं मेरी बड़ी बहन कमला शर्मा का जन्म हुआ। मेरे पिता जी श्रीराम शर्मा ''विशाल भारत'' के सम्पादक थे। मेरी जन्म तिथि 23 दिसम्बर 1925 है। मेरी प्रारम्भिक शिक्षा घर में हुई थी। उसके बाद गवर्नमेन्ट हाईस्कूल, आगरा से मैंने सन् 1941 में हाईस्कूल की परीक्षा पास की। उसके बाद सन् 1941 में आगरा कालेज में ही इण्टरमीडिएट कक्षा में पढ़ रहा था, तभी सन् 42 में आन्दोलन आरम्भ हो गया। मैं गिरफ्तार होकर जेल चला गया। जेल से छूटने के बाद सन् 45 में, मैंने इण्टर की परीक्षा व्यक्तिगत रूप से पास की और फिर 1947 में मैंने बी0ए0 किया। 1949 में एम0ए0 हिन्दी की परीक्षा पास की और 1952 में एल0एल0बी0 की परीक्षा पास की। 1949 में पहली अगस्त से आगरा कालेज के हिन्दी विभाग में पढ़ाना आरम्भ किया। आगरा कालेज में पढ़ाते हुए पी0एच0डी0 प्राप्त की और उसके बाद डी0लिट् की डिग्री प्राप्त की, सन् 1964 में, मैं कश्मीर विश्वविद्यालय चला गया, श्रीनगर रीडर होकर के, वहीं दो वर्ष बाद हिन्दी एवं संस्कृत विभाग का प्रोफेसर एवं अध्यक्ष हो गया और डीन फैकल्टी आफ आर्ट था। वहां से 1986 में रिटायर हो कर वापस घर आ गया। 1942 के ''भारत छोड़ो आन्दोलन'' उत्तर प्रदेश के मेरे पिता जी प्रभारी थे। मध्य प्रदेश के प्रभारी ठाकुर निरन्जन सिंह जी थे। ठाकुर निरन्जन सिंह के गिरफ्तार हो जाने के बाद, मेरे पिता जी तत्कालीन मध्य प्रदेश जिसे सेंट्रल प्राविन्सेज कहते थे और उत्तर प्रदेश जिसे उन दिनों यूनाइटेड प्राविन्सेज आगरा एण्ड अवध कहते थे, दोनों के वो प्रभारी हो गये थे। जब वह बम्बई से अखिल भारतीय नागरिक कमेटी के बैठक में भाग लेकर लौटे तब उन्होंने यहां आन्दोलन आरम्भ किया। मैं, मेरी बड़ी बहन और मेरे कुछ मित्र मेरे पिता जी के साथ काम करते थे। पिता जी 7 दिसम्बर 1942 को गिरफ्तार हुये और उनके साथ मैं भी गिरफ्तार हुआ, लेकिन कुछ दिनों के बाद छोड़ दिया गया। फिर जुलाई 43 में गिरफ्तार किया गया। पिता जी की गिरफ्तारी के बाद आन्दोलन का कार्य आगरे में पं0 शम्भू नाथ चतुर्वेदी ने चलाया। श्री चतुर्वेदी आई0पी0एस0 से इस्तीफा देकर पिता जी के कहने पर आन्दोलन में आ गये थे। कुछ दिनों बाद वह भी गिरफ्तार हो गये थे। आंदोलन के कार्य को मैं और मेरे साथ के कुछ लोगों ने जारी रखा। जब मैं गिरफ्तार किया गया तो कोतवाली में 59 दिन रखा गया। 59 दिन में से लगभग 50 दिन पुलिस ने मुझे भिन्न–भिन्न ढंग से यातनायें दी, मारना–पीटना, उल्टा लटकाना, नाखूनों में पिन चुभोना इत्यादि। महात्मा गांधी ने ''हरिजन सेवक' में मेरे विषय में एक सम्पादकीय लिखा था। 59 दिन कोतवाली के हवालात में बीमार होने के बाद मार–पीट के बाद जब लगभग मरणासन्न स्थिति हो गयी, तब मुझे डिस्ट्रिक्ट जेल आगरा भेजा गया। तीन महीने वहां मुझे रखने के बाद सेन्ट्रल जेल भेज दिया, जहां पर मेरे पिताजी व अन्य तेरह व्यक्ति मौजूद थे। मुझ पर आगरा कान्सपेरेसी केस चलाया गया। उस आगरा कान्सपेरेसी केस में

डा0 कैलाश नाथ काटजू हमारे वकील थे। मुकदमा चलता था जेल में ही, उस मुकदमें में काटजू साहब की वकालत के कारण सब लोग छूट गये किन्तु मेरे ताऊ जी पं0 ज्वाला प्रसाद शर्मा को सजा हो गयी थी। इस बीच मेरी बड़ी बहन कमला शर्मा को सात साल की सजा हो गयी थी।

प्रश्न :– आप जब सेन्ट्रल जेल आगरा में थे, उस समय के समकालीन लोगों के नाम बता सकते हैं?

उत्तर :– ऐसा है कि मैं जब गिरफ्तार हुआ तो मेरे पिता जी की यहाँ मिलनगंज में बहुत बड़ी कोठी थी, जिसको चांदी वाली कोठी कहते हैं। उसमें बारूद, रिवाल्वर और बहुत से हथियार इत्यादि थे, तो पिता जी के गिरफ्तार होने के बाद उनको मैं निकालकर लाया था। उसके बाद जब गिरफ्तार हुये थे एक मैं था, एक युदेव पालीवाल और एक शीतल प्रसाद एक सूरज भान और एक बंगालीमल। हम चार लोग जब गिरफ्तार हुये तो उसमें ऐसा हुआ कि बाकी शेष तीनों ने पुलिस के मारपीट से एकबाली बयान दे दिया और वह सरकारी गवाह बनने के लिये तैयार हो गये। अब मैं रह गया था पुलिस यह चाहती थी कि मैं भी एकबाली बयान देकर के सरकारी गवाह बन जाऊँ तो ठाकुर निरन्जन सिंह और बाबू जी को मिला कर के एक बड़ा मुकदमा चलाया जा सकेगा। इसलिये वह हमारे साथ बहुत मारपीट व अत्याचार करते रहे। फल यह निकला जब यह तीनों गवाह गये तो किसी ने जाकर के पिता जी से कह दिया कि आपके बेटे ने एकबाली बयान दे दिया है, सरकारी गवाह बन गया है। डिस्ट्रिक्ट जेल में, मैं रखा गया था क्योंकि मैं 15 वर्ष का था। युवराज बैरक कहलाती थी और वहां पं0 शम्भु नाथ चतुर्वेदी आगे चलकर एम0पी0 बने, आजकल बीमार हैं वह भी उसी जेल में थे क्योंकि उन्होंने मेरी बहन व जगन प्रसाद रावत की पत्नी के साथ सत्याग्रह किया था। 23 जनवरी, 43 को आगरा कालेज चौराहे पर तो वहां से मेरे पिता जी से किसी ने कहा कि आपके लड़के ने एकबाली बयान दे दिया है। ट्रान्सफर मेरा हुआ सेन्ट्रल जेल, जब सब लोग जेल में थे, तब हमारे घर पर मेरी माँ मेरी दो छोटी बहनें और तीन छोटे भाई थे, सारी चीजें संस्मरण में मेरे पिता जी ने लिखी हुयी हैं। स्थिति यह हो गयी थी कि कोई डाक्टर भी हमारे घर पर किसी को देखने नहीं आता था और उस स्थिति में मेरे तीन भाईयों का देहान्त हुआ। लाश उठाने कोई नहीं आया। मेरे घर के सामने एक दूधवाला रहता था मोहन लाल। वह मोहन लाल और मैं दोनों भाईयों की लाश को उठाकर के यहां से सात किलोमीटर उसके बाद गिरफ्तार हुआ था और तीसरा भाई भी बीमार रहा और उसकी भी स्थिति यह हो गयी मेरे जेल से छूटने के 15 दिन के बाद उसका भी देहान्त हो गया। भाईयों के देहान्त के बाद जब मैं डिस्ट्रिक्ट जेल से सेन्ट्रल जेल ट्रान्सफर हुआ। दरवाजे पर सेन्ट्रल जेल थी। उसमें बारह बैरक थी, जिसमें स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी कह करके कांग्रेसी राजनैतिक बन्दी नाम दिया जाता था। उनको रक्खा जाता था मैं और मेरे पिता जी को उस बैरक में रखा गया था, जिसमें राम प्रसाद वगैरह रखे गये थे। एक मैक्सिमम सिक्योरिटी बैरक थी जो कि अकेली थी, जिसके चारों तरफ एक पूरा वो था और उसके ठीक पीछे एक यूरोपियन वार्ड था, जिसमें उन दिनों जय प्रकाश नारायन, लोहिया जी, लाहौर जेल से ट्रान्सफर होकर लाये गये थे। जब सब लोग आये मेरे ताऊ जी आये, लेकिन मेरे पिता जी नहीं आये। क्योंकि उनसे किसी ने कह दिया था कि मैंने बयान दे दिया है। फिर ताऊ जी मुझे अलग ले गये। कहने लगे तूने बयान दिया है, मैंने कहा किसी कागज पर हस्ताक्षर नहीं किया है। तब मेरे पिता जी मुझसे मिलने आये और हम लोग वहां इतने दिन जेल में रहे। उस समय उस बैरक

में करीब साढ़े तीन सौ लोग थे। बाहर ताल में हमारी बैरक में करीब बीस लोग थे। जिसमें श्री दर्शन सिंह भी आते थे मुकदमे के सिलसिले में, कृष्णा पालीवाल आये, आगरे के सब लोग लगभग उसी जेल में थे और सन् 45 में जब मै छूटा, तब मैंने घर पर इण्टरमीडिएट की परीक्षा तीन महीने में पढ़ कर दी। हमारे घर की स्थिति यह हो गयी थी हमारे यहां का बगीचा, सब बैंक बैलेंस सरकार ने जब्त कर लिया था। लगभग दो महीने में सारी बातें मेरे पिता जी ने उस पुस्तक में लिखी हैं। एक समय लगभग दो तीन महीने घर में खाने को कुछ नहीं था। दो गायें थी। मेरी दो बहने और मेरी माँ आगरा कालेज के फील्ड पर घास खोद लाती थीं और गाय को खिलाती थी। उसके दूध से काम चलाते थे तो हमारा एक पोस्ट मैन था। वह चुपचाप कभी–कभी थोड़ा गेहूँ या आटा फेंक जाता था। यह स्थिति उन दिनों हो गयी थी बड़े–बड़े राजनेता उन दिनों छूट कर भी आ गये थे। हमारे घर को कहा जाता था ये नाम वाला घर है। मैं आपको विशेष बात बताता हूँ जो कि मैंने लिखी भी है, अपने संस्मरणों में जो प्रकाशित हो रहे हैं। वह यह है कि मैं जब गिरफ्तार हुआ था तो मेरे पिता जी मुझसे कहा था कि देखो बेटा पुलिस को जो चीज मालूम होती है वह छुपाओगे तो पुलिस को शक हो जाता है। इन्ट्रोगेशन का तरीका यह है कि जितना तुम समझते हो उनको ज्ञान है, उसको स्वीकार करो। तो जब मैं गिरफ्तार हुआ मारपीट की, मुझसे पूछा बोले तुम्हारे पिता जी कहां हैं? मैंने कहा आन्दोलन में हैं आन्दोलन का काम करते हैं क्या करते हैं? मैंने कहा मुझे ये नहीं मालूम। आते हैं कभी–कभी। मैंने कहा आते हैं, कभी–कभी चिट्ठी भी आती है। बोले कौन दे जाता है। मैंने कहा पता नहीं। इस तरीके से इन्ट्रोगेशन मेरा हुआ। उस इन्ट्रोगेशन के बाद स्थिति ये उत्पन्न हो गयी थी कि पुलिस ने इसी धोखे में मुझे एक बार छोड़ दिया। लेकिन फिर जब नाम हुआ तो मेरे साथ फिर गिरफ्तार हुये, बंगाली मल, सूरजभान इन दो व्यक्तियों ने आगे चलकर के अपने बयान वापस लिये और उनकों भी 7–7 साल की सजा हुयी बाकी छोड़ दिये गये। लेकिन यहां एक नेता थे रामचन्द्र पालीवाल जो सैनिक के सम्पादक थे, उनका बेटा था भूदेव पालीवाल, वह अन्त तक सरकारी गवाह बना रहा। इस देश की बिडम्बना यह है कि सरकारी गवाह भूदेव पालीवाल जिसकी वजह से सबको सजा हुयी और जजमेन्ट मेरे पास रखा है। मेरी बड़ी बहन के यहां सन् 42 के आन्दोलन का जिसमें पं0 कैलाश नाथ काटजू ने वकालत की थी। उन्होंने ही उसे इन्ट्रोगेट किया था। उस भूदेव पालीवाल ने स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी बनकर के विदेश यात्रा की, इंजीनियर बना और करोड़ो रुपये कमाये। जब मैं छूट कर आया, एम0ए0 की परीक्षा पास की और मैं लेक्चरर हो गया। जब स्वतन्त्रता संग्राम सेनानियों के पेन्शन की स्कीम आरम्भ हुयी तो उसमें आरम्भ में यह था कि जिनकी आमदनी पांच हजार या दस हजार प्रतिवर्ष हो, उनको पेन्शन नहीं मिलेगी तो मैंने अप्लाई नहीं किया । जब सन् 80 मे ये बात हट गई तो कश्मीर विश्वविद्यालय में, मैं विभागध्यक्ष था हिन्दी का, वहां से मैंने अप्लाई किया। आप आश्चर्य करेंगे कि बारह वर्ष तक मुझे चक्कर कटाया गया। मुझे पेन्शन नहीं दी गयी। चूँकि मैं कश्मीर में था। एक आध बार लखनऊ गया तो स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी संगठन है उनके लोगों ने और सरकार के लोगों ने बीस–बीस हजार रिश्वत मांगी। मैंने रिश्वत नहीं दी। फलतः 92 में बारह वर्ष बाद मुझे पेन्शन मिली और वह 1981 में, मैंने अप्लाई किया था ,तब से नहीं मिली। स्थितियां यह है स्वतन्त्रता संग्राम सेनानियों में, मेरी अपने संज्ञान में आगरे में कभी लगभग एक तिहाई ऊपर ही है जिन्होंने देश के लिये कुछ भी नहीं किया, जिन्होंने जान पहचान के दो राजनैतिक नेताओं से सर्टिफिकेट लेकर पेन्शन लेना आरम्भ कर दिया। कहना

तो नहीं चाहिए चूँकि हम लोगों ने देश के लिये काम किया है ये कहने में मैं हिचकूँगा नहीं, इस तरीके के जो ''फ्रीडम फाइटर'' हैं, फर्जी, उन्होंने ये धन्धा बना रखा है कि वो यात्रायें करते हैं द्वितीय ए0सी0 रेल में एक एक आदमी को साथ ले जाते हैं, बम्बई चलो, तुम्हारा काम है, मैं तुम्हें ले चलता हूँ, उससे उसका आधा किराया वसूल करते हैं, वह उन्हें खिलाता पिलाता है जो रेल का पास है, उससे धन्धा बना रखा है। ये देश की स्थितियां हैं। बाकी तो आप देख ही रहे हैं, जिस देश का प्रधानमंत्री हथकड़ी पहनने से अपना बचाव कर रहा है उस देश में राजनैतिक स्थिति क्या होगी।

गांधी जी ने जेल से छूटते ही कहा था, कांग्रेस पार्टी तोड़ दो और अपनी–अपनी सरकार बनाओ। यहीं हम जानते हैं और कुछ पूछना हो तो बताओ।

प्रश्न :– पिता जी के समय बम के समय जो योजना बनती थी तो उसके बीच के विषय में यदि कोई घटना हो तो उसका जिक्र करें?

उत्तर :– यूँ तो सब घटना मालूम है लेकिन आप यदि संघर्ष और समीक्षा पुस्तक पढ़ेंगे। तो उसमें सब विस्तार से लिखा है और उसमें बाईवाला करोल बाग नई दिल्ली से उपलब्ध मेरे पास यदि होती तो मैं दे देता। मेरे पास थी, एक प्रति, वह मैंने प्रकाशन में दे रखी है। वहां उनका इनकम टैक्स आफिस है वो और रेलवे स्टेशन देखिये ऐसा है। शायद मुझे नहीं मालूम आपकी आयु कितनी है। गांधी जी ने जब आन्दोलन आरम्भ किया तो कुछ लोगों ने यह प्रचार और प्रसार किया तक। 42 का आन्दोलन तोड़–फोड़ का नहीं था। पं0 जवाहर लाल नेहरू ने जेल से छूटते ही इलाहाबाद में पहला बयान यही दिया था कि ये कांग्रेस का अधिकारिक आन्दोलन था। मेरे वह कागजात सारे पकड़े गये थे उसमें 9 अगस्त, 1942 को जो कार्य विधि बनाई गई थी, उसमें गांधी जी के रेगुलेशन के अनुसार यह था। दो तीन आपको बिन्दु बताता हूँ कि आन्दोलन तोड़–फोड़ का इस रूप में होगा कि अंग्रेजो की जो युद्ध प्रयत्न है, उसमें बचा जा सके। एक असहयोग हो दो लोग गिरफ्तारी दें, तीन सरकारी पदों से इस्तीफा दें, चार लेकिन अगर रेल गिरानी है तो गांधी जी का स्पष्ट निर्देश यह था कि हत्या न की जाय, डकैतियां न डाली जायें, कुछ लोगों ने डकैतियां डालीं और पैसे खाये। यह भी हुआ जैसा बड़े–बड़े देशों में हमेशा हुआ करता है तो गांधी जी के निर्देश यह थे। वह कागज मैंने पढ़ा था। साइक्लोस्टाइल था कि रेल निकलने से पूर्व रेल की पटरी उखाड़ दी जाय और उन्हीं ट्रेनों को गिराया जाये, जिसमें अंग्रेजों की सेना की सहायता के लिये सामान इत्यादि जा रहा हो। जब वह गिर जाय, पटरी उखाड़ दी जाय, ट्रेन गिर जाय, तो जो लोग ऐसा करें वह भागे नहीं, वहीं खड़े रहे और गिरफ्तारी दें। ऐसा नहीं हुआ। इसका कारण यह है कि अगर आप देखें जिस स्तर पर 1942 के आन्दोलन को चलाने का गांधी जी का उद्‌देश्य था, उस बड़े स्तर पर चल नहीं सका। ज्ञातव्य बात यह है कि मैं कह रहा था कि बहुधा लोग मुझसे पूछते हैं कि आपके साथ के पांच आदमी पकड़े गये थे, उसमें से चार सरकारी गवाह बन गये और एक दो पिटाई पर, तो कुछ लोग मुझसे पूछते हैं कि आपने उनकी यन्त्रणायें कैसे सही और क्यों बयान नहीं दिया। क्या स्वार्थ था आज बता रहा हूँ कि मैं 59 दिन कि हर वक्त मैं महसूस कर सकता हूँ, जैसे गिरफ्तार हुआ तो यहां सी0आई0डी0 इन्सपेक्टर एस0बी0 सेन चक्रवर्ती तो मुझे बहुत खिलाया पिलाया और लोभ देते रहे पर उसका मेरे ऊपर कोई प्रभाव नहीं हुआ। बाद में उन्होंने मुझे मारपीट करना, टार्चर करना शुरु किया। उन्होंने मुझसे यह कहा कि तुम्हारे पिता जी और उनके साथियों को फांसी लगना निश्चित है। अगर अपनी जान बचाना चाहते हो, तो बयान दे दो। उसका

मेरे मन पर बिल्कुल उल्टा प्रभाव हुआ, मुझे जब गिरफ्तार होकर पुलिस ले जा रही थी तो उसने मुझसे ये कहा था कि बेटा अपनी बाप की इज्जत का ख्याल रखना तो अगर पुलिस वालों ने मुझसे ये कहा कि अगर तुम बयान दे दोगे तो तुम्हारे पिता जी छूट जायेंगे। सरकारी गवाह बन जाओ, उनकी जान बचाने के लिये। लेकिन मुझे आज तक याद है कि मैं रात–रात जग कर सोचता था कि मेरे तीन भाई तो मर चुके हैं। अगर मेरे पिता जी, ताऊ को फांसी लगे तो मैं केवल अपने प्राण बचाकर के क्या करुँगा कि अपनी जान बचाने के लिये अपनी बाप की इज्जत बिगाड़ दी। इसलिये मैंने अपनी सारी प्रताड़नाऐं यंत्रणायें मांगी। उन्होंने पूछा कि आपमें इतना कैसे आत्म बल पूछा, अभी दांया कंधा ये सब टूटे हुए थे। मैं जेल से तो ये बता दूँ कि पुलिस के इन्ट्रोगेशन में अगर उन्होंने ये कहा होता, कि मैं चाहता हूँ हाईस्कूल पास कर, अगर तुम बयान दे दोगे, तो तुम्हारे पिता जी को हम छुड़वा देंगे। शायद मैंने बयान दे दिया होता। ये एक मनोवैज्ञानिक स्थिति है, जिसे मैंने अपने लेखों में स्पष्ट किया है। तो मैं वहां से कश्मीर विश्वविद्यालय से सन् 86 में रिटायर होकर 60 वर्ष की आयु में यहां आ गया हूँ और ब्राह्मण गली गोधनपुरा आगरा में, अब मैं रह रहा हूँ।

उत्तर प्रदेश राजकीय अभिलेखागार, लखनऊ से आये हुए श्री महेन्द्र सिंह एवं डा0 अमर सिंह द्वारा, ''मौखिक इतिहास'' के सम्बन्ध में, मैं अपना संक्षिप्त परिचय एवं संस्मरण दे रहा हूँ। मेरा नाम है रमेश कुमार शर्मा एवं मेरे पिता जी का नाम पं0 श्रीराम शर्मा और मैं कश्मीर विश्वविद्यालय के संस्कृत विभाग के आचार्य अध्यक्ष पद से अवकाश प्राप्त हूँ। वर्तमान में आगरा नागरी प्रचारणी सभा का अध्यक्ष हूँ और अब उनके संस्थाओं में कार्य करता हूँ। पठन पाठन में रुचि रखता हूँ।

श्री जगमोहन शर्मा

मैं, जगमोहन शर्मा पुत्र प्यारे लाल शर्मा मोहल्ला सुभाष नगर मकान नं0 295/2 मेरठ का निवासी हूँ। जिस समय स्वतन्त्रता संग्राम शुरु हुआ, मैं दसवीं कक्षा का छात्र था। उसके पहले हम पुस्तकों के आधार पर ये जानते थे कि हम गुलाम हैं। हमको स्वतंत्रता प्राप्त करनी है, कैसे करनी है? स्वतंत्रता किसे कहते हैं? इस विषय में हम सब अनभिज्ञ थे। कोरे अबोध बालक होने के कारण उस दौर में महात्मा गांधी का दर्शन हमें जब हुआ था, मैं बहुत छोटा था। 1931 में जब विदेशी होली जलायी जा रही थी, मेरठ में जो लेडीज पार्क है, यह जगह पहले बर्फखाना के नाम से मशहूर थी। इसमें होली जलायी गयी थी और बच्चों की तरह मैं भी पहुँच गया था। लेकिन मुझे पूरी तरह और याद नहीं है। केवल इतना मालूम था, ये महात्मा गांधी हैं और मैं उनके निकट ही बैठ गया था। उसके बाद जब मैं 9वीं कक्षा में आया अगस्त के एक अखबार में पढ़ा था देश भर में आन्दोलन मचा हुआ था। उससे पहले पं0 जवाहर लाल नेहरू वगैरह के दर्शन होते रहते थे कुछ नेताओं को हम जानते भी थे। उस समय ऐसा जोश था कि किसी को कुछ नहीं सूझता था कि कैसे आन्दोलन चलाया जाये। सब अपने ही मन से आन्दोलन चला रहे थे और लोग पिकेटिंग पर तैनात हो गये थे। हमने भी एक ग्रुप बनाया था उस ग्रुप में जब उपद्रव मचाया तो हमारे स्कूल के हेड मास्टर साहब ने बहुत डराया, धमकाया और कहा कि हम तुम लोगों को कालेज से निकाल देंगे। क्या तुम कहना नहीं मानोगे, हमने कहा, नहीं। मेरठ में उस समय एक नानकचन्द स्कूल था। जो उस समय का प्रसिद्ध स्कूल था और जितने भी स्कूल थे उसमें के सेलेक्टेड लड़कों का ये चुना हुआ स्कूल था। उसी का मैं विद्यार्थी था। श्री काशीराम मित्तल नेक व विद्वान इंसान थे एम0ए0एल0टी0 थे, वही हमारे हेड मास्टर थे। उस समय जितने भी अध्यापक थे, उनमें देश भक्ति की भावना कूट कूट कर भरी हुई थी, परन्तु रोजगार के कारण बच्चों को वो भी मना करते थे, वैसे उनको भी कोई उम्मीद उस तरह की नहीं थी। इस समय हम लोगों में बचपना तो था ही, यह विचार किया कि कालेज में आग लगा दी जाय। 15 तारीख थी। फीस डे का दिन था। उसमें जो उपद्रव हुआ तो फीस लेने वाले जो टीचर्स थे, वह अपने रजिस्टर वगैरह बटोर करके क्लास समाप्त करके आफिस चले गये। बाद में हमारे एक साथी को तैनात किया गया कि आग लगा दो उसने आग लगा दी, परन्तु घबराहट में पूरी आग नहीं लगा पाया। फिर आफिस में आग लगाने की कोशिश की गयी। रात के वक्त उसमें भी कामयाबी नहीं मिली। खैर जब हम लोग ज्यादा बदनाम हो गये तो पुलिस आ गयी। कालेज के अन्दर हम लोग बाहर तो आये नहीं, हाँ दो चार विद्यार्थी जब प्रदर्शन करते हुये पकड़े गये तो हम लोगों को भी घेर लिया गया और दीवार के सहारे लगा करके लाइन से खड़ाकर दिया गया कि हाँ भाई तेरे साथी और कहाँ हैं, उसने थोड़ा शक्ति से पूछा। पता नहीं क्या सूझा कि हमने कहा कि हम और साथी को लाकर पेश कर देंगे। बराबर में लाला मंगतराम की कोठी थी। उसके अंदर हम कूदे। एक सिपाही ने हमको लात मारी और हम गिर पड़े सो पकड़े गये। उस समय और बहुत से स्टुडेंट्स पकड़े गये और बाहर के बालक भी पकड़े गये थे। यहां तक कि बस भर गयी थी। जेल पहुँचने पर मेरे ख्याल से 60–70 विद्यार्थी लड़के रहे होंगे। उनमें से एक तो रात भर रोया और अगले दिन माफी मांग कर चला गया। बाकी लड़कों ने भी धीरे धीरे माफी मांगी। हम केवल दो छात्र रह गये थे। एक थे बालेश्वर त्यागी और मैं जगमोहन शर्मा। वो छात्र डी0ए0वी0 स्कूल का

था। हमारे स्कूल का नहीं था। वह रह गया था और हम। बाकी लोग माफी मांग कर बाहर आ गये थे। हमारे ऊपर कोई विशेष असर नहीं पड़ा था। मजिस्ट्रेट की कई बार वहीं अदालत लगती थी। उस जेल में अन्दर हम दो ढाई महीने ट्रायल पर रहे, उसका कोई रिकार्ड नहीं है। हमारे पास। उसके बाद हमें सजा हो गयी। वी0पी0 सेठी मजिस्ट्रेट थे, जिन्होंने हमें सजा दी थी। उन्होंने कहा था कि माफी मांगो। हमारे पिता जी ने कहा था कि या तो हिस्सा नहीं लोगे आन्दोलन में, और हिस्सा लोगे तो पकड़े जाओगे फिर अगर माफी मांग कर आये तो घर में नहीं घुसने दूँगा। लिहाजा हमने माफी नहीं मांगी। 2 महीने की एक सजा और ढाई माह की दूसरी सजा काटी।

सन् 1942 के आन्दोलन में उस समय विश्वम्भर दत्त कौशिक थे। वहां पर हम लोगों ने जब उपद्रव मचाया तो हमारा ट्रान्सफर हो गया। बैरक नं0 14 में, वहां पर चौधरी चरण सिंह जी थे, जो हमारे प्रधानमंत्री भी रह चुके है। महेश प्रसाद त्यागी, शान्ती त्यागी, जो एम0पी0 भी रह चुके हैं, अनेक गणमान्य व्यक्ति हमारे साथ रहे हैं। इस प्रकार हम सजा पूरी करके घर आये। घर आने के बाद हमें स्कूल में दाखिला नहीं मिला। बड़ी मुश्किल से यह तय हुआ कि तुम स्कूल में तो नहीं घुस सकते हो केवल हाई स्कूल का इम्तहान दे सकते हो। तो हमने फार्म भरा, स्कूल में केवल हमारा नाम नोटेड था, हम स्कूल के अन्दर नहीं जा सकते थे। प्यारे लाल गुप्त वे बड़े देश भक्त थे। देश भक्ति के गीत गाया करते थे। हमें उनसे ही देश भक्ति की प्रेरणा मिली थी। एक बात मुझे याद है कि मुझे कालेज से निकाल दिया गया था। सस्पेंड लिखा हुआ था। क्योंकि हमने नेशनल फ्लेग आर्डर के विरुद्ध बिल्डिंग पर लगाया था, जिसका मेरे पास सर्टिफिकेट भी है। इस प्रकार कई बार सजा मिल चुकी थी, स्कूल की तरफ से भी तथा सरकार की तरफ से भी। जब हाई स्कूल कर लिया तो बाद में कालेज में एडमिट हुआ था। 1942 के बाद फिर यहां पर जो राष्ट्रीय कार्यक्रम होते थे, उनमें सक्रिय भाग लेता था। जब ''आल इण्डिया कांग्रेस'' अधिवेशन हुआ था। सन् 46 में, मैंने कालेज छोड़ कर भाग लिया था। सन् 1947 की 15 अगस्त आने वाली थी तो पहले एक जोश था कि स्वतंत्रता हमको मिलने वाली है, इसके पहले हम रात को मेरठ से दिल्ली चले गये, वहां पर स्वतंत्रता प्राप्ति की जो चहल पहल थी वो हमने देखी। हमने वहां देखा बाबू राजेन्द्र प्रसाद जी प्रेसिडेंट बनने वाले थे और लार्ड माउंट बेटन एक बग्घी में बैठ करके राष्ट्रपति भवन से लालकिले तक आये थे और उनके पीछे हम लोग भागे थे। इतना जोश था कि पूरे रास्ते हम भागते ही रहे। बड़े जोर की बारिश हो रही थी किसी चीज की परवाह नहीं थी फिर हम उनके साथ ही लौट करके गये। हमने राष्ट्रपति भवन देखा जो खुला हुआ था और संसद भवन में भी घुसे। उस समय की बात ही और थी। वास्तव में हम स्वतंत्रता का अर्थ उसी समय समझ पाये थे, जो आज नहीं है।

शहीद चन्द्रभान

(अनुज श्री ओमप्रकाश जी द्वारा)

मेरे पूज्य भ्राता, श्री चन्द्रभान शहीद जी का जन्म सन् 1919 दिसम्बर में ग्राम दनधवा तहसील सरधना जिला मेरठ में हुआ था। उनका बचपन वहीं पर ही बीता। पिता जी व्यापार करते थे। सन् 1938 में मवानामण्डी में दुकान किराये पर लेकर कार्य किया। पिता जी के साथ, वो भी अनाज का व्यापार करते थे । भारत छोड़ो आन्दोलन 1942 में पूरे जोर से भारत वर्ष में चल रहा था। मवाना के पास तीन मील पर गांव मुनारिकपुर है। जो हमारी ननिहाल थी। दुकान करने के पश्चात हम लोग मुनारिकपुर में रहने लगे। जिस कारण चन्द्रभान जी ग्राम मुनारिकपुर आने जाने लगे। 16 अगस्त को गांव में खाना पिता जी का लेकर दुकान पर आये तथा पिता जी ने खाना खाया तो कहा खाना कड़वा लगता है। भाई साहब ने कहा कि आज गेहूं का फुलका बना है तथा ये कह कर आन्दोलन के जुलूस में चले गये। मवाना में जहां ईदगाह है, वहां पर एक बहुत बड़ी भारी भीड़ जमा थी, जिसमें लगभग 15–20 हजार आदमी मौजूद थे। एक पेड़ काट कर डाल दिया गया था। जिस समय सुपरिन्टेन्डेन्ट अंग्रेज कार से नीचे उतरे, उसी समय बलवन्त सिंह ने लाठी से उन पर प्रहार किया जो उनके दांये हाथ में लगी। रिवाल्वर नीचे गिर गया। उसको आशा राम कूड़ी ने उठा लिया। इसी बीच में श्री चन्द्रभान जी ने सुपरिन्टेन्डेन्ट के सिर पर लाठी का वार कर दिया। वह सुपरिन्टेन्डेन्ट साहब नीचे गिर गये। तब श्री चन्द्रभान जी उनकी छाती पर चढ़कर उनका गला दबाने लगे। इतने में जुल्फीकार अली हसन दरोगा, जो उस समय मवाना थाना के इन्चार्ज थे आ गये। उन्होंने गोली चलायी जो चन्द्रभान जी के दाई आंख में लग कर पार निकल गयी। 16 अगस्त को "करो या मरो" आन्दोलन था। उसी में चन्द्रभान जी शहीद हो गये। ऐसा मुझे मेरे पिता श्री राम स्वरूप जी ने बताया। उस समय मेरी उम्र 4–5 वर्ष के करीब थी। मैं बहुत छोटा था। वह दिन हमारे परिवार के लिए बहुत दुःखदायी था। दो वर्ष पश्चात दूसरा भाई मान चन्द्र भी अकस्मात मर गया। उस समय बूढ़े माता–पिता का जीवन बहुत ही दुःखमय हो गया। बड़ा होने पर मैंने उसी दुकान पर जो शहीद चन्द्रभान ने किराये पर ली थी कार्य शुरु किया। जो आज कल परचून की दुकान है।

आज भी फर्म का नाम श्री चन्द्रभान शहीद के नाम से ही है। अभी कुछ समय पूर्व मवाना में स्वतंत्रता सेनानी परिषद का गठन हुआ था। इसके अध्यक्ष श्री रुमाल सिंह हुए। उनकी प्रेरणा से मवाना में चन्द्रभान शहीद द्वारा तथा एक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया। परिवार में एक भाई ओमप्रकाश है, भतीजा अशोक कुमार और एक पोता निकुन्ज कुमार है।

श्रीदत्त त्रिपाठी

मेरा नाम श्री दत्त त्रिपाठी है। मेरे पिता जी का नाम श्री हरिदत्त त्रिपाठी था। मुझे बचपन से इतिहास और राजनीति में रुचि थी। बड़ा हुआ तो देखा कि देश में स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए आन्दोलन चल रहा है। रोज खबरें आतीं। आज भगत सिंह को फांसी लग गयी। चन्द्रशेखर आजाद ने सोलह–सत्रह आदमियों को मारने के बाद स्वयं अपने गोली दाग ली थी और वह स्वर्गवासी हो गये। यानि इन बातों को लेकर, मैं अपने लिए सोचता था कि मैं इस देश में पैदा हुआ और देश के लिये कुछ नहीं कर सका। सन् 42 का आन्दोलन चला। स्कूल में मुझे रोका गया और जुलूस उठा तो उस जुलूस में भी शामिल रहा। मैं सन् 1942 में ही जब यह भारत छोड़ो आन्दोलन चला, कोटाबाग से ओवर गेट से, मैं गिरफ्तार कर लिया गया। इसके बाद हमको रुड़की में रक्खा गया। रात को रसल साहब एक अंग्रेज आये थे, पैदल हमको नैनीताल ले गये। हम 8 आदमी थे, जो पकड़े गये। आठों आदमियों को हथकड़ी लगा कर नैनीताल ले गये। वहां पर हम लोगों ने रात के सात साढ़े सात बजे जेल के फाटक के अन्दर किया। नैनीताल में भी हम लोगों ने नारे लगाये। ''भारत वर्ष आजाद है'' और ''इन्कलाब जिन्दाबाद'' के नारे लगे। हमको दफा 26 में रखा गया फिर 15–20 दिन के बाद हमको काशीपुर हवालात में ट्रान्सफर कर दिया गया। 4 महीने वहां पर रहे काशीपुर हवालात में तो बाबू दान सिंह को और मुझे रख दिया गया। उसके बाद हम पर काशीपुर का मुकदमा चला। इंसपेक्टर उसकी गवाही में था। उसमें मुझे 3 महीने की सजा हुई और फिर हमारा चालान मुरादाबाद जेल में कर दिया गया। मुरादाबाद में 3 महीने सजा काटने के बाद हम पर दफा 26 लग गयी। फिर हमको हवालात में रखा गया। ढाई महीने तक फिर हमारा ट्रान्सफर नैनीताल जेल में कर दिया गया। नैनीताल जेल में हम पर मुकदमा चला। पहले तो मुकदमें में हम लोग गवाही कुछ भी नहीं दे सके थे। फिर लार्ड ने ऐसा कुछ फरमान निकाला था कि मुकदमे में पुरानी कार्यवाही खत्म करके नये सिरे से मुकदमा चलाया जाये। फ्रेंट राबर्ट की अदालत में मुकदमा चला। हमारे ऊपर। 120 की 38 और 35 को धारायें लगीं। हमारे ऊपर और हमको सफाई देने का कुछ मौका मिला। श्री सिंह को हमारी तरफ से पैरवी करने का मौका मिला उसमें मुझे एक साल की सजा दी गयी और लखनऊ के कैंट जेल भेजा गया। कैंट में हम 6 माह रहे और वहां से हम सन् 44 में शायद छूटे। तब से घर में ही मैं आ गया। एक छोटा सा देहात है, यहीं पर दुकान किया करता हूँ। जब मैं जेल गया, मेरा एक लड़का 22 दिन का था और एक ढाई साल का, लड़की थी। रास्ते का मकान है चिंता रहती थी कि बच्चे घर आये तो घर वाली का स्वर्गवास हो गया और उसके बाद कई साल बाद ससुर जी ने अपनी दूसरी लड़की से मेरी शादी कर दी, जिसमें से अब दूसरी वाली भी खत्म हो चुकी है। सन् 72 से मुझे पेंशन मिल रही है। पहले तो पेंशन की दरख्वास्त ही थी, बाद में यह पेंशन मुझे मिली। केन्द्र से भी और यू0 पी0 से भी मिलती है मुझे। मैंने अपनी स्वर्गीय पहली तथा दूसरी पत्नी के लिये स्मारक के रूप में एक पुस्तकालय खोलने की सोच रक्खी है। उसमें राजनीतिज्ञों और गांधी जी विनोबा जी की किताबें संग्रह कर रहा हूँ। प्रेम चन्द्र का कुछ साहित्य मैं जमा कर रहा हूँ। अब भगवान इसमें कितनी सफलता दे, मैं कुछ नहीं कहता। लेकिन मैं हर नागरिक, हर भारतवासी को यह कहूँगा कि पहले हमारा काम श्रम करना है और बाद में बाक़ी काम करना। श्रम को हम महत्व देते हैं। आज का मेरा मुख्य उद्देश्य यही है।

मैं कविता भी करता था, उस का एक नमूना प्रस्तुत है,–
पानी–पर्वत अगर प्यार, रीति सीख गये आप सभी,
तो निश्चय समझो, भारत जननी के दुःख द्वन्द दूर होंगे सभी,
अभी जब दीन–हीन पानी बेचारा शरण में दूध की जाता है,
ना दूध करे छिः छिः निज अंज समझ अपनाता है,
अपना सके तो रंग समझ पानी को निज गले लगाता है,
जिस भाव बिके वह खुद उस भाव उसे बिकाता है।
अब जब एक हलवाई के हाथों से दोनों,
भट्‌टी पर चढ़ जाते हैं।
उस वक्त मुसीबत में पड़ कर दो मित्र भाव दर्शाते हैं।।
जब आग धधकने लगी खून जब जलने की नौबत आयी,
उस वक्त मुसीबत में पड़कर पानी ने यह बात दूध को फरमायी,
जब तक मैं हूँ मौजूद कड़ाही में, ऐ दूध देव सानन्द रहो बैठे
मुंह से मत–आह कहो।
दूध मित्र को रख सुरक्षित खुद को जल ने जला दिया।
प्रेम सहित अपनाने का यह कैसा बदला चुका दिया।।
फिर कैसे सहन कर सकता पानी पै–प्यारे का जब बिछड़ गया,
एक मित्र हाथ कु–समय में आज बेचारे का,
तब सारा हलवाई ने लख दूध का समझा गया हालात,
एक चुल्लू पानी डाल दिया बस थोड़ा सा पानी पड़ते ही,
दूध शान्त हो जाता है।
बिछड़ा भाई मिल गया तो वह गले लगाता है।
इस प्रकार प्यार और प्रीत की आप दिखलाओ,
मैं हिन्दू हूँ, वह मुसलमान है, वह सिक्ख यह,
विचार उठ जायेंगे तो निश्चय समझो भारत के वही दिन आयेंगे।

श्री दान सिंह

मेरा नाम दान सिंह है । मेरे पिता का नाम श्री दान सिंह नेगी था। हम ग्राम– अमलापुर पोस्ट आफिस कोटा बाग तहसील जिला नैनीताल के रहने वाले हैं। आजादी की लड़ाई वैसे तो हमारे कोटाबाग में सन् 1921 से प्रारम्भ हुई थी। यहां के बहुत से लोग उस सिलसिले में जेल में गये थे। उसके बाद सन् 1932 का आन्दोलन स्वयं हमने अपनी आंखों से देखा था। मैं तब स्कूल में पढ़ता था। मेरी इच्छा स्कूल में पढ़ने के बजाय आजादी की लड़ाई की तरफ जाने की थी। बाद में हमने स्कूल छोड़ दिया और सन् 41 के स्वाधीनता आन्दोलन में सक्रिय रूप से भाग लेने लग गया। मैंने 5 माह का पहली बार सत्याग्रह किया।

ये सत्याग्रह हमने गांव से प्रारम्भ किया था। उस वक्त लोगों ने हमारा बहुत उत्साह बढ़ाने के लिये फूलमालाओं से विदाई दी। हम लोगों को सजा भी 8 महीने की थी। सत्याग्रह वालों को 20 रुपये जुर्माना न देने पर 9 महीने की कैद थी, लेकिन 20 रुपये जुर्माना नहीं दिया। जब हम लोग जेल से छूट कर आये तो यहां पर मार्च में हमने एक कान्फ्रेंस का आयोजन किया। उस समारोह में विद्यावती राठौर, मालवीय जी, कृष्ण पालीवाल और पन्त जी वगैरह आये थे। आदरणीय पन्त जी ने कहा था, ये बाग हमारा है तो हमें सुन सुन के बड़ी खुशी हो रही थी और हम लोग खुशी से झूमते रहे। सन् 42 का आन्दोलन चला, 8 अगस्त को कुछ लोग पहले ही जेल चले गये थे। हम बाहर थे श्री श्याम लाल वर्मा के नेतृत्व में रहे। वह पहले विधायक रहे और फिर जिला परिषद के अध्यक्ष भी रहे। उनके नेतृत्व में हमने काम किया। जब हम स्कूल जाते थे उनके आन्दोलन में लोग शिविर करते थे और काशीपुर से जो लोग आते थे तो हमारे स्कूल की पढ़ाई में बाधा पड़ती थी। हम आजादी की लड़ाई को बहुत महत्व देने लगे। जब हम लोग बालिग हुये तो हम आजादी की लड़ाई में निकल पड़े और इसमें हमने सजाएं काटीं। एक सजा काट लेने के बाद हमने शिविर लगाया और छः महीने के बाद फिर सजा मिली। छः महीने की सजा हुयी थी उसके बाद एक साल की सजा फिर हुयी। हम अन्दर कैद रहे बहुत दिनों तक लगभग दो साल तक जेल में रहे। उन दिनों जाति, वर्गवाद कुछ नहीं था दो तब के अजादी की लड़ाई लड़ने वाले थे एक नरम एक गरम यहां से जितने लोग जेलों में गये थे सब गरम तबके के थे। उस समय कोई जाति वाद नहीं था। किसी किस्म का वर्ग नहीं था। आजादी मिलने के बाद हम देखते हैं कि कई विद्वान वर्ग सामने आ गये और जो सन् 42 में कारागार नहीं गये थे। आज आजादी मिलने के बाद आजादी की लड़ाई को दबाने में जिनका हाथ था, वही आगे हो गये, हम लोग पीछे रह गये। सन् 72 से हमें पेंशन मिलने लगी। हम पहले बड़ी जीर्ण शीर्ण हालत में थे। यहां तक कि अपने बच्चों को नहीं पढ़ा सके, क्योंकि पैसा कमाने के स्रोत जो होते थे वो सब बन्द हो गये थे।

श्री गोपाल सिंह

मेरा नाम गोपाल सिंह है। जब स्वाधीनता आन्दोलन प्रारम्भ हुआ उस समय मैं जंगल में काम करता था। जंगल में जब आन्दोलन की सरगर्मिया पहुंची तो हड़तालें होने लगी। जंगलात में भी आन्दोलन हो रहा था। हल्द्वानी में दो चार दिन तक हड़तालियों के साथ हम जुलूस में इधर उधर जाते रहे, उसके बाद नैनीताल आ गये तो वहां पर मालूम हुआ कि गांधी आश्रम के जितने कार्यकर्ता लोग हैं सब गिरफ्तार हो गये। उसके बाद हमारे मिलने वालों ने कहा कि चिन्ता की कोई बात नहीं है, हम घर में है, तुम जाओ हमारे भाई लोग देश के लिये जेल गये हैं। सरला बहन और शान्ति लाल त्रिवेदी यह सबसे पहले ही, गिरफ्तार हो गये थे। सरला बहन के साथ हमने 3 तक असहयोग आन्दोलन का काम किया। जैसा भी वो बताया करती थी ऐसा करना है, तब मैं वही करता था। सरला बहन के साथ रहा तो सरला जी मुझे अपना सी०आई०डी० बताया करती थीं, लोगों से परिचय कराती थी कि ये मेरा सी०आईडी० है। मोहन लाल जी के साथ सरला बहन नैनीताल आती जाती थीं। जब भी इधर–उधर जाती थीं, तो मुझे कुछ जिम्मेदारियां सौंप जाती थीं। स्वतंत्रता सेनानी लोग जो गिरफ्तार हो रहे थे तो स्टेशन पर मेरी ड्यूटी थी, कोई बरेली जा रहा है कोई सीतापुर भेज दिया गया कोई लखनऊ गया मतलब उस समय मेरा काम सूचनायें एकत्र करना था और सूचना देना था। सरला बहन के मरने के बाद हमें जो राय सरला बहन ने दी थी, उसी पर चले हम लोग। इस समय जब सरला बहन नैनीताल गयी थीं। गर्वनर के यहां पर काफ्रेंस थी, उस समय भी वो नैनीताल में ही साथ गयी थीं। सन् 42 के बाद गांधी जी आये थे फिर मैं दिल्ली चला गया। जहां–जहां भी मीटिंग होती थी वहां रोज मोहन लाल जी के साथ जाया करती था ये तो वहां पर पहुंचे उस समय हम बाहर ड्यूटी करते थे। हम फौज के सेक्रेट्री भी रहे। उनके साथ भी काम किया। उनके बड़े भाई सान्याल थे। जब वे दिल्ली में थे तो वो भी कहते कि अगर नेताओं के बराबर न पहुंच सको तो उनके रास्ते पर चलने की कोशिश तो करो। वहां देश के जितने बड़े–बड़े नेता थे, एकत्र होते रहते थे, जिनसे हम लोगों को बहुत कुछ सीखने को मिलता था।

इस तरह हम लोगों ने स्वतन्त्रता प्राप्ति को अपने जीवन का उद्देश्य बना लिया था और ये आजादी ही हमारे जीवन की सबसे बड़ी उपलब्धि है।

श्री कान्तिप्रसाद भटनागर

मेरा नाम कान्ति प्रसाद है, तहसील दरियापुर जिला मेरठ में सन् 1916 में पैदा हुआ था। वहां से पढ़ने के लिये मेरठ चला गया था। जब मैं नानक चन्द हाई स्कूल में दसवीं कक्षा में पढ़ रहा था तो उसी समय बड़े जोर शोर से स्वतन्त्रता आन्दोलन चल रहा था। उस आन्दोलन से प्रभावित होकर बहुत से लड़के वहां जाते थे, हिस्सा लेते थे। उसी समय मैं भी स्कूल छोड़ कर आन्दोलन में शामिल हो गया। ये 1930 वाला आन्दोलन था जिसमें हम मेम्बर बनाते थे। कांग्रेस का काम करते थे और जुलूस निकालते थे। सन् 1940 के आन्दोलन में हम जेल भी गये फिर आया ''भारत छोड़ो आन्दोलन''। उसमें अरुणा आसफ अली जी हमारे साथ थीं तो उनके ही हाथ में कांग्रेस की बागडोर थी। गांधी जी तो यही कह कर चले गये थे कि हमारी यही संदेश है कि ''करो या मरो'' इस बात से सब लोगों ने यही समझा कि जिसके जो जी में आये वही करे। बस फिर क्या था कोई पर्चियां फाड़ रहा है, तो कोई आग लगा रहा है। बहुत से डाकखाने बहुत से स्टेशन इस तरह से बर्बाद कर दिये गये। सन् 1940 में मुझे 4 महीने की सजा हुई थी तो मैं मेरठ जेल में रहा था। इन आन्दोलनों में हमारे घर की जमीन भी चली गयी थी। सन् 42 के बाद आन्दोलन चलते रहे, यहां तक कि सन् 47 में आजादी मिल गयी। संयोग की बात कि जब आजादी मिली उस समय मैं गांधी आश्रम में ही था। ये गांधी आश्रम हापुड़ जिला मेरठ में था।

श्री विद्यासागर दीक्षित

सन् 1907 में मेरा जन्म मेरठ जनपद के धरमपुर नाम के एक गांव में साधारण किसान परिवार में हुआ था। मेरे पिता का नाम पं० हरदेव सहाय था। मैं चार भाईयों में सबसे छोटा था। माता–पिता यही चाहते थे कि वृद्धावस्था में उनके पास रहकर उनकी सेवा करुँ और सेवा साधन केवल खेती ही हो सकती थी। लेकिन मैं अपने आपको खेती के योग्य नहीं समझता था, कमजोर था इस वजह से मैंने शिक्षा की ओर मुंह मोड़ा। उनकी इच्छा के विरुद्ध मैं इधर चला आया। मेरी प्रारम्भिक शिक्षा मवाने में हुई। मिड़िल भी वहां के मिडिल स्कूल में दोनों भाषाओं में किया। उस जमाने में, जब मैं प्राइमरी में पढ़ता था तो गणेश शंकर विद्यार्थी जी "प्रताप" नाम का अखबार निकालते थे जो गांव गांव तक पहुंचता था। उसी गांव से प्रेरणा मिली। फिर उसके बाद जब मवाना आया हूँ तो विष्णु शंकर जी काकोरी केस के सन्दर्भ में अंड़मान से लौटे थे, उनसे प्रेरणा मिली। उसी जमाने में मुझे सावरकर की जीवनी और लोक मान्य तिलक जी की पांच छः पुस्तकें पढ़ने का अवसर मिल गया। खिलाफत आन्दोलन भी चलने लगा था। उस समय हिन्दू मुसलमानों में बड़ा प्रेम चल रहा था। कभी मन्दिरों में जलसा हो रहा है तो कभी मस्जिदों में भी हो रहा है। मिडिल करने के बाद मवाने से ही अंग्रेजी का मिडिल किया। उसके बाद हाई स्कूल मेरठ से किया। कालेज की शिक्षा में, मैं जिस वक्त आया था उस समय "साईमन कमीशन" का आन्दोलन चल रहा था। गांधी जी ने कहा "कालेज छोड़ो" तो मैंने पढ़ाई छोड़ दी थी। उसके बाद सत्याग्रह शुरु हो गया और फिर डांड़ी मार्च इस सत्याग्रह में हमारे अनेक लोग संगठित रहते थे और इनमें कालेज के कई प्रो० शीतल प्रसाद थे, उन्होंने ये संगठन किया था। तमाम जिले को तहसीलों में बांट दिया था। एक तहसील मेरे सुपुर्द की गयी और मेरे साथ 4–5 और वालेन्टीयर भी दिये गये थे। उनको साथ लेकर के हम गांव गांव घूमते थे। झण्डा लेकर गाने गाते थे। स्लोगन लगाते थे, लेकिन शुरु में तो लोग घबड़ाते थे। सन् 1857 के सताए हुए थे तो इसमें से कोई पास नहीं आता था। हम वहीं खड़े हो गये और चिल्ला के भाषण दे रहे थे, सुनते थे, लेकिन दूर रहते थे, पास कोई नहीं आता था। लेकिन धीरे से हमने कहा, भाई घबराने की कोई बात नहीं है अब वह आन्दोलन नहीं जो कोई परेशानी होगी। अब तो महात्मा गांधी का अहिंसात्मक आन्दोलन है। इस आन्दोलन में सरकार कोई कुछ और जबरदस्ती नहीं कर सकती, थाने नहीं पहुंचा सकती। वैसे जैसे पहले अत्याचार हुए हैं अब तो हो नहीं सकते क्योंकि अब कम्पनी का राज्य तो खत्म हो गया था। अब यह ब्रिटिश एंपायर का राज्य है, तो राज्य भी बदल गया है। फिर लोग आना शुरु हो गये और अब तो इतने आये कि पता चलता था कि कहीं उत्सव हो रहा है। भारी भीड़ इकट्ठा हो जाती थी। फिर तो गांव गांव में इस तरह से जलसे हुआ करते थे। मैं 7 सितम्बर 1930 में गिरफ्तार हो गया। हम गिरफ्तार हो के मेरठ जेल गये। मेरठ जेल में बहुत से साथी पहुंचे थे। बहुत भीड़ थी। वहां अपने आप ही अपने का आफर किया क्योंकि वहां मेरठ जेल में 30 अभियुक्तों को बेंतें लगाई थी। वह बेंत इतने भयंकर किस्म के थे कि हिन्दुस्तानियों ने तो मना कर दिया था। अंग्रेजों ने ही फिर लगाये और वह टिक टिकी में बांधते थे। नंगा करके हाथ पैर से बांध देते थे। फिर एक दौड़ करके बेंत लगाता था। उसके साथ सांस उखड़ता चला आता था। ऐसे तीसों दलों को बैरक में डाल दिया था। उनको फिर टिंचर लगाते थे। फिर चिल्लाते थे, कितनी परेशानी। इससे फिर आन्दोलन में शिथिलता आई

जेलों में आने से लोग रुके और घबराए। फिर मैंने कहा कि अपने आप को आफर करना चाहिए। मैंने अपने को आफर किया और जेल चला गया। जेल में जाने कितने लोग मिले। जेल में जाते ही यह हुआ कि वहां वार्ड के आगे चौक में बहुत से हमारे साथी गोल घेरे में बैठे हुए थे और वहां पर जलियां वाला देवनाम आर्य उसके संबंध में कुछ कहने जा रहे थे। लेकिन कोई बोलने को तैयार नहीं था क्योंकि जेल के प्रेशर से, बेंतों से डर रहे थे। जब मैं गया तो कह रहे थे कि भाई, नौजवान आ गया भाई नौजवान आ गया और यह उन्होंने कहा भाई जलियांवाला पर तुम बोलो तो मैंने जलियांवाला पर भाषण दे दिया। भाषण देने के बाद उसी वक्त यह हो गया कि इसे यहां से भेज दो और स्टेशन ले चलो बाहर। लेकिन सुपरिन्टेण्डेण्ट ने कहा रात में इसे यहीं रहने दो और सुपरिण्टेण्डेन्ट के सामने पेश करना कल – रात। पट्टा वट्टा जो मिलता है, वह ले आये। अगले दिन सुबह ही सुपरिन्टेण्डेण्ट के सामने पेशी हुई और पेशी में उसने कह दिया कि सोलेडिटरी सेल में वही भेजा जाता है जो मर्डरर्स होते हैं। लेकिन हमें भेज दिया गया। तो सामने हमारी सोलेडिटरी सेल में बैठे थे जिनके बेंत लगी थी। तो हमने जाते ही कह दिया भैया घबड़ाओ मत गाने शुरु करो नारे लगाने शुरु करो। जोर–जोर से हम बोलते थे तो अफसरों ने धमकाया कि क्या करते हो तुम ये क्या करते हो। हमने कहा कि यही करने के लिए हम यहां आये। हम तो सारे नियम तोड़ने के लिए आये हैं। कानून तोड़ना हमारा काम है। अगले दिन फिर पेशी होने के बाद उन्होंने कहा अच्छा अब क्या करना है तो बेड़ी डाल दी गयी। बेड़ी डालने के बाद भी हम नाचते कूदते थे। निकलते भागते खुल जाते थे। तो कभी भागते थे। कबड्डी खेलते थे और शोर मचाते थे। नारे लगाते थे फिर बेड़ी और डंडा भी हो गया। फिर भी उसके बाद शोर मचाएं। शोर मचने के बाद एक वह होता है, ल्यूनिहिक वार्ड। जब कोई पागल हो जाता है कैदी उसमें डाल दिया जाता है। वह कोठरी भी मुझे दे दी गयी। वही एक कम्बल। दिसम्बर का महीना आ गया था, बड़ी ठंड पड़ रही थी। यह सब गरम गरम लोग, बड़ा ठंडा लगता था। किसी तरह पैर से हाथों से रगड़ रगड़ के गर्मी लाते थे और रात का अगर प्यास लगती थी तो वही कटोरा जंग लगा हुआ उसी में पानी पीना पड़ता था और दरवाजे पर ही वह ड्रम रक्खे हुए थे, जिसमें पेशाब करते थे बैरक के बीच का हिस्सा था। सारे कैदी उसमें रात को बन्द किये जाते थे। सारे वहीं पेशाब करते थे। पेशाब की बदबू सड़ती थी।

उसके बाद हमारे और भी बहुत साथी थे। उन्होंने कहा कि हम तो पोलटिकल प्रीजनर्स हैं हमको या तो 'बी' क्लास दो या तो 'सी' क्लास दो। बी–क्लास वाले भी उनको मिलते थे जो ग्रेजूयेट थे तो ग्रेजूयेट होने के नाते हमको बी–क्लास मिली थी। लेकिन अभी तो मैं और चक्करों में फंसा था। तो इसकी वजह से जिलाध्यक्ष नाराज होकर के हमको बाहर जेल भेज दिया गया। तो मुझे अपने साथियों के साथ जबरदस्ती खींच खींच करके ट्रकों में भर भर के ट्रेनों में भेज दिया और ट्रेन में चले तो लोग बड़े स्वागत करते रहे जगह–जगह। बड़ा अच्छा जोश था लोगों में। हम फैजाबाद पहुंच गये। तो फैजाबाद में जो जेलर था, बहुत बदमाश था। उसका नाम याद नहीं, बड़ा दुष्ट था। जब वहां रहे तो मौलाना आजाद भी वहीं थे तो वह वहां के दालान में कैम्प लगा था, उसमें रह रहे थे और ये पं0 सुन्दर लाल जी जिन्होंने "भारत में अंग्रेजी राज्य" लिखा था वह भी वहां थे। वहां के दालान में कैम्प लगा था, उसमें रह रहे थे और कानपुर के, धरमपुर के, इलाहाबाद के सब जगह के अनेक प्रकार के कैदी थे। उसके बाद में हम छोड़ दिये गये। वापस आ गये तो पता चला कि पुत्र का पिता बन गया

हूँ। मैं जेल में था और पुत्र हो गया था। माता–पिता ने पत्नी को निकाल दिया था। घर से बाहर वह तो आशा करते थे। मैं सेवा करुंगा। मैं दूसरे चक्कर में चला गया। जेल में साढ़े छः सौ जुर्माना हुआ वहीं 380 की कुड़की लेकर जो पुलिस पहुंची तो उन्होंने कह दिया यही कोठरी है। इसी में रहता था वह वहां से उन्होंने सामान हटा दिया था। समस्या यह हुई, साथियों ने यह कहा कि कांग्रेस का जो दफ्तर है इसमें तुम रहो, तनख्वाह तुमको मिल जायेगी। मैंने कहा जो भी काम हो मुझे पैसा लेकर नहीं करना हमारे साथी शीतल प्रसाद जी मिश्र थे उनके मित्र मेहता जी ने उदयपुर में एक पब्लिक स्कूल खोला था। बहुत ऊँचे दर्जे का था, विद्या भवन उसका नाम रक्खा गया था। तो शीतल प्रसाद ने मुझे वहां भेज दिया। चार साल वहां रहा। बी०टी०सी० किया बनारस से। बी०टी०सी० करने के बाद में आफर मिल गया।

श्री बाबूराम त्यागी

मैं बाबू राम त्यागी 2 जनवरी सन् 1924 में पैदा हुआ था। मैं कोठी जनपद मेरठ का रहने वाला हूँ। मैं सन् 42 में जब स्कूल में पढ़ता था तो वहीं से कांग्रेस में शामिल हो गया था। उसी जमाने में उमा जी का भाषण भी हुआ था। उमा जी ने भाषण में कसम दिलायी कि गुलाम देश में नहीं पढ़ना है और गुलाम देश की शिक्षा नहीं ग्रहण करनी है। मैंने इसी समय से तय कर लिया था कि मैं स्कूल नहीं जाऊँगा। मेरे साथ–साथ और सवा सौ बच्चों ने स्कूल छोड़ दिया था। हम भी नहीं पढ़ेंगे। खैर एक मास्टर अतरसिंह थे, अमरगढ़ के रहने वाले। हेड मास्टर थे, वहां उन्होंने मुझे बहुत समझाया। बहुत कहा कि तुम नहीं जाते हो तो इन बच्चों को और भेज दो। तुम इन बच्चों को क्यों नहीं जाने देते हो। तो मैंने कहा कि बच्चे अगर जाना चाहे मैं रोकूंगा किसी को नहीं, मैं नहीं जाऊँगा। किसी भी कीमत पर, मैं अपना ऐसे ही चलता रहा और आन्दोलन शुरु था ही लोग–बाग जेल जा रहे थे। यहां एक दफ्तर खुला हुआ था और डा0 जितेन्द्र प्रसाद उसके प्रेसीडेन्ट थे उनके पास आया उन्होंने मुझे काम दिया कि तुम रोजाना गांव में जाओगे और पम्पलेट ले आओगे। सवारी का कोई साधन नहीं था। मैं बारह मील कोठी गांव से रोजाना मेरठ जाता था और जो कि दोपहरी में नंगे पांव जाके बाहर गांव में पम्पलेट तकसीम करने के बाद ही मैं तभी आराम करता था।

पर्चे बड़े प्रभावशाली होते थे। उनमें असहयोग की क्रान्ति थी। लिखा रहता था कि "सरकार को किसी भी प्रकार से सहयोग न दें। इसको जड़ से उखाड़ फेंकना है और इसको किसी भी हालत में यहां नहीं रहने देना है। कोई अंग्रेज सामने आ जाए और मौका लगे तो उसे समाप्त कर देना।" यही शिक्षा हमें मिली थी और यही हम लोगों से क्रान्तिकारियों द्वारा कहा जाता था। एक समय की बात है। उस दफ्तर पर पुलिस का छापा पड़ने की बात आ गयी तो हमें दिन में पता चल गया कि आज छापा पड़ने वाला है। अब मेरे पास कोई चारा नहीं था। तमाम पम्फ्लेट का गठ्ठर सर पर रख कर मैं बिल्कुल नंगा हो गया और पागल बन गया और रास्ते में ए–ए–ए करता हुआ चला गया। मैं और रात में ही पूरे गठ्ठर को लेकर सुखराम के यहां सदर पहुंचा। वह गांधी आश्रम में काम करते थे। वह गठ्ठर रखकर, मैं वापस आया। उसके बाद मैं कहीं कोई ऐसी पार्टी और मुझे कोई ऐसा साथी नहीं मिला तो फिर मैं यहां गुरुकुल में आ गया। यहां विक्रमपाल भारती जी के साथ रहने लगा विद्यार्थी भेष में। मैं और भारत चन्द्र तथा एक और विद्यार्थी सब वहीं रहते थे। हम लोगों ने रात को प्रोग्राम बनाया कि हम, अमर सिंह, पुर के विजय पाल सिंह, रामस्वरूप, पूर्णचन्द्र आजाद, दर्शन सिंह, ईश्वर सिंह और आशाराम स्वरूप, घोड़ी वाले सब के सब वहां पहुँचें। जमुना दत्त ब्रह्मचारी और हम सब वहां पहुंचे मिट्टी के तेल की कनस्तरी मेरे साथ में थी और जमुना दत्त के एक हाथ में बल्लम और दूसरे हाथ में बन्दूक थी। जिलेदार के पास हम पहुंचे और हमने उनसे कहा भाई तुम हमें चाभी दे दो। हमें उसने चाभी देने से इंकार कर दिया और उल्टे हमें गाली दी। अब उसने हमें गाली दी तो हमें गुस्सा आ गया और जमुना दत्त ने बल्लम मार दिया। वह मर गया इतनी देर में जो एक तार बाबू था, जिसे हमने बन्द किया था, किसी तरह छूट के वह भाग गया और मवाना पहुंच गया। मवाना हम पहुंचे तो वहां पुलिस की लारी आती दिखायी दी। हम लोग रात भर स्टेशन पर परेशान रहे फिर दो

तीन दिन के बाद हम छितराना में इकट्ठे हो गये। रात को वहां भी पुलिस पहुंची। मवाने में जो गोली काण्ड हुआ था उसके मामले में पुलिस मवाने पहुंची। मवाने के गोली काण्ड में मैं भी था। वो रिवाल्वर जो जब्त हुई थी, मेरे हाथ लग गयी थी। आशाराम घोड़ी वाले ने लाठी मारी थी, उनके हाथ पर और रिवाल्वर नीचे गिर गयी थी। भरी–भरायी दूसरे रिवाल्वर से उन्होंने वहां गोली चलायी थी, जिससे चन्द्रभान मारे गये थे। यह 16 अक्टूबर 1942 की घटना है।

ये चन्द्रभान मवाने वाले मारे गये थे। मैं तो वहीं मौजूद था। एक के और भी गोली लगी थी। लेकिन उसका नाम कहीं आया नहीं कि बेचारा कौन था। कोई नहीं जानता। हमारा प्रोग्राम यह था कि हम तहसील को लूट लेंगे डाकखाने को लूट लेंगे। डाकखाने को लूटने के बाद यही इरादा था कि अब ब्रिटिश गर्वनमेन्ट को बर्बाद करना है और अब चलने नहीं देना है। जैसे भी हो इस अंग्रेज को भगा देना है यहां से। तो हम अपने घर चले आये। इसके चार–पांच दिन बाद में बहुत सारी पुलिस और दो अंग्रेज आये थे। मैं नहीं जानता किस पद पर थे। दरोगा नारायण सिंह भी थे, वो लोग वहां पहुंचे। उनके साथ लगभग 26 सिपाही थे। फिर उन्होंने गांव की तलाशी ली। नन्दू घोड़ा नाम था उनको गिरफ्तार कर ले गये। उसको गिरफ्तार करने के बाद उसे जेल भेज दिया, फिर हम लोगों ने छितवाने में अपना अड्डा बना लिया। गुरुकुल के नाम से और वहीं रहने लगे। एक रात को वहां भी पुलिस पहुंची। 24 सिपाही थे, चार दरोगा थे, एक अंग्रेज था, उनके साथ में हमारी तलाशी ली गयी तो हमको तो उन्होंने रास्ते में ले जाकर छोड़ दिया। भाग जाओ यहां से ये विद्यार्थी हैं कह कर छोड़ा था। शिक्षार्थी जी और विक्रमपाल को गिरफ्तार कर ले गए थे। एक थे कुन्टा शास्त्री, उनका सही नाम भी याद नहीं रहा। उनको भी गिरफ्तार कर लिया था। तीनों को जेल भेज दिया। वहां से ये और अमरपुर पहुंचे अमरपुर से चन्दर वगैरह को गिरफ्तार किया और फिर वहां से सीधे थाने आ गये। उसके बाद वहां से तीन चार दिन बाद हम गांव में आये और एक जलसा किया। जलसा किया तो रात में एक बजे मुझे भी गिरफ्तार कर लिया। पुलिस ने लाकर और थाने में रक्खा। थाने में मुझसे कहा माफी मांगो। मैंने कहा मांफी तो मैं नहीं माँगूँगा, मैंने कोई डकैती तो की नहीं है। बोले नहीं तुझे माफी तो मांगनी ही पड़ेगी। मैंने कहा मैं माफी क्यूँ माँगू मैंने कौन सा ऐब किया है जो मैं माफी मांगू। इतने में मेरे ताऊ और मेरे कुटुम्ब के एक भाई भी वहाँ पहुंच गये। नारायण सिंह से कहने लगे भई आइन्दा ये कोई ऐसा काम नहीं करेगा, तुम इसे छोड़ दो। दरोगा जी कहने लगे नहीं इसको नहीं छोड़ेंगे। ये माफी तो मांगते नहीं। ताऊ कहने लगे मांफी मांग लो। मैंने माफी नहीं मांगी खैर उन्होंने मुझे उस दिन तो छोड़ दिया। तीसरे दिन मैंने फिर जलसा किया, तब तो मुझे लारी में भर ले गये और बुलन्दशहर में जाकर छोड़ दिया। एक वफा मुझे मुजफ्फरनगर में जाकर छोड़ दिया था। और इस तरह पकड़े जाते रहे हां मुझे जेल नहीं भेजा मैंने काफी कोशिश की थी मुझे दो चार चाटे मारे गए थे कि तुम मानते क्यों नहीं बड़े बदमाश हो तुम्हारी बुरी हालत कर देंगे और 40 बेंते तुम्हारे रोज लगेंगी।

श्री खोटेलाल शाह

मेरा जन्म 18 मई सन् 1912 का है। उस समय मैं आठ वर्ष का था जब यहां गांधी जी का आन्दोलन छिड़ा हुआ था। उन्हीं दिनों सारे देश में दो बड़े राजकीय स्कूल खोले गए। उसमें से एक स्कूल अल्मोड़ा में था। उस समय मैं प्राइमरी स्कूल में दर्जा एक या दो में पढ़ता था। हमारे साथ और भी साथी पढ़ते थे। हम गांधी जी के आन्दोलन से प्रभावित होकर वह स्कूल छोड़कर राजकीय स्कूल में चले गये।

राष्ट्रीय स्कूल लाला बाजार में था। मद्रास के लाला त्रिभुवन हमारे संचालक थे, स्कूल मास्टर थे गंगाप्रसाद। उन्होंने भी नौकरी छोड़ दी। वह भी इसी स्कूल में आये। शिखाउद्दीन मोहम्मद, रामलाल गर्वा, पंत जी, जोशी जी यह सब लोग हमारे स्कूल में आ गये। मथुरा दत्त त्रिवेदी, प्रभुदत्त पाण्डेय जी, मोहन जोशी, हर गोविन्द पन्त, देवी दत्त पन्त, आदि सभी ने बड़ी योग्यता से यहां अंग्रेजी राज्य के खिलाफ आन्दोलन चलाया।

मुझे राष्ट्रीय आन्दोलन में शामिल होने की प्रेरणा अपने चाचा जी और मेरे बड़े भाई कृष्ण दयाल शाह से मिली। मेरे चाचा सन् 1920 में नागपुर में कांग्रेस की सभा में भाग लेकर लौटे थे।

सन् 1928 में साईमन कमीशन के खिलाफ अल्मोड़ा में आन्दोलन छिड़ा इसमें जोरों से भाग लिया था मैंने। जब सरदार भगत सिंह बम केस में पकड़े गये तब हम गाया करते थे – "सरदार भगत सिंह सा प्यारा"। गान्धी जी द्वारा चलाए गए आन्दोलन के समय के गीतों का वर्णन क्या करुँ। हिन्दू मुसलमान का कोई फर्क नहीं था। तब हम गाते थे –

सितम है सितम है सितम कर रहे हैं।
जो टर्की का रकना हजम कर रहे हैं।
खुदा करते ऐसे सरी की जुरारत,
जो विशुन सिंह से दगा कर रहे हैं।
सितम है सितम है..........

हमारे एक साथी थे। गुलाब नाम था उनका। उनकी आदत थी कि वह चलते थे। बाजार में तो कहते जाते थे –

खुदा ये खुश रखे हमेशा,
गान्धी जी महाराज को।
खुदा ये खुश रखे हमेशा....................

एक थे हमारे सत्यजीत परिब्राजक साहब। वह बहुत अच्छा भाषण देते थे, कहते थे –

आ गया करने को, कुछ कर्म करना सीख ले।
आ गया है कर्मयुग, कुछ कार्य करना सीख ले।
मारने का नाम मत लो, पहले मरना सीख लो।

सन् 1941 के सत्याग्रह के दौरान मैं कांग्रेस कमेटी का ज्वाइंट सेक्रेट्री था और मेरे साथी शरत चन्द्र जोशी सेक्रेटरी थे। तहसील में मैंने सत्याग्रह किया था। पं0 गोविन्द वल्लभ पन्त तो अल्मोड़ा जेल में थे और नेता वहां थे। मुझको जहां तक याद है, 4 अप्रैल का दिन। मुझको गिरफ्तार करके ले गए। उन्होंने मेरा ट्रायल लिया जेल के अन्दर ही। और पांचवे–छठे दिन मुझको और मेरे पांच–छः साथियों को मुरादाबाद भेज दिया। अल्मोड़ा जेल में हमे जो राशन मिलता था, वह सड़ा था। घुन लगा हुआ था। उसी समय कमिश्नर आने वाला था। मैंने एक पुड़िया में राशन बांध के अपने पास रख लिया कि दिखाऊँगा उसे। जेल वालों को मालूम हुआ कि हम विद्रोह करेंगे तो मुरादाबाद भेज दिये जायेंगे। मुझे 100 रुपये का दण्ड भी दिया गया और न देने पर 4 माह का कारावास भी सुनाया गया था।

9 अगस्त सन् 1942 से 26 अक्टूबर 43 तक, मैं नजर बन्द कर दिया गया था। 26 जुलाई सन् 42 को पं0 गोविन्द वल्लभ पन्त ने हमको बुलाया नैनीताल। वहां पंत जी के साथ मैंने काम शुरु किया। 9 अगस्त को हमारी सभा हुई काला बाजार में। बटुकेश्वर दत्त हमारे साथ में थे। सवाल यह हुआ कि हमें क्या करना चाहिए। उन्होंने कहा– कि तुम गांधीवादी हो। अगर वारंट निकलता है, तो तुम चले जाओ – जेल। फिर देखी जायेगी, जो कुछ होगा। हमारी सभा काला बाजार में हो रही थी, तभी पुलिस आ गई। अब भइया, भगदौड़ मच गई। मेरी ड्यूटी वहीं पास के मन्दिर में थी। दरवाजे पर ही पुलिस ने गिरफ्तार किया और 26 अक्टूबर तक नजरबन्द रखा।

मैं तो आजादी की लड़ाई का एक मामूली सिपाही था। अपने नेताओं का आदेश आंख मूंदकर पालन करता रहता था। सपना बस एक ही था कि अंग्रेजो से अपना स्वराज लेना है और वह 15 अगस्त 1947 को सच हुआ – भारत वर्ष आजाद हो गया।

श्री राजेश्वर शास्त्री



मैं राजेश्वर शास्त्री, ग्राम मवाना जिला मेरठ का रहने वाला हूँ। दर्जा 4 के बाद मैं, रुदौली चला गया। वहां मेरे गांव में 20–25 लड़के और पढ़ते थे। उसमें चाचा जी राम खरे शास्त्री जी, अविनाश चन्द्र शास्त्री जी और कई लोग थे। वहां पर गुरुकुल एक राष्ट्रीय संस्था थी। देश भक्ति का पाठ हमने गुरुकुल में ही पढ़ा था। पास में ही मेरठ होने के कारण अंग्रेज लोग वहां अक्सर आया जाया करते थे। बड़े–बड़े नेता गुरुकुल में आते थे। लाल बहादुर शास्त्री, बी0के0 दत्त और इनके परिवार के तथा कांग्रेस के और भी जितने लोग थे, वह सब गुरुकुल में आते थे। सभी ने लेक्चर दिये। सभी ने यही पूछा कि तुम बड़े होकर क्या करोगे? तो हम सब लोगों का एक ही उत्तर था कि हम देश के लिए रहेंगे और देश के लिए मरेंगे। पैसा, आडम्बर, सर्विस–वर्विस जैसी कोई बात ही नहीं थी। सब लोग देश भक्ति के कायल होते थे। स्नातक करने के बाद मैंने मेरठ में कालेज ज्वाइन कर लिया था और बी0एड0 में दाखिला लिया। वहीं हम जैसे तीन साथी मिल गए, जो अंग्रेजी के कट्टर विरोधी थे। सीधे सादे कपड़े पहनना, खादी की धोती, कुर्ता, पाजामा और हिन्दी बोलते थे। हम तीनों ही ऐसे थे जो हिन्दी भाषा में बात करते थे।

वहीं गुरुकुल में एक मास्टर जी थे, बड़े क्रान्तिकारी एक दिन पास के ही खतोही ब्रिज तोड़ने की योजना बनी। हम पांच लोग – मैं, शास्त्री जी, जगन्नाथ प्रसाद, मास्टर नन्द महावीर और रणवीर सिंह, वाचस्पति शास्त्री ब्रिज तोड़ने चल दिए। जगन्नाथ प्रसाद वायरलेस डिपार्टमेन्ट का आदमी था। वह सारी स्थिति हमें बताता था। जैसे ही हम नहर पार करके ब्रिज के पास पहुंचे आवाज आई – हैण्डस अप। हम गिरफ्तार हो गए। दूसरे दिन हमें मुजफ्फरनगर जेल भेज दिया गया। 8–9 महीने अण्डर ट्रायल में रहे, केस चलता रहा। सेशन कोर्ट ने पांच साल की सजा सुना दी। मुजफ्फरनगर जेल में तो मैं आराम से रहा। हम और हमारे साथी जेल के और दूसरे साथियों के साथ आराम से रहते। सब मिल बांट कर खाना खाते और नारे लगाते थे।

कुछ दिनों बाद हमारा ट्रान्सफर बरेली सेन्ट्रल जेल में हो गया। वहां हमको कड़ी सजा दी गई, हमें चक्की पीसनी पड़ी। चक्की भी इतनी बड़ी–बड़ी होती थी कि दो आदमी से चलती न थी, तो हम चार–चार आदमी लगते थे। नम्बर बार दिन–दिन भर चक्की पीसी। चक्की पीसने से भूख बड़े जोरों से लगती थी किन्तु रोटी खायी और मस्त पड़े रहे। इसी बीच कुछ दिनों बाद हमारा केस हाईकोर्ट चला गया। हाई कोर्ट से हमको जमानत मिल गयी। हम चार लोग तो जमानत पर छूट गये, किन्तु दो लोग वहीं रह गए।

उन दिनों गुरुकुल स्वतन्त्रता आन्दोलन का प्रमुख केन्द्र था। विद्यार्थी – आचार्य सभी आन्दोलनों में भाग लेते थे। एक समय ऐसा आया जब विद्यार्थी–आचार्य सभी गिरफ्तार हो गये। सन् 42 के आन्दोलन में ताला लग गया, गुरुकुल में। सन् 42 से बन्द गुरुकुल सन् 44 में फिर से खुला। मुझे खूब

याद है जब बटुकेश्वर दत्त और सुचेताकृपलानी भी गुरुकुल में भाषण देने आई थीं। बटुकेश्वर दत्त जी लम्बी सी लाल कमीज पहने हुए थे। उनके स्वरूप और भाषण दोनो से मैं बहुत प्रभावित हुआ था।

9 अगस्त 1942 आ गया। हम लोगों का कुछ पता नहीं। खबर आयी कि ''भारत छोड़ो आन्दोलन'' शुरु हो गया। रातों रात पैमफ्लेट बांटे जाते। हम और हमारे साथी भी पैमफ्लेट बांटने में लगाए गए। सन् 1942 के आन्दोलन में जब मैं जेल में था, उस समय के कई समकालीन राष्ट्रीय नेता मेरे साथ रहे। वहां केशव देव, वकील साहब, ब्रह्म प्रकाश जी, सुमन प्रकाश जी, एक संयासी थे – आर्य समाजी, ज्वाला प्रसाद जी, और भी बहुत से लोग साथ रहे थे।

श्री होतीलाल अग्रवाल



मथुरा जिले के ग्राम संकटपुर में मेरा जन्म सन् 1916 में हुआ था। हिन्दी उर्दू से मिडिल पास करके आर्य समाज का कार्य करने लगा। इन्हीं दिनों समाचार पढ़े कि अफ्रीका से कोई गांधी जी नाम के व्यक्ति आए हैं। गांधी जी के बारे में सुन–सुन कर हम आर्य समाज छोड़कर कांग्रेस में आ गए । सन् 1938 में, मैं बाँदना का मण्डल सेक्रेट्री था। तभी मथुरा में नेहरू जी की राष्ट्रीय कान्फ्रेन्स हुई। वहाँ करीब 20 स्वयंसेवकों के साथ में जमा थे। मुझे जत्थेदार बनाया गया। मेरे जिम्मे काम यह था कि नेहरू जी को कैम्प से सभा मंच तक लाना और वापस कैम्प तक ले जाना।

गांधी जी द्वारा जब सविनय अवज्ञा आन्दोलन शुरू हुआ, तब सन् 1948 में मैं अपने साथियों के साथ सत्याग्रह पर बैठ गया। शाम की 4 बजे वहां के व्यापारियों ने फूलों और मेवाओं की माला लेकर मेरा और मेरे दो साथियों का खूब सत्कार किया। रात में थानेदार ने हमें पकड़ कर थाने में बंद कर दिया। उस रात हमें वहां बहुत मुसीबतों का सामना करना पड़ा। सुबह हम तीनों की मथुरा रवानगी कर दी गई। उसके बाद हम आठ महीने जेल में रहे। जेल में हमें बड़ी मुसीबतों का सामना करना पड़ा। संघर्ष भी होते रहते थे, तकरीबन 400 सत्याग्रही मथुरा जेल में थे। एक प्रकार से हमने वहां मन्दिर बना दिया था। आठ महीने बाद हम वहां से छूटे । जेल में घटित एक घटना मैं आपको बता दूँ। गर्मी का मौसम था। बड़ी भारी गर्मी पड़ रही थी, सभी बैरक में सोते थे। हमने कहा हम बाहर जायेंगे।

जेलर ने कहा– हम ऐसा कर सकते हैं। गर्मी सहन नहीं होती थी। बाबा हठीला बोले–सब बाहर सोयेंगे। सब के सब बाहर सो गये। हमनें कहा कि जायेंगे नहीं उठा के ले जाओ हमें। तब सबको एक–एक करके वार्डेन ने बैरक में पहुँचाया। फिर चार दिन बाद आर्डर हो गया कि सभी सत्याग्रही बाहर सोयेगें।

सन् 1940 में जन सत्याग्रह आन्दोलन के दौरान मैंने नोटिस दिया कि मैं होती लाल अग्रवाल, चौधरी दिलीप सिंह और चौधरी डाल चन्द, हम तीनों तारीख याद नहीं, शाम के 4 बजे कस्बा नादने में सत्याग्रह में हमने नारा दिया था कि ब्रिटिश सरकार को ''ना एक भाई ना एक पाई'' कुछ भी सहयोग नहीं देना हैं। इस आन्दोलन के बाद जितने दिन मैं जेल में रहा, मेरी पत्नी ने सात महीना एक टाइम खाना खाया और जमीन में सोई । किसी ने कह दिया कि वो (उसके पति) जमीन में सोते हैं और उन्हें एक टाइम खाना मिला है। सो वो भी इसी तरह से रही।

सन् 42 में जब गांधी जी ने ''भारत छोड़ो'' नारा दिया, उसके बाद फिर क्रान्ति हो गयी। तब बहुत से लोग जेल चले गये। बहुत से लोग छिपकर काम करने लगे। हम नहीं पकड़े गए। हमने सोचा भी कि हम कैसे जायें कि कोई पकड़ ने ले। एक हमारे बराबर का पटवारी था। उस समय लड़का ही था। वह हमसे बोला कि मेरे दफ्तर में आग लगा दो और चले जाओ जेल। मैंने कहा भाई तुम्हारे खाता खतौनी सब जल जायेंगे। किसानों का अहीरा होगा। यह मेरे बस का नहीं है। तो सन् 1942 में मैं जेल नहीं जा सका।

अंततः 15 अगस्त सन् 1947 को जब आजादी मिल गई तो मुझे बहुत खुशी हुई। साथ ही दुख भी हुआ कि एक देश के दो टुकड़े हो गए।

श्री मोतीराम जोशी

मैं मोती राम जोशी, मेरा जन्म अल्मोड़ा से 4 मील दूर नौबांब ग्राम में 18 अप्रैल सन् 1921 को एक गरीब ब्राह्मण परिवार में हुआ। जब मैं 3 वर्ष का था तभी मेरे पिता जी पूरा परिवार छोड़कर इस दुनिया से सदा के लिए चले गए। सन् 26 में हम प्राइमरी पाठशाला में अध्ययन के लिए भेजे गए। वहां हमको कताई तकली पर सिखायी जाती थी। सन् 1926 में, मैं गवर्नमेंट मॉडल स्कूल, अल्मोड़ा से कताई, बुनाई, रंगाई, धुलाई आदि की शिक्षा प्राप्त कर चरखे पर कताई बुनाई का काम करने लगा। मुहल्ला शिलाखोला के श्री देवदत्त पन्त के घर में उन दिनों कांग्रेस सत्याग्रह का कार्यालय था। वहां बड़े जोशीले गीत गाये जाते थे। मुझे भी गाने का बड़ा शौक था। उन्हीं गीतों से प्रभावित होकर मैंने भी राष्ट्रपिता द्वारा चलाये जा रहे ''असहयोग आन्दोलन'' में भाग लेने का मन बनाया। उस समय द्वितीय विश्व–युद्ध हो रहा था। एक ओर अंग्रेजों के नौकर गांव–गांव में जाकर लोगों को प्रलोभन देकर फौज में भर्ती करा रहे थे। दूसरी ओर गांधी जी ने अंग्रेजों से असहयोग आन्दोलन करने का आह्वाहन किया कि हमें भी भारत माता की गुलामी की जंजीर की कड़ियों को तोड़ने के लिए सत्याग्रह की आवश्यकता है। मेरे पूर्व जन्म के संस्कार अच्छे होंगे कि मुझे गांधी जी की सेना में जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। सन् 1940 में, मैंने सत्याग्रह में भाग लिया तथा ''भारत छोड़ो'' की अन्तिम लड़ाई सन् 1942 में जेल जीवन व्यतीत करने का भी सुअवसर प्राप्त हुआ।

सन् 1941 के ''व्यक्तिगत सत्याग्रह'' आन्दोलन के समय हमको यह लग रहा था कि हमारे जैसे गरीब आदमी के जेल जाने से देश आजाद हो जाएगा। हमारे नेता महात्मा गांधी की कथनी और करनी में कोई फर्क नहीं था। वह सत्य और अहिंसा के पुजारी थे। उन्होंने बैरिस्टरी का चोला फेंककर यह आन्दोलन छेड़ा। हमारे लिए हुक्म था कि तुम्हें अगर कोई एक डण्डा मारे तो तुम दूसरा डण्डा खाने के लिए भी तैयार हो जाओ। तुम्हारे गाल में कोई एक चपत मारे तो आप उसको चपत लगाने के लिए दूसरा गाल भी दे दो।

उस समय अल्मोड़ा की सारी जेलें भर गयीं थीं। कैम्प जेल भर गए थे। आखिर अंग्रेजों ने मजबूर होकर सत्याग्रहियों को कम सजा देकर और फिर सबको जेल से छोड़ ही दिया। मुझे सिर्फ एक बेंत और 25 रुपये जुर्माने की सजा हुई थी। उस 25 रुपये की वसूली के लिए मेरी जमीन जायदाद की कुड़की भी की गयी थी। हम तो इतने गरीब ठहरे कि हमारे पास 25 रुपये तो दूर 25 पैसा भी नहीं था।

8 अगस्त 1942 को कांग्रेस कमेटी के समस्त कार्यकर्ता गिरफ्तार हो चुके थे। 9 अगस्त से सारे देश में धर–पकड़ शुरु हो गई थी। 2 अक्टूबर को महात्मा गांधी का जन्म दिन था। गांधी जयन्ती मनाते समय हम केवल 6 आदमी बचे थे। उस समय मेरे साथ कमल सिंह, किशन, गंगाधर पाण्डेय, गिरधर लाल शाह और एक कोई और था, इस समय नाम याद नहीं रहा। सन् 42 की 2 तारीख के जुलूस में हम बस छः आदमी थे, सातवां आदमी कोई नहीं था। हमारे साथ पुलिस के आदमी थे। हम सारे अल्मोड़ा शहर में चक्कर लगाकर थाने वाली सड़क पर पहुंचे तो उस समय हमको सड़क पर गिरफ्तार कर लिया गया और थाने में लाकर जेल पहुंचाया गया। हमारा फैसला 29 अक्टूबर को हुआ। हम

हवालाती कैदी की तरह 26 दिन हवालात में रहे। जेल में हमसे चक्की पिसवाई गई। रस्सियां बंटवाई गई। हमको इतना आतंकित किया गया कि हम किसी प्रकार माफी मांग लें। लेकिन गांधी जी ने हमको ऐसा बल दे रखा था कि हमने माफी नहीं मांगी।

हम अपनी प्रतिज्ञा पर दृढ़ रहे और ईश्वर की कृपा से अपना सौभाग्य समझ रहे थे कि गांधी जी की सेना में भाग लेने का अवसर प्राप्त हुआ। 15 अगस्त 1947 को हमारा देश आजाद हो गया और जिस कुर्सी पर भारत का आखिरी बादशाह लार्ड माउण्ट बेटन बैठता था, उस कुर्सी पर जवाहर लाल नेहरू प्रधानमन्त्री के रूप में बैठाए गए।

श्री पृथ्वीनाथ चतुर्वेदी



मैं मथुरा निवासी हूँ। 29 अगस्त सन् 1916 में मेरा जन्म हुआ था। जन्म के एक वर्ष बाद मेरे बाबा का देहान्त हो गया। तो पिताजी मुझे लेकर कलकत्ता चले गए। प्राइमरी शिक्षा मैंने कलकत्ता के माहेश्वरी पाठशाला से प्राप्त की थी। उसके बाद हम लोग मथुरा वापस आ गये थे। मथुरा से ही हाई स्कूल मैंने सन् 1933 में किया। आगरा कालेज में मैंने इण्टरमीडिएट पास किया। बाद में बी0ए0, एम0ए0 और एल0टी0 भी कर लिया। एल0टी0 करके सन् 42 में बेसिक रेफ्रेशर कोर्स में नौकरी प्रारम्भ किया। सौभाग्य ही कहूँगा उसी वर्ष 9 अगस्त 1942 को जब मैं नौकरी में था, वह दिन था जब कि हम "भारत छोड़ो आन्दोलन" के लिए कूद पड़े थे। तमाम छात्र इकट्ठे होकर आने लगे थे। उन्होंने हम लोगों से भी अपना–अपना संस्थान छोड़ने का आग्रह किया। हम लोगों ने काम बन्द कर दिया। वैसा उत्साह आज तक पुनः देखने को नहीं मिला जबकि गांधी जी के नेतृत्व में देश को स्वतंत्र कराने के विचारों से सभी लोग इस समर में कूदने को तैयार थे। एक वह जमाना था जबकि हर एक के दिल में दर्द था कि भारतवर्ष स्वतंत्र रहे।

मैंने वह दिन देखा है, जब हम स्कूल की कक्षाओं में बैठे रहते थे और "स्वतन्त्रता संग्राम" के जुलूस निकालने के लिए हमारे स्कूल के सामने से जब लोग निकलते थे। जब मन में आता था कि अपने कक्षाएं छोड़कर उनके साथ हो लें। हमारे मथुरा के जुगल किशोर जो कि बाद में शिक्षा मंत्री बने वो उस समय हम लोगों के आदर्श भी थे। एक हकीम बृजलाल बर्मन भी थे। एक श्रीमती सौभाग्यवती श्रीवास्तव भी थीं, जिन्होंने स्वतन्त्रता संग्राम में बढ़चढ़कर भाग लिया था। श्रीमती श्रीवास्तव ने सन् 42 वाले आन्दोलन में मथुरा में बहुत बड़ा काम किया था। उसी समय मेरे एक मित्र मख्खनलाल अग्रवाल थे जो बाद में गवर्नमेन्ट सर्विस में आ गए थे। रणवीर सिंह और सिद्धेश्वर नाम जी श्रीवास्तव के नाम भी मुझे याद है जो स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी रहे। सिद्धेश्वर नाथ जी ने बाद में शिक्षा विभाग में भी काम किया था।

मैंने दो–तीन पुस्तकें लिखी थी लेकिन मैं आचार संहिता से बद्ध था। अतः शासन पुस्तकें लिखने पर हम लोगों को रायल्टी नहीं देता। इसलिए मैंने अधिक प्रयास तो नहीं किया लेकिन एक पुस्तक मैंने प्राइमरी शिक्षा के लिए बालकों के लिये लिखी थी। एक और पुस्तक 'फर्रुखाबाद का भूगोल' भी लिखा था। सम्पूर्णानन्द जी को लोकगीतों का बड़ा शौक था, उन्हीं के कहने पर मैंने उत्तर प्रदेश के लोकगीतों का संग्रह भी किया था। सम्पूर्णानन्द जी ने कहा था कि मैं समझता था रस कजरी व बिरहा में ही है लेकिन जब मैंने बृज का रसिया सुना तो मुझे लगा, रस तो बृज के रसिया में ही है, न कजरी में है न बिरहा में है। सारे अधिकारी मेरी पीठ ठोंकने लगे और मेरे रसिया पर प्रसन्न होकर अधिकारियों ने बड़ी प्रसन्नता व्यक्त की। सम्पूर्णानन्द जैसे शिक्षा शास्त्री मुझे बहुत कम मिलते हैं।

जब मैं शिक्षा विभाग में नौकरी प्रारम्भ ही की थी, उन दिनों हमारे स्वतंत्रता संग्राम का मुख्य स्थान श्री कृष्ण दत्त पालीवाल का दैनिक समाचार का कार्यालय था। उन्हीं के यहां बैठकें हुआ करती थीं। वहीं जगन प्रसाद जी रावत, श्री कृष्ण दत्त पालीवाल आदि लोग बैठकें किया करते थे।

स्वर्गीय राजबिहारीलाल माथुर

श्री राजबिहारी लाल माथुर का जन्म सन् 1920 में कानपुर के पास बिल्लौर में हुआ। इनके पिता जी का नाम श्री अटल बिहारी माथुर था। वह हिन्दी, अंग्रेजी के अलावा बहुत सी भाषायें जानते थे। वह ग्रेजुएट थे और उनकी शिक्षा–दीक्षा ग्वालियर में हुई थी।

श्री माथुर, नेता जी सुभाष चन्द्र बोस के एसोशिएट थे। जब वह अध्ययन कर रहे थे, तभी उनका सम्पर्क नेता जी से हुआ। नेताजी द्वितीय विश्व युद्ध के समय दूसरी बार जर्मनी आये। उस समय श्री माथुर पत्रकार की हैसियत से काम कर रहे थे। नेता जी ने उन्हें बर्लिन बुलाया ताकि वह भारत की आजादी का प्रोपेगंडा करें। वह अनेक यूरोपीय भाषायें जानते थे। जैसे नार्मन, पोलिस इत्यादि। पब्लिसिटी एण्ड प्रोपेगण्डा आफीसर्स आई0ए0ए0 वेस्ट सिविल में काम करना शुरु कर दिया। प्रेस और सार्वजनिक माध्यमों में उन्होंने हंगरी, यूगोस्लाविया, आस्ट्रेलिया, पोलैण्ड और दूसरी जगहों में भारतीय स्वाधीनता के बारे में लेक्चर दिये। ब्रिटिश सी0आई0डी0 उनका पीछा करती थीं। उनका नाम कांग्रेस कमेटी की पुस्तक ''फारेन कान्ट्रक्ट बुक'' में दर्ज है। सितम्बर सन् 41 में यूगोस्लाविया विश्व युद्ध तटस्थ देश था। वहां की ब्रिटिश कौंसिल ने यूगोस्लाविया सरकार से कहकर देश निकाला के आदेश करवा दिये। क्योंकि वह ब्रिटेन के विरुद्ध और भारत के पक्ष में प्रोपेगण्डा कर रहे थे। उनका यह इरादा था कि श्री माथुर को वहां से से टर्की भिजवा दें, जो कि उस समय टर्की के पक्ष में था। वहां उनका विदेश में, ब्रिटेन के खिलाफ प्रोपेगण्डा करने के जुर्म में ट्रायल दिया जाय। इसकी सजा ब्रिटिश सरकार के मुताबिक सजा–ए–मौत थी। श्री माथुर ने देश निकाला के आदेश को कैंसिल करवाने की बहुत कोशिश की, लेकिन कोई रास्ता नहीं दिखायी दिया। कुछ दिन बाद वह सेन्ट्रल आफिसर्स ग्रेड मि0 डेविड से अपनी परेशानी कहने गए। उन्होंने और उनकी पत्नी मैटीसा मैडिश जो वहां की समाज सेवी महिला थीं और बहुत बड़े लीडर मि0 जायहाल डेविड की पुत्री थीं। वहां के गवर्नर से देश निकाला के आदेश को कैंसिल करवा दिया। इस प्रकार वह फांसी के फन्दे से बच गए। इसके बाद श्री माथुर को नेता जी ने सौफिया, बलगेरिया भेजा। उसी समय वहां की जर्मन सरकार समाप्त हो गयी और कम्युनिस्ट रशियन गवर्नमेन्ट पावर में आ गयी। श्री माथुर अरेस्ट कर लिये गए। वह जेल में डाल दिये गये और वहां से वह राजनीतिक बन्दी की हैसियत से टर्की लाये गये, जहां उन्हें केरोस्कर ब्रिटिश बन्दी गृह में बन्द कर दिया गया। ब्रिटेन ने पानी के जहाज द्वारा बन्दी बनाकर बम्बई भेजा और यहां वह आर्थर रोड प्रिजन में बन्द कर दिये गए। उसके बाद बम्बई सी0आई0डी0 ने पहली अगस्त 1945 को दिल्ली लाल किला के जेल में पहुंचा दिया तथा ब्रिटिश सी0आई0डी0 द्वारा गहरी पूछताछ की गयी।

उस समय आई0एन0ए0 का रेडफोर्ट पर ट्रायल चल रहा था। अगर श्री माथुर आई0एन0ए0 ट्रायल से पहले लाये जाते तो उन्हें दूसरे प्रिजनर्स की तरह फांसी के फन्दे पर लटका दिया जाता। इस प्रकार वे दूसरी बार फिर ब्रिटिश फांसी के फन्दे से बच गए और वहां से रिहा कर दिये गए। स्वतन्त्रता के बाद उन्होंने न्यू डेलही में कार्य किया।

वह लगातार एक वर्ष चार महीने चार दिन तक सीनेट्री सेल्फ में विभिन्न देशों में बन्दी रहे। उनका देहान्त 13 दिसम्बर 1945 को हार्टफेल हो जाने से हुआ था।

कुमारी कमला शर्मा



मेरा जन्म उत्तर प्रदेश के गढ़वाल में हरि की पौड़ी के निकट चने के खेत में 15 नवम्बर 1924 को हुआ था। वहां हमारे पिता हेड मास्टर होकर गए थे। पिता जी वहां जम नहीं सके क्योंकि मैनेजर वगैरह अंग्रेजों के गुलाम थे। वे छोड़ के चले आए। पिता का नाम पं0 श्री राम शर्मा है। जो इस देश के स्वतन्त्रता आन्दोलन के संचालक थे। हम लोग मख्खनपुर, फिरोजाबाद के मूल निवासी हैं।

मेरी प्रारम्भिक शिक्षा पहले हमारे ताऊ जी द्वारा घर पर ही हुई। उन्हें हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत, गुजराती, उर्दू आदि भाषाएं आती थीं। उन्होंने ही मेरे पिता जी, मेरे भाइयों और मुझे भी पढ़ाया। इसके बाद आगरा लाकर दाखिल कराया। आगरा के अंग्रेजों के स्कूल में इसलिए दााखिल कराया कि हम न अनुशासन सीखे। अंग्रेजी स्कूल में पांचवीं क्लास से हाई स्कूल तक और फिर इण्टरमीडिएट किया आगरा कालेज से। ग्रेजुएशन के समय स्वतंत्रता आन्दोलन बढ़ता चला गया, मेरी जिम्मेदारियां बढ़ती चली गयीं। पिता तीन साल जेल में रहे। उसके बाद न कोई कारोबार, न कोई काम। मेरी बहनें बड़ी हो गयीं और इनके विवाह की समस्या हो गयी मेरे सामने। ऐसी परिस्थिति में घर में ही रहकर एम0ए0 एल0टी0 किया। इस आपा–धापी में मेरा विवाह नहीं हुआ या यह कहिये कि इस विषय में सोचने का कभी अवसर हीं नहीं मिला।

अब रही स्वतन्त्रता संग्राम में प्रवेश की बात तो यह समझ लीजिए कि जिस दिन से हमने भाषा सुनी बोली, समझी, उस दिन से सिवाय ''स्वतन्त्रता आन्दोलन'' के दूसरी बात ही नहीं सुनी। पहली बार में सन् 42 के आन्दोलन में जेल गयी थी। 9 अगस्त 42 को ''भारत छोड़ो आन्दोलन'' शुरु हुआ था। तब मेरे पिता बम्बई में थे। वह छद्मवेश में आन्दोलन का संचालन करते थे। इधर मैं भी इस आन्दोलन को सफल बनाने में लगी हुई थी। 26 जनवरी सन् 43 को मेरे पास गुप्त समाचार आया कि आज कोई गिरफ्तारी देने के लिए तैयार न हो सका और आज का दिन ऐसे ही निकल जाएगा। यह तो बड़े शर्म की बात थी। हमने कहा हम जीते जी इस देश को शर्मिन्दा नहीं होने देंगे। बस इस तरह से मैं दो और महिलाओं को लेकर निकल पड़ी। हम तीनों को पकड़कर कोतवाली लाया गया। वहां जाने क्या–क्या डी0आई0 आर0 की धारायें लगायी गई, सब कुछ हुआ। लेकिन एक बात है। उस समय कोई हाथ तक नहीं छू सकता था। दो सिपाही पीछे, दो सामने और दो बगल हो गये और उन्होंने कहा चलो हमारे साथ। हम भी चल दिये।

मैं आगरे के डिस्ट्रिक्ट जेल में रही। इसके बाद जेल में ही मुकदमा चला। बाद में लखनऊ ट्रान्सफर कर दिया गया। उस समय जब मैं जेल में थी, मेरे साथ प्रेमवती मिश्रा आगरे की, जगनप्रसाद रावत की पत्नी और उनकी लड़की थी। जेल में हम 'सी' क्लास में थे। जेल में हम चार लोग आगरे के थे। वहां हमारे साथ कोई दुर्व्यवहार नहीं हुआ। जेल जीवन में हमें भला क्या कष्ट हो सकता था। मैं तो ऐसे पिता की पुत्री हूँ जिनके बारे में यह कथा प्रचलित थी कि वह पांचवी क्लास में पढ़ते थे। एक दिन अखबार पढ़ के उनको बड़ा गुस्सा आया तो उन्होंने जार्ज को एक चिट्ठी लिखी। लिख दिया कि फौरन हमारे देश से चले जाओ। नहीं तो अभी हम छोटे हैं, जब हम बड़े होंकर आयेंगे तो भागते नहीं बनेगा। उन्होंने आगरा कालेज से ग्रेजुऐशन किया था। आगे चलकर उन्होंने पत्रकारिता भी की। कलकत्ते के ''विशाल भारत'' का सम्पादन भी उन्होंने किया।

26 फरवरी 1960 को उनका देहान्त हुआ। 1946 के बाद मैंने कानपुर के नगर महापालिका गर्ल्स इण्टर कालेज में नौकरी कर ली। यही से प्रधानाचार्य पद से अवकाश प्राप्त किया।

श्री हरगोविन्द शुक्ला



मैं फतेहपुर के पास गांव गुड़ की मंडी का मूल निवासी हूँ। मेरा जन्म एक जुलाई सन् उन्नीस सौ तेईस (01–07–1923) को एक जमींदार परिवार में हुआ। प्रारम्भिक शिक्षा मिडिल तक मैंने फतेहपुर सीकरी में पाई थी।, जो हमारे गांव से 2 मील दूर है। हिन्दी से मिडिल पास करने के बाद मैं शिक्षा हेतु आगरा आ गया। आगरा में मैं ''नागरी प्रचारणी सभा'' गोकुलपुरा में विद्यार्थी के रूप में रहा। वहां मेरा सम्पर्क श्री गोपीनाथ शर्मा व रसायन विभाग–विभागाध्यक्ष प्रोफेसर झा के लड़के से हुआ। वहां पं0 श्रीराम शर्मा, बाबू गुलाब राय, महेन्द्र जी आदि लोग आते थे। उनसे सम्पर्क हो गया। वहीं गांधीवादी विचारधारा के अध्यापक राय रत्न जी भी थे, जो भगत सिंह के गुरु थे।

सन् 1940 के आसपास मेरे साथ घटी दो घटनाओं ने मेरे मन पर गहरा असर डाला। हिन्दुस्तानी होने के नाते पहली बार मैं तब अपमानित हुआ जब मुझे एक इंगलिश फिल्म देखने के लिए रोका गया। मेरे एक परिचित थे, डा0 टी0एस0 शुक्ला। उनकी पत्नी इंगलैण्ड की थीं। एक बार उनकी पत्नी की बहन के साथ एक इंगलिश पिक्चर देखने गया। इसके पहले मैंने कभी कोई इंगलिश पिक्चर नहीं देखी थी। वहां पहुंचा तो मुझे अन्दर नहीं जाने दिया गया। मुझे बहुत बुरा लगा कि अपने ही देश के सिनेमा में, मैं एक पिक्चर नहीं देख सकता। इसी प्रकार मेरे गांव के पास में एक नहर है, मैं उसमें खूब तैरता था। निकट के ही एक होटल में एक स्वीमिंग पूल था जहां अंग्रेज लोग बाथ लेने जाया करते थे। मैं भी वहां चला गया तो मुझे बहुत अखरा। मैंने इसकी चर्चा अध्यापक राम रत्न और पं0 श्री राम शर्मा (विशाल भारत के सम्पादक) से की तो वह हंसने लगे। उन्होंने कहा तुम गुलाम देश के वासी हो। तुम्हें तो यह सब सहन करना पड़ेगा।

इसी बीच सन् बयालिस के आन्दोलन में ''करो या मरो'' का नारा आया। यहां विद्यार्थियों ने उग्र प्रदर्शन किये। प्रो0 झा की लड़की से मेरी बहुत दोस्ती थी। वो पं0 गोपीनाथ शर्मा जो बहुत बड़े क्रान्तिकारी बने, वो भी गोकुलपुरा के रहने वाले थे। उनके और मेरे अति निकटतम संबंध थे। उनके साथ रहकर मैं तोड़ फोड़ की भिन्न–भिन्न वारदातों में शरीक था। वहीं क्रान्तिकारियों की बैठकों में अरुणा आसफ अली भी आया करती थीं। पं0 श्री राम शर्मा सभा किया करते थे। प्रोफेसर झा बम बनाते थे, हेड ऑफ द कैमिस्ट्री डिपार्टमेन्ट।

एक बार हमारे ही एक साथी श्री तान सिंह ठाकरे साईकिल पर बम ला रहे थे। एक बम शायद हाथ में ले रखा था। इत्तिफाक से उनकी साइकिल के नीचे पत्थर आ गया। साईकिल उछली, बम हैण्डल से लग गया और फट गया। बहुत जोर का धमाका हुआ और वह धमाका ठीक हरि पर्वत थाने के बिल्कुल पास हुआ। ठाकरे बहुत बुरी तरह जख्मी हो गये। विरोध प्रकट करने के लिए हम लोगों ने कई जगह स्टेशन फूंक दिए। तार काटे गए और भी बहुत सारी घटनाएं घटी। मेरे पीछे पुलिस वाले फिरते रहे, परन्तु पूरा परिचय न जान पाने के कारण मैं बचता गया। लेकिन बाद में एक साहब

ने पूरा नाम बता दिया तो मैं सन् 43 मे जाकर गिरफ्तार हुआ। मुझे आगरा सेन्ट्रल जेल में रखा गया। हमारे साथ श्री कृष्ण पालीवाल, सेठ अचल सिंह, गोविन्द सहाय, श्री खरे और बहुत सारे साथी भी रखे गए थे। जेल में जय प्रकाश नरायण जी भी आ गए थे और हम लोगों के पास ही बैरक में ही रहते थे। एक साल से अधिक हम जेल में रहे। वहां से छूटने के बाद, मैं कांग्रेस का काम करने लगा। मैं सेवा दल का इन्चार्ज था आगरे का।

हिन्दुस्तान आजाद होने के बाद मैं सेवादल के वालन्टियर के साथ मेरठ आया। वहां अधिवेशन हुआ था। आजादी के बाद सेवादल ने हिन्दू–मुस्लिम दंगों के दौरान खूब कार्य किया। सन् 48 में, मैं पुलिस विभाग में आगरा से ही भर्ती हुआ। काफी लोग भर्ती हुए थे। जो जेल गए थे। जो ग्रेजुएट थे, वह सब डायरेक्टर बनाए गए थे और इण्टरमीडिएट थे। वह सब इन्सपेक्टर बना दिए गये थे। मुझे इसका संतोष रहा कि मैं पुलिस विभाग में पूरी ईमानदारी से रहा। मुझे बहुत शीघ्रता से प्रमोशन मिला। मै दो साल के बाद थानाध्यक्ष कोतवाली अलीगढ़ बना दिया गया। 92 वर्ष क्राइम ब्रान्च में रहा और करीब 62-63 साल वरिष्ठ उपाधीक्षक रहा। सन् 81 में इसी पद से सेवानिवृत्त हुआ।

श्री धनीराम

मेरा नाम धनीराम है। मेरी उम्र इस समय 86 साल की है। मेरे पहले कांग्रेस से संबंधित विचार धारायें उत्पन्न हुयी थी मेरे गांव में मेरे पड़ोस, मेरी बस्ती मे। तब पांच छः स्वतंत्रता संग्राम सेनानी थे, जो आज नहीं हैं। पड़ोस में ही श्री जीवन लाल साहू जी रहते थे। उनके आवागमन से मेरे मन में विचार पैदा हुए। बाबा सुद्दीन जी के यहां सबसे प्रथम कांग्रेस मण्डल बना। इसे काशीपुर जिले के नाम से पुकारा जाता था। वहां स्वर्गीय पण्डित गोविन्द वल्लभ पंत जी और काफी लोग काशीपुर आते थे। सन् 20 से यहां पर कांग्रेस आन्दोलन चला।

सन् 21 में श्री सिदगिरी बाबा श्री कमला पति जोशी आदि जेल गये। उसके बाद लोगों का यहां आना जाना शुरु हुआ। पन्त जी का कोटाबाग से बड़ा लगाव था। कोटा को अपनी प्रतिष्ठा का सवाल समझते थे। हवलसवाई में कोटाबाग को देखते हुए यहां सभा होती थी। उसमें अधिक से अधिक लोग आते थे। उसी में श्री पूर्णानन्द सिंह जी एक बड़े विशाल जुलूस के साथ पहुंचे। उन्होंने कोटाबाग में एक सभा की, जिसमें कोटाबाग के सारे घोड़े, हजारों की तादाद में नर–नारी पहुंचे। सारे भारत में तब 33 करोड़ की जनता थी। उस समय पाकिस्तान, हिन्दुस्तान बंगला देश के हजारों लोग एकत्रित हुये। उसके बाद यहां के लोग कांग्रेस पर उतारु हो गये। विदेशी कपड़ों का इस्तेमाल न करना और स्वदेशी चीजों का ही इस्तेमाल करना, सूत कातना, आदि रचनात्मक कार्यों को जन–जन ने अपनाया। सन् 1930 में एक आन्दोलन हुआ। उसमें ''वन्दे मातरम'' कहने पर ही लोगों को गिरफ्तार कर लेते थे। वन्दे मातरम पर यहां से कई लोग जेल गये। 4–4 महीने की सजा के बाद वे छोड़ दिये गये। सन् 32 में घोषणा हुई कि किसी की जंगलात हुकूमत को ना माना जाये। जंगलात हमारा है। लगान आन्दोलन बन्द कर दिया जाये। लोग जंगलात पिकेटिंग के लिये कोटाबाग गिरी बाबा के मकान से तमाम दोना, परेवा, वासी, कोटाबाग फैल गये। साढ़े चार सौ व्यक्तियों ने भादों के महीने यानी अगस्त में बारिश के साथ हल्द्वानी में जंगलात पिकेटिंग की। इसके उपरान्त लोगों को गिरफ्तार कर लिया गया। करीब – करीब 80 लोगों को बन्द कर दिया। उसमें से कुछ कमजोर व्यक्तियों ने माफी मांग लीं, बहुत से लोगों ने जेलें काटीं, 6–6 महीने की सजा काटने के बाद लोग जब छूट के आये तो फिर उसी संगठन कार्यक्रम में लग गए। कांग्रेस– कार्यकर्ता चलते रहे। यहां के जितने पूंजीपति या बड़े लोग थे। वे भेद–भाव रखते थे। हम न तो उनकी बातों में आते थे न कुछ सुनते थे। वे अंग्रेजी हुकूमत को सूचना देते रहते थे। लोगों ने बड़ी यातनायें सहीं। सन् 39 में यहां पर पन्त जी का दौरा हुआ। पन्त जी ने यहां पर एक सभा की और बताया कि देशवासियों–अब अन्न की बड़ी कमी होने वाली है। अब अन्न पुड़ियों में बिकेगा। जो लोग अन्न थैलों या कनस्तरों में देखते थे, वे पुड़ियों का नाम सुनकर चौंक उठे। सन् 40 में सरकार से ''व्यक्तिगत सत्याग्रह'' शुरु हुआ। ''व्यक्तिगत सत्याग्रह'' में कहा गया था कि इस अंग्रेजी लड़ाई में रुपये पैसे से मदद करना हराम है। हमको यह चाहिये कि अहिंसा द्वारा मदद करें। तभी पंत जी को गिरफ्तार कर लिया गया। इसके बाद यहां माननीय मोहन लाल जी शाह आए। वे नैनीताल के थे। यहां सत्याग्रह करने के लिये कोटाबाग में प्रोग्राम रखा। लेकिन कोटाबाग में आने से पहले ही हल्द्वानी में कैद हो गये क्योंकि सी0आई0डी0 ने उनको रिपोर्ट दी थी कि अगर मोहनलालशाह जी कोटाबाग आ गये तो उसको संभालना मुश्किल हो जायेगा। इस आदेश

में यहां हजारों की संख्या में जो लोग जुड़े थे, वे बहुत उद्वित हुये। उस समय ''व्यक्तिगत सत्याग्रह'' करने के लिये 114 व्यक्तियों ने सत्याग्रही फार्म भरे।

इसी संदर्भ में तमाम लोगों ने एकत्रित होकर सभा की। सिल–सिलेवार वहां डी0एम0 साहब को नोटिस देना पड़ता था कि अमुक तारीख को हम सत्याग्रह करने जा रहे हैं फलाना स्थान पर, आप जो चाहे कर सकते हैं। इसी प्रकार हमने भी फार्म भरा।

सन् 1942, मार्च 3 को मैंने एक पत्र डी0एम0 साहब को दिया। 3 मार्च को मैंने, कोटाबाग में सत्याग्रह किया। दरोगा आये और हमें हवालात ले गये। सिलसिलेवार चलते रहे। जून के महीने तक हमारे 65 लोगों को गिरफ्तार किया गया। इसके बाद झुण्ड के झुण्ड लोगों को गिरफ्तार किया गया। सात–आठ लोगों को एक साथ किसी को जंगलों में फेंका गया। किसी को एक दिन की सजा दी गयी। किसी को अदालत उठने तक की सजा हुई। इस तरह जून के बाद 'व्यक्तिगत सत्याग्रह' खत्म कर दिया गया। मैं 3 तारीख को यहां से गया। 5 तारीख को वहां राम सिंह जी आये। हम दोनों काशीपुर से नैनीताल हल्द्वानी पहुंचे। हमको 20 रुपया जुर्माना हुआ। हल्द्वानी से फिर हमारा ट्रान्सफर बरेली हुआ। एक महीने की सजा काट कर घर लौटे तो यहां एक संगठन के रूप में पुनः सक्रिय हुए। पं0 गोविन्द वल्लभ पन्त ने कहा कि तुम एक समारोह कोटाबाग में करो। यहां के सभी स्वतंत्रता सेनानी वालेन्टियर हल्द्वानी गये। हम लोगों ने आग्रह किया कि हम कोटाबाग में एक सम्मेलन रखना चाहते हैं। कहा–सुनी के बाद कोटाबाग मंजूर कर लिया गया। हमने सन् 1942 3,4,5 मार्च को तीन दिवसीय सम्मेलन यहां पर किया। उसमें प्रान्त भर के नेता और देश के बड़े नेतागण पहुंचे। उन्होंने इस जगह की अवला कोट, पांडे गांव, नाथूनगर, कप्तान गंज, राम दत्त गांव देवनिया, बजनिया हागू आदि 6 गांव हमारे आन्दोलन में भागीदार थे। 1942 तक यही लोग हमारे साथ रहे। बाकी यहां के जितने अन्य 25 या 26 गांव हैं इससे अलग थे। हम निहत्थे व वालेन्टियर जीर्ण शीर्ण हालत में हो गये थे। ना घर का कारोबार था, ना कहीं से पैसा मिलता था। लगान हमारी दी नहीं गयी थी। लोग बेहाल थे। नब्बे–नब्बे बीघा जमीन बेदखल हो गयी क्योंकि लगान नहीं दे सके थे।

इसके बाद सन 42 में जो मूवमेन्ट चला उस कोटाबाग के इलाके में, बड़ा सहारा दिया। गांव के बच्चे–बच्चे एक जुट हो करके ''भारत छोड़ो आन्दोलन'' के नारे के साथ टोलिया बनाकर के घूमें। उसके बाद पुलिस आतंक बढ़ गया। पूरी गैंग, पूरी पूरी फौल, पूरा दफ्तर डाक बंगले पर डाल दिया गया। रात को 12 बजे लग गये गिरफ्तार करके हम लोगों को। पहली टीम तीन व्यक्तियों की गयी। इसके बाद पांच व्यक्तियों की, जिसमें राम सिंह जी, खेम सिंह जी, नरसिंह, मोहन सिंह जी आदि थे। रुड़की डाकबंगले में जाकर के रसल साहब के साथ उन्होंने नारे लगाये ''अंग्रेजों भारत छोड़ो''। इनको गिरफ्तार कर लिया गया। इसके बाद मुझे 17 तारीख को गिरफ्तार किया गया। रसल साहब पेशकार जेल जाने के बाद यहां हाहाकार मचा। जितना नुकसान हुआ था, सारे ग्रामवासियों को परेशान करके उसका जुर्माना लिया गया। हम लोग नौ–नौ महीने तक नज़रबन्द रहे। इसके बाद अप्रैल के महीने से हम लोगों पर मुकदमें चालू किये गए। अंग्रेजों ने, सी0आई0डी0 ने, पुलिस ने, अमन सभा के लोगों ने, फर्जी दफा बना के हम लोगों के खिलाफ मुकदमें चलाये। जिसमें राम सिंह जी, देव सिंह जी, विश्वम्भर तिवारी पर 42 काशीपुर जेल में एक एस0डी0 आई0 साहब के सिलसिले में मुकदमा चला। इन लोगों को वही सजा हुई। जब हम लोगों का एक संगठित मुकदमा बना तो 34 आदमी उसमें पकड़े

गये। हमारे ऊपर थी दफा 120 बी0आई0पी0सी0 147, 145, 38, 351। जब मुकदमा चला तो उस समय हम बेसहाय तो थे ही। सभी संभ्रान्त व्यक्तियों से नैनीताल जिले में अन्य वकीलों से वाद–विवाद करने के बाद एक हमको नयाल जी मिले, जिन्होंने हमें मदद दी। पांच महीने तक हम सुबह नहा धोकर आते थे और शाम को अपने घर जाते थे। पांच महीने तक सारी अदालत को छोड़ करके सन्तरावत के सामने लगातार रहे तो 9 महीने की सजा व 20 रुपये जुर्माना हुआ। ऐसे ही किसी को दो साल की सजा हुआ। उसके बाद हम जेलों में बन्द रहे। जेल काटने के बाद जब हम अपने अपने घरों को लौटे तो हमारी तबाही हो चुकी थी, जो दो ढ़ाई साल बाद छूटा तो न बीबी न बच्चा, ना माँ सब खत्म हो चुका था। गाय, भैस भी नहीं बची। इस तरह से जो हमने समय बिताया, उसमें न हमें रोटी मिलती न कपड़ा बस एक कार्य था – कांग्रेस का आन्दोलन, चाहे भूखे हो, चाहे प्यासे हो, हम लोगों को कहा जाता था 'राजनैतिक'। इसके नाम से लोग चिढ़ते थे, फिर हमारी सरकार बनी। हम लोगों को स्वतंत्रता प्राप्त हुयी सन् 1947 में। सन् 1947 में आजादी मिलने के बाद हम लोग वहीं के वहीं, पीड़ितों के लिये कोई नहीं। हमारे पास दो रुपये नैनीताल जाने के लिये नहीं होते थे। जब पन्त जी बुलाते थे तो भूखे प्यासे नैनीताल जाते थे। खैर कुशल पूछते थे। मुख्य मंत्री हमारे पन्त जी थे। उन्होंने कुछ तो अपने रसूल को अदा किया, वे परेड लगवाते थे। लम्बी कतार को कभी चाय–चाय पिलवा देते थे। श्री श्याम लाल जी वर्मा वहीं पर रहते थे। 1947 के बाद हम लोग भूखे प्यासे मेहनत मजदूरी करते रहे। 1972 में प्रधानमंत्री इन्दिरा गांधी जी ने हमारा स्वतंत्रता संग्राम सेनानी नाम रखा। एक–एक तामपत्र दिया। एक–एक परिचय पत्र दिया और प्रान्त तथा सेन्ट्रल से मिला कर दो सौ रुपया पेंशन दी। उस दिन से हम लोगों ने अपने को इंसान समझा। तब कपड़े बना पाये। इस बीच में अपने बच्चों को शिक्षा दिलायी। हमारे पास कुछ था ही नहीं। हम देहात में पड़े हुये थे। न बच्चों को शिक्षा दे सके न कुछ कर सके। आज भी जीर्ण–शीर्ण हैं। आज भी जैसे तैसे जीवित हैं। उसी से हम अपना निर्वाह कर रहे हैं। हम को कहीं से न मेडिकल मिलता है न कुछ सुविधा।

श्री जयदत्त वैला

मैं विद्यार्थी जीवन में नैनीताल में पं0 गोविन्द वल्लभ पन्त जी के संरक्षण में था। वहीं हमारे कई विद्यार्थी मित्र जैसे श्याम लाल वर्मा आदि आन्दोलन में शामिल हुए। 1930 के बाद हम लोगों ने एक बहुत बड़ा संगठन विद्यार्थियों का तैयार किया था। उस संगठन ने अंग्रेजी सरकार से बहुत बड़ा मोर्चा लिया। हमारी लड़ाई थी कि हमें सड़क में चलने की आजादी दी जाये। पैदल सड़क को छोड़कर जिसको मालरोड कहते हैं, उसमें हम जायें। उस समय लीडर की आज्ञा से हम लोग जुलूस निकालते थे और माल रोड होकर तल्लीताल से मल्लीताल और मल्लीताल से तल्लीताल जाते थे। इन्द्र सिंह, नयाल जी एडवोकेट हमारे नेता थे। वे हमें ले जाते थे। यह बात अंग्रेजी सरकार को बहुत बुरी लगी। उसने जुलूस चेक किया। डण्डे मारना, पीटना, डांटना, फटकारना तो साधारण सी बात थी। बहरहाल इन चीजों से हम घबराये नहीं और सत्याग्रह में भाग लेते रहे।

उस विद्यार्थी जीवन में भी हमें एक आध महीने की जेल यात्रा करनी पड़ी। उसके बाद सन् 1937 में प्रान्तीय सरकार बनी तो 1939 तक रही। विश्वव्यापी द्वितीय–विश्वयुद्ध भी सन् 1939 में प्रारम्भ हुआ। उसके पूर्व ही मैं अपना विद्यार्थी जीवन हिन्दू विश्वविद्यालय से समाप्त करके प्रेम विद्यालय में आया था। प्रेम विद्यालय ताड़ीखेत, बागेश्वर ने प्रौढ़ विद्यालय नामक एक संस्था का संगठन किया था। स्वर्गीय पं0 देवीनन्दन पाण्डेय जी इसके व्यवस्थापक थे। पं0 हरगोविन्द पन्त विद्यालय के संरक्षक थे। उनकी देख रेख में मैं उस विद्यालय का प्रधानाचार्य हो गया। वहां से व्यक्तिगत सत्याग्रह की तैयारियां की जाने लगीं। जो नौजवान पल्टन में भर्ती होने के लिये आते थे। उनमें से कई नौजवान हमारी बातों को सुनने के बाद वे गांधी की सेना में भर्ती हो जाते थे, यानी सत्याग्रही बन जाते थे। साथ ही साथ प्रौढ़ लोग हमारे विद्यालय में शिक्षा पाते थे। सुबह 10 बजे से डेढ़ बजे तक हम साहित्य, इतिहास, कांग्रेस का इतिहास और अन्य विषय पढ़ाते थे। 2 बजे के बाद हम कताई, बुनाई इत्यादि सिखाते थे। इसका परिणाम यह हुआ बागेश्वर के आस–पास जागृति की व्यापक लहर फैली और सत्याग्रहियों की संख्या बढ़ती गयी।

सन् 1941 में पं0 हरगोविन्द पन्त ने बागेश्वर को सत्याग्रह का प्रथम केन्द्र चुना। पं0 हरगोविन्द पन्त जी ने 10 दिसम्बर 1940 को वहां से सत्याग्रह शुरु किया था। पूर्वी पश्चिमी भाग पाली से पं0 मदन मोहन उपाध्याय ने उसी दिन सत्याग्रह शुरु किया था। इस प्रकार यहां सत्याग्रह का बिगुल बजा। देखते ही देखते, इस जिले से 100–150 सत्याग्रही युवकों के नाम गांधी जी के पास पहुंच गये। इन लोगों ने एक के बाद एक क्रमानुसार सत्याग्रह किया। उसी सत्याग्रह में मुझे भी प्रथम सौभाग्य प्राप्त हुआ। फलस्वरूप गिरफ्तार हुआ और अर्से तक अल्मोड़ा जेल में रहा। वहीं पं0 गोविन्द बल्लभ पन्त, ब्रह्मदत्त पाण्डेय, हरवल्लभ पन्त और मेरे कई अन्य साथी थे। कुछ दिनों के बाद वहां से हमें सीधे भेज दिया गया, बदायूँ जिला जेल में। यह सजा हमें इसलिये दी गयी थी कि हम लोगों ने जेल के अन्दर यह सत्याग्रह शुरु कर दिया था कि हम चक्की नहीं पीसेंगे और जेल के अन्दर हम लेबर नहीं करेंगे। अतः जेल मैनुअल के अनुसार हम लोगों को बदला गया। करीब 15 साथी थे हमारे साथ, जिनको बदायूं जेल भेजा गया था। उन दिनों बदायूं की जेल सबसे फ्री जेल मानी जाती थी। वहां

बहुत सख्ती होती थी। श्री जुगल किशोर आचार्य भी उन दिनों उसी जेल में थे। उस जेल में हम लोगों ने बहुत कठिन यातनायें सहीं। वहां भी हमें यह सत्याग्रह करना पड़ा था कि हम लेबर नहीं करेंगे। फलस्वरूप हमें वहां से हटा दिया गया और कैण्ट–जेल, चुनार भेज दिया गया। यह जेल मिर्जापुर के पास थी। उस जेल में बहुत लम्बे अरसे तक हम रहे। फिर 1942 में हम उस जेल से रिहा हुये। वह मई का महीना था। उन्हीं दिनों एक नये आन्दोलन की तैयारी हो रही थी। गांधी जी के आदेशानुसार हम लोग उस आन्दोलन की तैयारी में जुट गये। 8 अगस्त 1942 को बम्बई में सम्मेलन हुआ था, जिसमें कांग्रेस कमेटी के प्रस्ताव पास हुये थे। उन प्रस्तावों के अनुसार ठीक दूसरे दिन अर्थात् 9 अगस्त को रानीखेत में हमने आन्दोलन शुरु किया और कांग्रेस कमेटी कार्यालय में गिरफ्तार कर लिया गया। मैं और राममनोहर दत्त भट्ट अल्मोड़ा – जेल भेजे गये। 1942 में हमें जिला जेल, बरेली में और फिर सेन्ट्रल जेल, बरेली में रखा गया। लम्बे समय तक, वहां की खड्डा बैरक की यातनायें हमने सहीं। उसी बैरक के पास जगमोहन सिंह नेगी इत्यादि थे।

वहां अच्छे–अच्छे नेता लोगों का हमें साथ मिला, उनके सम्पर्क में रहकर हमने बहुत सारी चीजें सीखीं। पं0 देवीदत्त को हम नाल काका कहते थे। उनके द्वारा हमें मार्क्सिजम और सोशलिजम विषयक बहुत पुस्तकें पढ़ने को मिलीं। उन्हीं दिनों नौजवानों की बैरक में हमारे प्रदेश के पूर्व मुख्यमंत्री श्री नारायण दत्त तिवारी जी भी गिरफ्तार होकर आये थे। जनवरी सन् 1945 में मुझे सेन्ट्रल जेल, बरेली से रिहा किया गया। वहां से छूटने के बाद फिर मैंने देखा कि इस देश में क्या हो रहा है? सन् 1946 में एक आन्दोलन चला जिसमें सुभाषचन्द्र बोस के सिद्धान्तों की चर्चा थी। उस समय वे देश के बाहर थे। लाल किले में हमारे बहुत से साथी "आजाद हिन्द फौज" के सिपाही जमा हुए । वे लाल किले में बन्द आन्दोलन कारियों को छुड़वाने के लिए पहुंचे थे।

इस आन्दोलन में मैंने भी भाग लिया। जो कुछ भी बन पड़ा, किया। बरेली में आई0 आई0 एन0 ए0 कमेटी का मैं चेयरमैन चुन लिया गया था। वहां के कई नौजवान हमारे साथ थे, जैसे सतीशचन्द्र जी, कृपा शंकर जी थे, जो आज कहीं विभागाध्यक्ष हैं। इसी प्रकार के कई लोग हमारे साथ थे। इन लोगों की मदद से हमने बहुत सारा धन इकट्ठा किया। दरियागंज में 87 नम्बर का कमरा था, जिसमें आजाद हिन्द फौज का कमेटी कार्यालय था। हम वहां गये और वह पैसा जमा किया। साथ ही लाल किले में शाहनवाज जी से मिले। हमने उनसे एक वायदा लिया कि छूटने के बाद वे बरेली आयें। बरेली में उनको देखने के लिये बहुत सारे नौजवान लालायित थे। इस प्रार्थना को शाहनवाज जी ने स्वीकार किया। छूटने के बाद शाहनवाज जी सीधे बरेली आये। वहां उन्होंने भाषण दिये और मुल्क की आजादी के विषय में सुभाषचन्द्र बोस जी की जो नीति थी, जो कल्पना थी, वह हम लोगों को समझायी। इस प्रकार हिन्दुस्तान 15 अगस्त 1947 को आजाद हुआ। आजाद होने के बाद हमने सोचा कि अब हमें क्या करना चाहिये। 15 अगस्त 1947 के बाद से यह 50 वर्षों का लम्बा इतिहास। इसके बारे में कुछ कहना मेरे लिये समुचित नहीं है। यहां भी मैं रामकृष्ण मंच का उपाध्यक्ष रहा। उसके बाद विद्यासेन–ब्लाक का प्रमुख और जिला परिषद का सदस्य रहा। गत वर्षों में हमारे लोगों ने बहुत उन्नति की है। यहां पहाड़ पर जहां कोई नहीं जा सकता था, वहां मोटरें बसें चल रही हैं। मोटर मार्ग बन गये हैं। जहां पानी नहीं मिलता था, वहां पानी मिल रहा है। पेय जल योजना के लिये हमने जिला परिषद अल्मोड़ा से प्रयास किये और लखनऊ में शर्मा जी (मिनिस्टर) के पास गये। उसके बाद दिल्ली में केन्द्रीय जल

समिति के सदस्य श्री अजीत प्रसाद जैन के पास गये। अन्ततः इस योजना को मंजूरी दी गई। इस समय यह हमारे जिले की एक बहुत बड़ी योजना है। इसे रानीगंज से उठाया गया है, छः सात हजार फीट ऊपर। इससे 20–25 गांवों में पानी जाता है। जहां–जहां पानी नहीं पहुंचा है, वहां पानी प्राप्त करने के लिये अभी भी नौजवान पीढ़ी प्रयास कर रही है। हर पुश्त के लोगों को अपनी समस्याओं के लिये संघर्ष करने का अधिकार है। लेकिन यह संघर्ष ऐसा न हो कि देश के टुकड़े–टुकड़े हो जायें, जातिवाद पनपे, सम्प्रदाय वाद पनपे। नेताजी सुभाष चन्द्र बोस को आजाद हिन्द फौज का संगठन करने के लिये इतना संघर्ष करना पड़ा। इतनी कुर्बानी के बाद आजादी मिली है। उस आजादी की रक्षा करने का कर्तव्य आज के नौजवानों का है। मैं इस समय केवल यही कह सकता हूँ कि हमारी नयी पुश्त में जब अच्छी भावना आयेगी, तभी एक अच्छी सरकार बनेगी। तभी इस देश में जनतंत्र सफल हो सकेगा। मुझे पूर्ण विश्वास है, आज के नौजवानों के प्रति। देश की एकता के खिलाफ, जब कुछ लोग बोलते हैं तो मुझे बड़ा दुख होता है। जितने भी धर्मावलम्बी हैं, उन्हें यह सोचना चाहिये कि धर्म और राजनीति दोनों अलग–अलग चीजें हैं। धर्म मेरा एक व्यक्तिगत विषय है। चाहे हिन्दू हो चाहे मुसलमान। हम लोग हिन्दुस्तान के अन्दर रहते हैं, हिन्दुस्तान का अन्न खाते हैं, हिन्दुस्तान का जल पीते हैं तो क्या हम लोग आपस में भाई–भाई नहीं हैं। भारत माता सबकी माता है। अलग–अलग वाद होते हुये हैं भी हम जनतंत्रवाद को बढ़ाने की कोशिश कर रहे हैं। जो लोग आर्थिक रूप में पिछड़े हुये हैं, उनको ऊपर उठाने का हर सम्भव प्रयास करना चाहिए। मेरा यही विचार है। इस बुढ़ापे में मुझे तब दुख होता है, जब मैं सुनता हूँ नौजवानों से उनके सम्प्रदायिक विचार। वे जो विभाजन की बातें करते हैं, वे हमें अच्छी नहीं लगती हैं।

श्री रघुबरदास पाण्डेय

मै रघुबर दास पाण्डेय सन् 1942, 14 अगस्त को मुझे गिरफ्तार कर लिया। मेहरबान सिंह जिलाधिकारी ने मुझे पकड़ा। उन्होंने कहा – इनके यहां सत्याग्रही लोगों की भीड़ रहती है। यहां गलत काम होते हैं। इनका भाई भी सत्याग्रही है। मेरा भाई परमानन्द पाण्डेय वहीं रहता था। वे हमको गिरफ्तार करके बागेश्वर ले गये। गरुड़ से बागेश्वर 1, 15 तारीख को बागेश्वर, 16 तारीख को बागेश्वर से अल्मोड़ा। वहां 1 साल 6 माह हमको जेल में रखा। 1 साल 6 माह के बाद हमको रिहाकर दिया गया। उनका तर्क था कि ये भविष्य में कांग्रेस के काम आने वाले हैं। इनका भाई भी सत्याग्रह करता है। ऐसा लिखा हुआ प्रपत्र हमको पं0 गोविन्द बल्लभ पन्त ने दिया था। सन् 1947 को दुकान में आग लगने से मेरे पास जो भी सम्पत्ति थी, साथ ही उनके द्वारा दिये गये जो पत्र थे, वे जल गये। तब से मैं कितनी ही बार अल्मोड़ा जेल में रिकार्ड लेकर गया, लेकिन कोई सुनवाई नहीं हुयी। पहले लोगों ने कहा कि जिसको 6 महीने की सजा हुयी थी, उसी को पेन्शन मिलती है। मैंने वह नहीं किया। पीछे सुनाई दिया कि जो एक भी दिन जेल गया, उसको भी पेन्शन मिल रही है। तो मैं फिर कई बार गया। उन्होंने कहा तुम्हारा यहां कोई भी रिकार्ड नहीं है। रिकार्ड में दीमक लग गया है। मैंने सन् 1942 में भारत छोड़ो आन्दोलन में यही गरुड़ से गिरफ्तारी दी थी। साथ में मेरे भाई थे परमानन्द पाण्डेय और माधवानन्द पाण्डेय। कुछ लोग बागेश्वर से पकड़े गये थे। खैर हम अल्मोड़ा जेल गये। रिहा हुए साल 6 माह के बाद अल्मोड़ा से।

श्री मदन खोल्या

मैं मदन खोल्या जिला अल्मोड़ा का रहने वाला हूँ। मेरे बचपन से कुछ ऐसे संस्कार पड़े हैं कि जब मैं स्कूल में रहता था, दर्जा चार में पढ़ता था, उस वक्त अल्मोड़ा से एक पत्रिका निकलती थी जिसका नाम था "सत"। उसमें बड़े–बड़े नेताओं के नाम पढ़ते थे। अंग्रेजों की खिलाफत पढ़ते थे। उससे हमारे दिल में देश के प्रति ऐसा प्रेम आया कि हम भी देश भक्त बनें। देश की आजादी में हम सहयोग दें और देश के हित में लड़ाई लड़े जिससे कि अंग्रेजों के छक्के छूट जायें। ऐसे विचार बचपन से ही आ गये थे। फिर धीरे–धीरे हम जवान हो गये। 17–18 साल के हो गये। 16–17 की उम्र में सत्याग्रह आन्दोलन में गांव–गांव लाकर ढोल बजा–बजा कर लोगों को इकट्ठा किया, और जागरूक किया, जनसंख्या बढ़ने लगी। हम लोग इकट्ठे हुये। फिर बाद में होते करते सन् 1940 में "व्यक्तिगत सत्याग्रह" शुरु हो गया।

व्यक्तिगत सत्याग्रह जब गांधी जी ने शुरु किया तो हमने उसमें भाग लिया। जगह–जगह गांव–गांव में सभाएं हुयीं। सत्याग्रहियों को आगे बढ़ाने के लिए काफी सत्याग्रही यहां से गये। करीब दो सौ सत्याग्रही। इसके बाद हमने भी अपना नाम सत्याग्रहियों में लिखवाया। गांधी जी के पास नेता चुनने के लिए भेजा और गांधी जी ने हमें चुना। तारीख 22 फरवरी मुझे सत्याग्रह करने के लिए दी गयी। सन् 1941 में फिर मैंने सत्याग्रह किया। उसके पहले जिलाधिकारी (डी०एम०) को हमने नोटिस दी कि 2 बजे फलाना तारीख को फलाना जगह पर हम सत्याग्रह करेंगें। आप अपनी जो कार्यवाही चाहे कर लें। हमारा सत्याग्रह अहिंसात्मक होगा। गांधी जी ने हमको बता रखा था कि इस अंग्रलड़ाई में पैसे या आदमी से मदद देना हराम है। हमारे लिये यही उचित है कि हम अहिंसात्मक तरीके से इसका विरोध करें। हमने ये नोट लगाये। बड़े–बड़े नेताओं ने पटवारी से हमको गिरफ्तार करने के लिए कहा।

चन्द्रदत्त के यहां हमारे कई लोकल नेता थे। उन लोगों ने कहा तो पटवारी ने हम लोगों को गिरफ्तार किया। ऐसा विश्वास हो गया कि हम लोग सरकार को नहीं मानते। वहां से हम लोग अल्मोड़ा जेल पहुंचे। वहां पर हमारा केस दायर हो गया। सजा सुना दी गयी। एक वर्ष की कैद 25 रुपये जुर्माना न देने पर 3 माह की सजा और फिर हम लोग बन्द कर दिए गये।

जेल में हमको बहुत यातनायें दी गयीं। चक्की पीसने को दी गयी। जितना पीस सकते थे, उतना पीसा। रोज आधा सेर, पाव भर आटा निकाल कर रख देते थे। फिर वहां से हमारा ट्रान्सफर हो गया, बरेली जेल में। बरेली जेल में हमें कई प्रकार की यातनायें दी गयीं। बड़ी–बड़ी धमकियां दी गयीं। दण्ड दिया गया। हमने कहा तुम्हें जो करना हो करो। जब हम अपनी जान देने को तैयार हैं, तो दण्ड क्या? कितने ही लोगों को शूट कर दिया गया। कितने फांसी पर चढ़ गये देश की खातिर। तुम्हारे डण्डे क्या होते हैं। उसके बाद हम रिहा हो गये। फिर हमारा सन् 1942 का आन्दोलन आया। हम यहां से रानीखेत गये, पैदल। तीन चार आदमी थे। वहां सलाह मशविरा करते, फिर पैदल वापस घर आते। योजना बनाते थे, क्या–क्या करना है? किस–किस तरह करना है? अंग्रेजों का आना किस तरह बन्द हो? 9 अगस्त 1942 को मालूम हुआ कि सब नेता बम्बई में गिरफ्तार हो गए हैं और पता नहीं गांधी जी कहते थे कि आप ही सब नेता हैं। जिसके मन में जो आये, करे। हम भी नेता बन गये।

वह तोड़ा नहीं गया, वह बह गया था। बाढ़ आयी थी बहुत जबरदस्त तो वह गया था। 14 तारीख की रात को जांच पलटन आयी। उसने हमारे सारे गांव को घेर लिया गांव के हर मकान के चारों तरफ एक एक सिपाही छोड़ दिया गया। प्रत्येक मकान के चारों तरफ सिपाही थे। हमको गिरफ्तार कर लिया गया। हमारे बेड़ी डाल दी गई। वहां से ले गये डाक बंगले में, जहां आग लगी हुयी थी। वे बोले कि तुम लोगों ने इसे जलाया है। हमने कहा, हमको तो सोते से उठा कर ला रहे हो, हमने कहां फूंका। खैर, चार साल की सजा हुई, 100 रुपये जुर्माना। एक केस में 6 साल की सजा, 200 रुपया जुर्माना। पांच साल की सजा – 200 रुपया जुर्माना। जुर्माना न देने पर 6 माह की सजा और उसके बाद हम लोग अल्मोड़ा में रहे। वहां हल्ला मचा। मारे गये लोग। किसी के खून बह रहा है, किसी के कुछ। ऐसी मुसीबतें हम लोगों ने उठायी। अपनी उन्नति पर गुरूर होता है, हम गाना गाते थे। जवाहर के विषय में –

ओ वीर जवाहर लाल मोती के लाल।
तूने ओढ़े साल दुशाल जेलों में ओढ़े कम्बल काले।

और गांधी के विषय में यह गीत गाते थे –
गांधी तू आज हिन्द की एक शान बन गया।
जिसको लगी हवा तेरी वह इन्सान बन गया।
ऐसे ही गाने गाते थे हम लोग। एक गाना यह भी था –
झेलना संयोग था, जेल जाने के लिये।
किस मन्दिर में चले प्रसाद खाने के लिये।।
एक समझो दाल रोटी खाने के लिये।
आधी आस्तीन के कुर्ते घुटने तक जांधिये।।
एक कम्बल ओढ़ने के लिये, एक बिछौने के लिये।।

श्री दीवान सिंह

मेरा नाम दीवान सिंह है। अल्मोड़ा का रहने वाला हूँ। मेरी शिक्षा कक्षा सात तक हुयी। उसके बाद 14 या 15 वर्ष की आयु में, मैं दुकान पर काम करने लगा। वे कांग्रेस के अध्यक्ष थे। उनके यहां मोहन सिंह नामक नेता आया करते थे। वे कांग्रेस के प्रचारक थे और बड़े कार्यकर्ता थे। सन् 1936 या 37 की बात है। सन् 1937 में जब कांग्रेस की पहली मिनिस्ट्री बनने की बात हुयी तो मुझे चिट्ठी लेकर गांव में ज।ना होता था। उस वक्त बड़े–बड़े किसानों को वोट देने का अधिकार होता था। छोटे किसानों को नहीं था। प्रत्येक गांव में तीन या चार वोटर होते थे। उनके लिये पत्र ले जाकर उनसे वोट देने की बात करता था। मैं रात को रामायण पढ़ता था। सोचा करता था, यदि मैं भी वानर सेना में होता तो मेरा सौभाग्य होता। यही कल्पना करते–करते सन् 1937 में मिनिस्ट्री बनी। 1939 में जब अंग्रेजों से लड़ाई लड़ी, तो मैंने ब्रिटिश सरकार को मदद करने की बात से इंकार कर दिया।

सन् 1939 में अस्पृश्यता उद्धार की धारा चली। एक बार ऐसा हुआ कि कुछ हरिजन भाई आये। उन लोगों द्वारा लाया गया पानी हम लोगों ने पी लिया तो गांव के जितने भी विरोधी वर्ग के थे, उन्होंने हमारा बहिष्कार किया। जितने भी नल थे, उसमें ताले लगा कर हमारा पानी बन्द कर दिया गया। मैं जब शाम को घर गया तो माता जी ने कहा कि तुमने सब बर्बाद कर दिया है। हमको अलग कर दिया गया है। यह कहा गया है कि अगर हम तुमको अन्दर न आने दें तो वह हमको अपना सकते हैं। मैंने कहा भाई हम अन्दर नहीं आयेंगे। हम नीचे रह लेंगे, तुम वही खाना दे दो। आज रात की ही बात है। सुबह कल तुमको सबसे मुक्त करा दूंगा। सुबह मैं तांबें के घड़े को लेकर पोखर की ओर चला गया। वहां हमने पानी भरा और नहाया। इतने में गांव वाले आये। अपना खाली बर्तन लेकर वापस चले गये। बोले वहां जिसको तुमने अलग किया है। वह तो यहां बैठा है। इतने में उन्होंने कहा कि तुम घड़े से पानी ले लो। इतना कहकर वे पानी लेकर चले गये। मैं समझ गया कि बला टल गयी। और हम पानी लेकर घर को चले गये। इस प्रकर हम आजादी का काम वहीं करते रहे।

श्री परमानन्द पाण्डेय

मैं परमानन्द पाण्डेय, जिला अल्मोड़ा का रहने वाला हूँ। गरुढ़ में हमारा स्कूल है। यहां से मैं गिरफ्तार हुआ था। मैं अल्मोड़ा में बंद किया गया था, 6 महीने के लिए। 6 महीने की सजा और एक सौ रुपया जुर्माना। पहले बरेली जेल में थे। बरेली जेल से हम 6 महीने के बाद छूट कर गरुड़ पहुंच गये। व्यक्तिगत सत्याग्रह से आकर मैंने तमाम काम किया। लोगों को समझाया बुझाया कि हमारी सरकार बनेगी। तब हमारे गुरु महात्मा गांधी जी थे। जब सत्याग्रह हुआ तो गांधी जी का कहना था कि जो परिवार में सबसे बड़ा हो, वह सत्याग्रह में भाग न ले? जिसका अपना साधन हो, वह न हिस्सा ले। इस क्षेत्र में शान्तीलाल जी ने भी साथ काम किया। कौसानी में सरला बहन थीं। लोग जब जेल चले जाते थे तो उनके घरों की औरतों को सरला बहन ही समझाती–बुझाती थीं। वह कहती थीं, मालिक तुम्हारा कहीं गया नहीं है। वह आ ही जायेगा, तुम चिन्ता मत करो। तुमको जो भी कुछ खाने पीने को चाहिए तुम हमसे कहो। हम कहीं ना कहीं से लाकर देंगे।

मेहरबान सिंह जी जब आये, हमको पकड़ने के लिये मैं दुकान में था। वहां मेरी गिरफ्तारी की। जेल में नजरबन्द कर दिया गया। मैं तीन महीना नजरबन्द रखा गया। बरेली जिला जेल में रहते–रहते मेरा 'बी' क्लास किया तो पांच रुपया रोज किया खाने का। फिर उसके बाद मुझे जिला जेल में भेज दिया गया। जिला में रहे फिर डेढ़ साल। 1942 के भारत छोड़ो आन्दोलन में भी, मैंने काम किया। गरुड़ से गिरफ्तारी दी जेल में।

गांधी जी को पकड़ा गया बम्बई में। हमको पकड़ा यहां मेहरबान सिंह ने। मैं वहां दुकान करता था, चाय पानी की। उन्होंने एक आदमी को लगाया। मेहरबान सिहं के साथ एक तहसीलदार थे। वह समझाते रहे कि तुम सब स्वतंत्रता सेनानी जब तक सहयोग नहीं दोगे तब तक भइया काम होने वाला नहीं है। हम हर गांव में, हर एक घर से, एक–एक रोटी मांग कर खाते थे। कभी मिलती थी, कभी नहीं। कोई कोई अच्छा आदमी हमको खाना भी खिला देता। बहुत दिनों तक मैंने इस काम को किया। गिरफ्तार भी हुआ। कुछ लोग बागेश्वर से पकड़े गये थे, तो हम अल्मोड़ा जेल में। डेढ़ महीने के बाद रिहा हुआ, अल्मोड़ा जेल से। साथ में बहुत से लोग थे । उनमें कितने ही लोग मर गये कुछ अभी जिन्दा हैं।

श्री खचेड़ी सिंह

मेरा नाम खचेड़ी सिंह उर्फ चैतन्य दास है। पिता का नाम श्री भूप सिंह है। अक्टूबर सन् 1917 की मेरी पैदाइश है। मेरा गांव कालिन्दी जनपद मेरठ उत्तर प्रदेश में है।

मैं कांग्रेस आन्दोलन की उन घटनाओं की चर्चा कर रहा हूँ, जो आज के स्वतन्त्र युग में एक स्वप्न जैसे दिखाई देती है। संकीर्ण बुद्धि वाले व्यक्ति उन घटनाओं को कहानी मात्र ही कहते हैं।

कांग्रेस ने आज अपना गौरव खो दिया है। इसलिये वह पराधीन युग स्वप्न मात्र ही दिखाई देता है। जो आया था, वह चला गया।

बात सन् 1938 की है, जब हमारे वरिष्ठ नेताओं ने पुलिस की रिश्वत की ख़ुफिया जांच के लिये पुलिस के चौकीदार का चार्ज मुझे सम्भलवा दिया। मैं सरघना जिला मेरठ के पुलिस थाने का चौकीदार था। उस समय की महत्वपूर्ण घटना की सूचना मैंने अपने वरिष्ठ कांग्रेसी नेताओं को दी। मैं उस समय एक जासूस जैसा कार्य कर रहा था। हमारे गवर्नर ने कुछ स्वायतशासी अधिकार कांग्रेस को दिये थे। पं0 गोविन्द वल्लभ पन्त प्रदेश के मुख्यमंत्री के रूप में शासन चला रहे थे। किन्तु बात–बात में अग्रेजों के हस्तक्षेप से ऊबकर गांधी जी की सलाह पर उन्होंने मुख्यमंत्री के पद से त्याग पत्र दे दिया। यह भी उस समय कांग्रेस की त्याग भावना, जो आज लुप्त प्राय होती दिखाई दे रही है। सन् 1940 में गांधी जी ने "व्यक्तिगत सत्याग्रह" का बिगुल फूंक दिया। प्रथम सत्याग्रही सन्त विनोबा भावे और देश के असंख्य सत्याग्रहियों ने अपने–अपने कलेक्टरों को बगावत के खुले पत्र भेज दिये। अंग्रेजी साम्राज्य के साथ जनगण का युद्ध चल रहा था। हमारा नारा था – "अंग्रेजी हुकूमत को धन या जन की सहायता देना हराम है।" जिस गाँव में निश्चित तिथि को सत्याग्रही नारा लगाते थे, उस समय उन्हें पुलिस द्वारा बन्दी बना दिया जाता था। सत्याग्रहियों को पकड़ते– पकड़ते पुलिस के होश उड़ जाते थे। जेलों में जगह नहीं रही। कहीं कहीं पर कांटेदार घेरे में सत्याग्रहियों को देखा गया। परेशान होकर धर पकड़ करना पड़ा।

मेरी उम्र उस समय चौबीस वर्ष की थी। शादी हो चुकी थी। दो बच्चियों का जन्म भी हो चुका था। उन सबकी कोई चिन्ता किये बगैर मैंने भी जिला कलेक्टर को कालिन्दी गाँव में बगावत का खुला पत्र भेज दिया। मैं एक सरकारी चौकीदार था, इसलिये अपने थाने के दारोगा के सामने मैंने अपना कोट और पेटी रख दी। उस समय थाने के दारोगा फतहसिंह थे। मेरी इस गुस्ताखी पर उनका पारा गर्म हो गया। उन्होंने मुझे प्रलोभन दिया।

कुछ दिनों के बाद दीवान बनाने की बात भी रखी । लेकिन उनकी बात का उत्तर मैंने न में ही दिया । उनके पास किसी गांव के एक जमींदार बैठे थे। दारोगा जी से उन्होंने मेरी शिक्षा के बारे में पूछा। दरोगा जी ने तपाक से कहा कि यह कमबख्त आलिफ बे जानता है। इसलिये इस थाने के तीन दरोगा और सिपाहियों की नाक काट कर जा रहा है। अब उनका पुलिस वाला चेहरा सामने आ गया। प्रताड़ना का जैसा रूप आज है वैसा ही तब भी था। वे हार गये और मैं जीत गया। निश्चित तिथि को कालन्दी गांव से मुझे बन्दी बना लिया गया। मेरठ जेल में ही मुकदमा चला। प्रथम श्रेणी के मजिस्ट्रेट ने पांच माह की सजा और दस रुपया जुर्माना की सजा बोल दी । दस रुपया जुर्माना में मेरे परिवार की भैंस छिन गई। जेल का भोजन बहुत ही निम्न स्तर का था। दाल सब्जी के लिये लोहे के कटोरे दिये गये। डालते ही दाल काली हो जाती थी। एक दिन दाल में फिनायल की बूँद

डाल दी गई। नाक के सामने आते ही उल्टी आने लगी। सब बन्दियों ने दाल फेंक दी। एक दिन दाल में शीशे का चूरा दिखाई दिया। बन्दियों ने उसे कपड़े से छान कर फेंक दिया और दाल के पानी और कुल्फा साग से ही सन्तोष किया। कुल्फे की सब्जी गड़ासों से काट कर बनाई जाती थी। लम्बे–लम्बे डन्ठल चूस कर फेंकने पड़ते थे। रोटियां झाड़ते हुये, छानस का ढेर लग जाता था। उन बातों को याद करके आज भी रोमांच सा होने लगता है। सजा पूरी हो गयी और मैं बन्दी गृह से छूट गया।

हमारे गांव के पास पाली नाम गांव में श्री गांधी आश्रम का बन्द किया गया कार्य फिर से चालू हो गया। खादी पहनना, उस समय एक गौरव की बात थी। श्री गांधी आश्रम में खादी का अभाव बना रहने लगा। धोतियों का तो अकाल ही था। मैं भी उस केन्द्र पर एक कार्यकर्ता की तरह रख लिया गया। मैंने धोती बनाने का काम सीख लिया। चरखा करघा का सामान गांधी आश्रम ने दिया। मुझे सहायता के रूप में केवल 5) रुपये माहवार ही मिलता था। शेष धोती बनवाने वाले ग्राहक से मजदूरी मिल जाती थी। श्री गांधी आश्रम का केन्द्र गांव से बाहर बाग में था। वहां बाग में मेरी झोपड़ी डलवायी थी। उसमें ही बुनाई करघा लगाया गया था।

श्री गांधी आश्रम उन दिनों ऊपरी तौर पर खादी का व्यापार कर रहा था। किन्तु अंग्रेजों की दृष्टि में वह क्रान्तिकारियों का अड्डा था। पाली केन्द्र पर फर्रुखाबाद निवासी पं0 राम स्वरूप शर्मा को मेरठ आश्रम से पाली ग्राम के केन्द्र पर भेज दिया। उनका काम कांग्रेस का प्रचार प्रसार करना था।

वे एक ही तपे हुये कार्यकर्ता थे। हम लोग उनकी छत्र छाया में कार्य कर रहे थे। सैकड़ों की संख्या में उन्होंने उस क्षेत्र में सत्याग्रही तैयार किये थे। उनकी वाणी में एक जादुई करिश्मा था। उस समय हमारे आस–पास के गांव कांग्रेस का रूप ले चुके थे।

देखते ही देखते सन् 1942 आ गया। अगस्त सन् 1942 को बम्बई में अखिल भारतीय कांग्रेस का अधिवेशन हो रहा था। अंग्रेजी हुकूमत ने देश के सभी शीर्षस्थ नेताओं को बन्दी बना लिया। बहुत ही सोची–समझी चाल थी यह। अब सारा देश नेता विहीन हो गया। गांधी जी "करो या मरो" का नारा देकर जेल के सीखचों में बंद हो गये। अब आम कांग्रेसी अपना नेता स्वयं ही बन गया। देश में एक बहुत बड़ा विस्फोट हो गया। क्रान्ति की ज्वाला भड़क उठी। अपने–अपने ढंग से कहीं–कहीं पटवारियों के बस्ते फूंके गये, कहीं–कहीं रेल पटरी उखाड़ी गई और कहीं–कहीं टेलीफोन की लाइनें काट दी गयीं। कई जगह हिसंक घटनायें भी हुईं। कांग्रेस के गरम और नरम दल ने अपने–अपने ढंग से क्रान्ति का बिगुल फूंक दिया। राह दिखाने वाला कोई नेता था ही नहीं। गांधी जी की अंहिसा चलती रही। ब्रिटिश शासन को उखाड़ फेंकने के लिये हिंसा का भी सहारा लिया गया। उस समय हम एक गीत गाया करते थे। मुझे कुछ पंक्तियां आज भी याद हैं ––

जब रण करने को निकलेंगे,
स्वतंत्रता के दीवाने,
धरा धसेगी प्रलय मचेगी,
व्योम लगेगा थर्राने।
गोदी सूनी हो जायेगी।
कितनी ही माताओं की
और चूड़ियां भी उतरेंगी,
कितनी ही अबलाओं की।

हम ऐसे गीत गा कर जन जागृति करते थे। अंग्रेजों का दमन अपनी चरम सीमा को लांघ रहा था। बन्दीगृह की यातना भूमि, घर–बार आदि की कुर्की, लाठी–डन्डा और गोलियों से भयभीत न होते हुए सत्याग्रही क्रान्तिकारी बन्दीगृहों को भर रहे थे। स्वतन्त्रता सेनानियों को एक गुप्त आदेश था कि गिरफ्तारी से बचे रहें और गुप्त रूप से जन जागृति के कार्यों में जुट जाओ। यदि पकड़ लिये जाओ तो क्षमा याचना न करते हुये बन्दीगृह को ही अपना घर समझ लो।

श्री गांधी आश्रम पुलिस की छावनी बन चुका था। जब्त होने के डर से बहुत सी खादी इधर उधर छुपा दी थी। कार्य बन्द हो गया था। कांग्रेस के प्रचार–प्रसार में गांधी–आश्रम के कार्यकर्ता इधर उधर छिटक गये।

सात आठ कार्यकर्ता पाली ग्राम के आश्रम में आ गये। मध्य रात्रि में गुप्त मीटिंग हुई। गांव–गांव जाने के लिये दो टोलियां बनाई गईं। एक टोली का नायक मैं था, दूसरी टोली के नायक पं0 राम स्वरूप बनाये गये। विपरीत दिशाओं में प्रातः काल ही हम चल दिये। निश्चय हुआ कि पं0 राम स्वरूप जी मंगोरी भावली, फिटकरी आदि गांवों में होते हुये रात्रि में कालिन्दी गांव में विश्राम लेंगे। हमारी टोली कालिन्दी, छुर, मूनी और कपसाड़ होती हुयी इसी गांव में रुकेगी। रात्रि को आगे की योजना बना लेंगे।

उस समय जनता में एक अद्भुत उत्साह था। जब हमारी टोली छूट गांव में पहुंची और हम लोगों ने कन्धों पर तिरंगा लहराते हुये भारत माता की जै................, महात्मा गांधी की जय बोली तो बहुत से बालिग व बच्चों ने जै जै करके आकाश गुंजा दिया। कोठों की छतों से माँ, बहनों ने वासे के फूल ऊपर से बरसा कर हमारे जलवे का स्वागत किया। दोपहर को एक किसान के यहां भोजन करके हमारा जत्था भूनी ग्राम की ओर चल दिया। 1942 में बहुत ही घनघोर वर्षा हुई थी। रास्ते में एक बरसाती नाला पार करते समय मैं बह गया साथियों ने मुझे निकाला। हमारी टोली में चिरजी लाल पाठक नाम के कार्यकर्ता थे। चलते हुये जब बहुत वर्षा होती तो वे चिल्ला कर कहते –

चल बे चला तू साहब के पास तू।
आई बला को टाल तू ढाल तू।।

सब लोग ठहाका मार कर हंसने लगते, तब वे कहते, देख रहे हो मन्त्र का कमाल, देखो, वर्षा अब कम हो गई।

हमारी टोली भूनी के जंगल में पहुंच गई थी। तभी सामने एक कच्ची सड़क पर जीप आती दिखाई दी। हम लोगों ने समझ लिया कि अब हमारी गिरफ्तारी निकट ही है। हम लोग बड़ी फूर्ति से थोड़े थोड़े फासले से धोती खोल कर दिशा मैदान होने का नाटक करके बैठ गये। तभी अचानक जीप रुक गई और उलट कर फिर वापस सरधना की ओर चल पड़ी। हम लोग बन्दी बनने से रह गये। बाद में मालूम पड़ा कि वह जीप मंगौरी गांव चली गयी।

हमारी टोली रात्रि विश्राम के लिये कालिन्दी गांव आ गई। हम लोग एक बैठक में रुके और पं0 रामस्वरूप जी की टोली के आने की प्रतीक्षा करने लगे। उस समय हमसे कोई भी बात नहीं कर रहा था। गांव में चारों और एक तरह का सन्नाटा छाया हुआ था। कालिन्दी गांव ने आठ सत्याग्रही कांग्रेस को दिये थे। यह गांव शुरु से क्रान्तिकारी रहा है, एक व्यक्ति ने हमें बताया कि तुम लोग यहां से निकल भागो। नहीं तो इस गांव पर भी कहर टूट पड़ेगा। पुलिस बल यहां पर आने ही वाला है। मंगौरी गांव में गोली काण्ड हो गया है। पं0 राम स्वरूप जी के साथ–साथ गांव के चार पांच लोग भी पुलिस की

गोली के शिकारी बन गये हैं। मंगौरी गांव की एक चौपाल पर कांग्रेस का जलसा हो रहा था। तभी वहां पर पुलिस बल की जीप आई और सरधना थाने के थानेदार ने तख्त पर चढ़ कर पंडित जी को भाषण देने से रोका। पंडित जी नहीं रुके। तभी थानेदार ने उन्हें गोली से भून दिया। वे तख्त पर ही गिर पड़े। गांव की जनता ने पुलिस पर ईटें, पत्थर फेंकने शुरु कर दिये। पुलिस बल ने फायरिंग शुरु कर दी। गांव के चार व्यक्ति गोलियों से भून दिये गये। कुछ जख्मी हो गये। गांव में भगदड़ मच गई।

पं0 जी को घायल अवस्था में पुलिस ने गाड़ी में डाल लिया। शेष लाशें वहीं पड़ी रहीं। मेरी टोली के साथी सरधने की ओर चल दिये। मेरी पत्नी, बच्चे पाली ग्राम में ही रह रहे थे। मैं रात को खेतों से होता हुआ पाली गांव पहुंचा। अपनी स्त्री को सलाह दी कि तुम बच्चों को लेकर कालिन्दी चली जाना। मेरा अब कोई भरोसा नहीं है। कब पकड़ा जाऊँ। श्री गांधी आश्रम के केन्द्र पर पुलिस बल पड़ा हुआ था। मैं उनसे बचकर रात्रि को ही गांव से चला गया। हमारे गांव से दो मील पर एक कस्बा मुल्हेड़ा है। मैंने एक वैश्य के घर में अपना निवास बना लिया।

सन् 42 के इस आन्दोलन में इस कदर धर–पकड़ हुई कि हुकूमत को अब आगे न पकड़ने का आदेश हो गया। बन्दीगृहों में स्थान नहीं रह गया था।

कांग्रेस के सभी बन्दियों को बागियों की श्रेणी में माना गया था इसलिये बहुत से बन्दियों को 5–6 वर्ष की सजा बोली गयी थी। वे बन्दी सन् 1947 की स्वतन्त्रता के बाद ही जेलों से छूटकर आये।

आज बड़े दुख के साथ कहना पड़ता है कि हमारी उस गौरव भरी कांग्रेस का, वह गौरव भरा इतिहास कलंकित हो रहा है –

उमड़ घुमड़ कर घिर आये हैं,
भ्रष्टाचार के काले बादल।
आरोपों की बौछारों में,
डूब गई संस्था की छवि उज्जवल।
गौरव कांग्रेस का खोया,
दूषित किया तिरंगा झण्डा।
कांग्रेस के पावन तट पर आ बैठा कौन पाखंड़ी पण्ड़ा।
सुभाष भगत के बलिदानों पर,
किसने पोंछ दिया है काजल।
काश आज होते गांधी जी,
पीना पड़ता उन्हें हलाहल।
ये बचे खुचे सेनानी हैं,
बलिदानों की अमर कहानी।
छोड़ दिये थे सगे सुहाने,
ज्वालाओं में झोंक जवानी।

श्री शिवलाल वर्मा

स्वतंत्रता संग्राम की भावना मेरे मन में उसी वक्त से जगी, जब गांधी जी बागेश्वर आये। तभी शराब बन्दी का आन्दोलन चला था। उस वक्त हमने अपने साथियों के साथ भट्ठे पर आक्रमण किया, जिस वक्त ठेकेदार वहां आया, हम वहां चढ़ गये। उसने हम लोगों के एक–एक थप्पड़ लगा करके सीधे नीचे ढकेल दिया। हम लोगों की साजिश भट्ठी तोड़ने की थी। उसके बाद जब आजादी की भावना जागी, तो शान्ती लाल तथा मोहन जोशी ने अल्मोड़ा तहसील में झण्डा फहराने के लिये कदम उठाया। हमें जबरदस्त चोटें आयी। कुछ दिनों बाद श्री बद्रीदत्त पाण्डेय जी ने कुछ लोगों को इकट्ठा करके तहसील में झण्डा फहराने के लिये जुलूस निकाला। लोग केसरिया रंग के कपड़े पहने हुये कफन बांधे हुये थे। वहां हम सब गिरफ्तार हो गये।

कुछ समय पश्चात मोहन जोशी स्वस्थ हो गये और फिर उन्होंने झण्डा फहराया । फिर मेरी भावना कुछ ज्यादा ही आजादी की तरफ गयी। सन् 1940 में नेहरू जी परेड करने पर जब पकड़े गये तो वहां से पं0 गोविन्द वल्लभ पन्त जी ने श्याम लाल जी से कहा कि आप लोगों को गांवों से इकट्ठा करके पांच–पांच की टोली में परेड करनी है। वर्मा जी ने सारे इलाके के लोगों को बुलाया, पहला नाम हम पांच आदमियों ने दिया। पहले देवीलाल शाह जो बागेश्वर के रहने वाले थे, फिर शिवगिरी बाबा, ऐसे ही कई ठाकुर थे, दो लोग और थे, मेरा भाई और सुन्दर लाल वर्मा भी। हम दो जनों के नाम दिया। सन् 1940, 25 सितम्बर को हमारा पांच लोगों का जत्था परेड करने के लिये उतरा। तुरन्त पुलिस आयी और हमको थाने ले गयी। उसके बाद तल्लीताल जेल में हम लोगों को बन्द कर दिया गया। वहीं अदालत में 3 साल की सजा हुई। 25 रुपये जुर्माना करके हम लोगों को बरेली भेज दिया गया। जब 3 साल की सजा काट करके हम नैनीताल लौटे तो घर से पत्र आया कि पिता जी की तबियत बहुत खराब है। वहीं से सीधे मैं बागेश्वर आया पिता जी को भी हम साथ ले आये। कुछ समय के बाद पिता जी का स्वर्गवास हो गया। कुछ महीनों बाद सन् 1942 का आन्दोलन चल गया। गांधी जी का आन्दोलन भयंकर था। हम लोगों ने तार काट करके सरकार की सम्पत्ति नष्ट कर दी। फिर सीधे एकवा पहाड़ पर गये और वहां जंगलात का तार वगैरह जितनी भी सम्पत्ति थी, उसे छिन्न भिन्न कर दी। बागेश्वर में श्री मेहरबान सिंह ने बहुत सख्ती की। उसने बहुत आदमियों को पीटा और उनको पकड़ ले गया। कुशल सिंह ने सबको बुलाकर कहा कि बागेश्वर में ऐसा अत्याचार हो गया और मेहरबान सिंह यदि सबको लायेगा तो हम कौसानी में इसका विरोध करेंगे। हाथा पाई भी हो जायेगी तो हम उसके लिये तैयार हैं। उनकी गाड़ी को रोकने के लिये एक किलो मीटर की दूरी पर एक छोटा सा गांव था, उसको तोड़ डाला। हम लोगों को पता चला कि मेहरबान सिंह रात जंगल के रास्ते रानीखेत पहुंच गया। वहां गोरी पलटन ने वहां के लोगों को इकट्ठा करके धावा बोल दिया उस वक्त चनौदा के गांधी आश्रम में कुछ लोग बैठे थे। जो लोग नदी पार करके आये, वह तो बच गये और जो लोग सड़क पर थे,वे घिर गये, करीब 32 आदमी घेरे में आ गए। इन्हें लाइन बना करके सड़क में खड़ा

किया गया और उन्होंने गंगा की तरफ से पहाड़ की तरफ से बन्दूक तान दी। बहुत से आदमी पहाड़ पर चढ़कर के उखाड़ पछाड़ करने लगे। पत्थ्रर उनके सिर में ना आ करके, मेरे सिर पर आने लगे। हमने हाथ जोड़ करके कहा कि पत्थर ना मारो।

उसके बाद गांधी आश्रम में झण्डा फहराया गया। हमारे साथ माधव सिंह जी थे। उन्होंने लाइन तोड़कर झण्डे को लपेट लिया। उनको बड़ी बेहूदगी से मारा पीटा गया। उनके हाथ पीछे बांध करके, वहीं से आये। उसके बाद कमिश्नर साहब ने हमारी लाइन को चक्कर काट करके हमारे दस बारह आदमियों को पकड़ लिया। वे हम लोगों को छोड़ गये और हम लोगों से यह कहा कि आईन्दा ऐसे आन्दोलन में तुम लोग भाग मत लेना। मैं नया आदमी था। मैं वहां से सीधे घर आया और घर से सीधे जैती के लिये रवाना हुआ। जब जैती पहुंचा तो वहां भी पलटन ने जनता को परेशान कर रखा था। वहां दूसरे तीसरे दिन गोरी और काली पलटन ने सारे गांव को घेर लिया, जिससे वहां बच्चे, बूढ़े और जवान गांव को छोड़कर चले गये। घर खोल करके जो भी सामान था खेती बाड़ी का, उसे नष्ट कर दिया था। इस प्रकार वहां सनसनी फैली, वहां से सीधे अल्मोड़ा मैं चला आया। श्याम लाल वर्मा नैनीताल में उनसे मिलने के लिये गया। हम लोगों ने बहुत जबरदस्त आन्दोलन किया। मैं वहां से फरार होकर आया हूँ, वहां चला जाता हूँ। मैं वहीं से बारबर के यहां बैठा। वह सीधे कोतवाली गया। मैंने बाल बनवाकर जूते पहने। तभी कोतवाल ने कहा मुझे तुमसे कुछ काम है। मैंने सोच लिया था कि मैं गिरफ्तार हो गया हूँ। मैने कोतवाल से कहा तू वारंट दिखा, उसने कहा वारंट से कुछ नहीं, तुम से कुछ काम है। तुम कोतवाली चलो। मैं उसके साथ आया तो वह मुझे सीधे पटवारी के यहां ले जाने लगा। वहां पटवारी मुझे पेशकार के यहां ले गया। मैंने पटवारी को एक धक्का देकर खेत में डाल दिया। मैं भागने लगा तो पीछे से पांच–सात आदमियों ने मुझे पकड़ लिया। वहां पर कुछ मुक्का बाजी हुयी। तभी एक बाहर के आदमी ने कहा कि आप गांधी जी के सैनिक हैं। आप को गिरफ्तार कर लिया तो आपको चले जाना चाहिये। मैंने सोचा, ये गांधी जी का नाम ले रहे हैं तो मैं चुपचाप उनके साथ चला गया। पेशकार साहब ने मुझसे कहा कि तुम्हारे पिता जी बहुत पुराने परिचित हैं। इस वक्त जो बन्द हैं, तुम इनके खिलाफ बयान दे दो। मैंने बिल्कुल इन्कार कर दिया। सुबह छः बजे से, मैं गिरफ्तार था। चार बजे तक वो लोग घेरे रहे। मैंने जब और लोगों के नाम बताने से इन्कार कर दिया तो शाम को चार बजे तक वो लोग घेरे रहे। मैंने जब और लोगों के नाम बताने से इन्कार कर दिया तो शाम को चार बजे मुझे जेल के अन्दर डाल दिया।

यह 13 सितम्बर 1942 की बात है। 17 सितम्बर को अदालत वहीं लगी। वहीं पर हमारा फैसला हुआ। पांच साल की सजा, एक सौ रुपया जुर्माना। जुर्माना न देने पर एक साल की सजा और उसके बाद हम लोगों से पूछा गया कि आप लोग क्या कहते हैं। हम लोगों ने कहा कि इस सरकार को जब हम मानते ही नहीं तो इस अदालत में हम बयान भी नहीं देना चाहते। मैंने सिर्फ इतना ही कहा कि मेरा नाम गलत चढ़ा दिया गया है। मेरा नाम शिव लाल वर्मा है। मेरा नाम सुधार करके प्रेम लाल वर्मा की जगह शिवलाल वर्मा कर दिया जाये। इतने में सरकारी वकील विश्वम्भर जी ने उठकर कहा हुजूर, प्रेम लाल वर्मा उर्फ शिवलाल वर्मा भी हो सकता है। मेरा नाम प्रेम लाल उर्फ शिवलाल कर दिया गया। हम लोगों को फिर जेल में बन्द कर दिया गया। दो महीने बाद हम लोग बरेली जिला जेल में भेजे गये। उसके कुछ समय बाद वहां से ट्रान्सफर होकर लखनऊ भेजा गया। कोई सेन्ट्रल जेल बरेली

भेजा गया, कोई चुनार कन्टोमेंट भेजा गया। छिन्न–भिन्न करके हम लोगों को इधर–उधर भेज दिया गया। सन् 1942 को शिवरात्रि के रोज हम लोगों को बड़ी मार पड़ी। जो हाथ आया, उससे हम लोगों को पीटा गया और हमारे पूज्य दामोदर शास्त्री जो बड़े विद्वान थे और वह हम लोगों को रोज गीता का पाठ सुनाते थे, उनके पांव में बेड़ी न थी हम लोगों के पांव में बेड़ियां थीं। हम लोग सीधे निकल गये और बुढ्ढे आदमी होने की वजह से सबसे पीछे आये। चमड़ा कड़ा था तो कम्बल के टुकड़े करके पांव में बांध लिया। उससे पूछा गया, ये कम्बल के टुकड़े कहां से लाये। उन्होंने कहा ये कम्बल का टुकड़ा फटा हुआ था। पांव कट रहा था, इस वजह से पांव में बांध लिया। उनको फिर मौका मिला और हम लोगों को बेरहमी से मार पड़ी। हमारे बहुत से आदमी घायल हुये। बाद में दवाई भी देना बन्द कर दिया। हम लोगों का शिवरात्रि का ब्रत था, अतः हम लोगों ने कुछ खाने से इन्कार कर दिया। हम लोगों ने शाम तक व्रत रखा और खाना कुछ भी नहीं खाया। हम लोगों को 3 साल 6 महीने 15 दिन की सजा दी गयी।

उसके बाद आदेश आया कि इनकी बदली कर, जिला से इनको रिहा कर दिया जाये। जेल वालों को अन्दाज नहीं आया। उन्होंने हम लोगों को एक महीना बरेली जेल में रखा। वहां आश्रम के भादों सिंह जी, नयन सिंह जी, भकुनी और बहुत से साथी थे। फिर हम सबको अल्मोड़ा भेजा गया और 3 तारीख को हम लोगों को वहां से छोड़ दिया गया। हम लोग घर आये। सब काम धन्धा छिन्न–भिन्न हो गया था। सन् 1950–1951 से मैं लेखपाली करता रहा, पर सिफारिश मैंने किसी से नहीं की। हर साल गर्वनर के यहां से यह पत्र आता रहा कि आप स्वतंत्रता सेनानी हैं, पर पेंशन देने में मजबूरी है। सन् 1970 में श्री किशोरी दत्त भदौरिया प्रदेश मंत्री हुए उन्होंने गुप्ता जी से कहकर पेंशन लगवाई। इस वक्त भी मुझे पेंशन मिलती है।

श्री मोहन सिंह

जय हो भाई जी, आपने बड़ा कष्ट किया जो यहां आये और हमसे पूछ रहे हैं, भारत माता के विषय में। तो हमको 13 वर्ष की उमर से इस बात का आभास हो गया। हमने देखा और सुना कि हम गुलामी में फंसे हैं, ऐसा ज्ञान हमको गुरुजी ने दे दिया था। हमारे सौभाग्य की बात पूर्व जन्म की, कि हमको भारत माता की सेवा का अवसर मिला। यहां सन् 30 से जब मण्डल खुला तब से हम यहां कार्य करते रहे इसके बाद 24–25 आदमी हम काम करते थे, जो खबरें आती थी, वो आगे को पहुंचाते थे। अंग्रेजी शासन के खिलाफ आन्दोलन यहां हर एक किस्म की किसी समय आतंक बनाता था, उसमें भी हमारा एक संगठन रहता था। उनको धमकाने का विभाग में वैसे दूसरी–तीसरी में यहां आजादी के लिए मजलिस होती थी और हम वहां बैठते थे। हरेक चीजों को सोचते थे, इसके बाद सन् 41 में गांधी जी ने सत्याग्रह का नारा निकाला। अहिंसा के सत्याग्रह के लिए हम लोगों को चुना गया, जिसमें हमारे मण्डल के सभी लोग शामिल हुये, तो हमारे लिये ऐसा नियम बनाया कि जो आदमी सत्याग्रह करेगा, वह डी0पी0 शाह के यहां 24 घण्टे के अन्दर या जिलाधीश को सूचना दे।

प्रश्न :– वैसे मोहन सिंह गांधी जी का तो यही कहना था कि इसमें वही शामिल हो जो परिवार का न हो, घर का मुखिया न हो, या कोई काम धन्धा न कर रहा हो। मतलब जो काम धन्धा कर रहे हैं वो आदमी शामिल न हों। आप इस समय घर के मुखिया तो थे नहीं, आप घर के मतलब सबसे कम उम्र के थे। उस समय कितने और साथी थे, जिन्होंने आपके साथ आन्दोलन में भाग लिया था।

उत्तर :– हम उस समय करीब 18 वर्ष के हो गये थे, हमने उस समय आन्दोलन में भाग लिया था उस समय गांधी जी का पूरा ऐलान था कि जो आदमी अपने को कुर्बान करना चाहता है यानि आगे पीछे किसी को नहीं देखता है सिर्फ इसी का ध्यान करेगा। जो अपने को कुर्बान करना चाहता है वही सत्याग्रह करेगा, जैसे तैसे उसमें आदमी शामिल न हो। चूंकि यह बड़ी कठिन परीक्षा है, इसमें जान की बाजी लगानी पड़ती है और धन, माँ बाप का किसी को नहीं देखना पड़ता है तो हमने भी इसमें नाम लिखाया। आ गया कि हमने ....

प्रश्न :– आपने किस स्थान से शुरु किया था?

उत्तर :– मैंने गुरु जी के मन्दिर से। अपने यहां जो गुरु जी का मन्दिर है, वहां से सत्याग्रह शुरु किया था और नगाड़े वगैरह सबने बड़े स्वागत के साथ।

प्रश्न :– तो आपने अकेले ही शुरु किया या आपके साथ कुछ लोग और भी थे?

उत्तर :– नहीं नहीं अकेले, व्यक्तिगत–सत्याग्रह था, अकेले ही कार्य निभाना था।

प्रश्न :– आपके साथ कोई और नहीं था?

उत्तर :– मेरे साथ यहां कोई और नहीं था। उसके बाद जितना भी सत्याग्रही था, देवी के मन्दिर में बागश्री नाम था। उन्होंने देवी जी के मन्दिर में सत्याग्रह किया तो और आदमी शाम को इकट्ठे हुये वहां। उसमें बागश्री जी का यह नियम था कि जो आदमी सत्याग्रह में नहीं पकड़ा जायेगा तो वह एक महीने तक अपने जिले में, दूसरे जिले में, तीसरे जिले में जाकर अंग्रेजों के खिलाफ प्रचार करेगा। उसके बाद एक महीने तक वह अपने घर भी जा सकता है। हम लोगों ने सत्याग्रह किया। हमने डी0पी0 शाह

को लिखा था 23 घण्टे आगे। हम वहां नहीं पकड़े गये। हम यहां से सीधा चौपटिया, वहां से विद्यासेन गये, वहां हमने सत्याग्रह किया, झण्डा उठाया, सब लोगों ने स्वागत किया और उसके बाद दूसरे दिन भतरौन खान गये। वहां भी हमने झण्डा उठाया। सब लोगों ने स्वागत किया। बड़ी इज्जत होती थी। वहां के लोग आजादी के लिये स्वप्न देख रहे थे। वहां से विदाई लेकर हम लोग गढ़पानी गये वहां भी हमने सत्याग्रह किया। हजारों आदमी आये, वहां भी हमारा स्वागत किया गया। शाम को हम वहीं रहे। बात चीत होती रही राष्ट्र के विषय में, फिर दूसरे दिन वहां से भवानीपुर आ गये। भवानीपुर में वहां पर बहुत से अंग्रेज रहते थे, वहां भी हमने शाम को सत्याग्रह किया, जब झण्डा उठाया वहां हजारों लोग, लाखों लोग इकट्ठा हो गये, वहां अंग्रेजों ने पुलिस वालों को कहा कि इनको पकड़ लो, बोलना बन्द कर दो। हमारा बोलना बन्द हो गया। पुलिस वालों ने पकड़ लिया और थाने की तरफ ले गये और थाने में हम लोग बन्द हो गये। वहां से दूसरे दिन हम लोग नैनीताल जेल चले गये। हमारे ऊपर मुकदमा चला। मुकदमा चलने के बाद नजरबन्द रक्खे गये और हमने कोई कसूर तो किया था नहीं। एक महीने की नजरबन्दी और पच्चीस रुपये जुर्माना किया गया।

प्रश्न :– नैनीताल जेल में और कौन–कौन आपके साथ थे?

उत्तर :– बाकी जो गये थे, उनके साथ ही मुकदमा चला हमारा। हम थे और उम्र के ज्यादा थे। उनको तीस रुपया जुर्माना किया गया। दोनों साथ ही रहे। एक महीने तक नजरबन्द, उसके बाद हमको छोड़ दिया गया। खैर फिर हम आये मण्डल का कार्य करने लगे। फिर सन् 42 आ गया। सन् 42 में गांधीजी ने आन्दोलन शुरु किया। हमने उसमें भी हिस्सा लिया। जगह–जगह तार–वगैरह फूंकने लगे। उसमें हमारा भी हिस्सा था। वहां हमने सड़क में उनको रास्ता रोक दिया, जिससे कोई यातायात न जाये, ऊपर गाड़ी न आये और ना ऊपर गाड़ी नीचे आये। आखिर हमने अल्मोड़ा में सुना, वहां डंका बजा करके कितने लोगों को मार दिया है, पीट दिया है। हमको गुस्सा आया। अच्छा हमने कहा कि यहां आयेगा तो देखेंगे। तो पुलिस वालों को लेकर के गाड़ी में बैठकर के कौसानी होकर के गुरु को चले। फिर हमने सुना, नीचे से वह इसी रास्ते से आ रहे हैं तो हमने ऐसा किया। इसमें राख मिलाकर के बनायी और ऐसी जगह में हमने मोर्चा बनाया जिस जगह से हम भी निकलते थे, वह भी निकलते थे, दोनों ही बढ़ते थे। मेहरबान सिंह सी0आई0डी0 ने उनको खबर दे दी कि तुम्हारे लिये वहां मोर्चा बना दिया है। मेहरबान सिहं वहां बागेश्वर जा करके सीधा अल्मोड़ा चले गये। वहां से नैनीताल को फोन किया, बोरा मंगाया 100, 100 बोरे आये उसमें 50 इंजीनियर यहां के जमा किये और हमने कहा, सब उतर गये। वहां एक मील आगे से लौटे पीछे, फिर उन्होंने बन्दूकें वगैरह साफ की, अपनी चेचरस वगैरह चल रही थी। फिर वह आये तो हम लोग 20–25 आदमी खड़े थे तो कमिश्नर साहब ने पूछा कि तुम किस वास्ते लड़ रहे हो तो हमने कहा अपने मुल्क के लिये, जो हमारे गांधी जी ने नियम बना रखा है, उसके लिये और तुमसे खुद कह दिया है। हम अंग्रेजों को नहीं मानते हैं तुम, चले जाओ। अब भारत छोड़ना पड़ेगा, इस वास्ते हम लड़ रहे हैं कि भारत छोड़ो अंग्रेजो चले जाओ। इसके बाद नजरबन्द कर दिया और भेजना शुरु कर दिया। उसमें एक आध आदमी को लठ्ठ लगाये तो कमिश्नर साहब ने उनको गाली नहीं दिया क्यों कि वह 70 वर्ष के वृद्ध आदमी थे। उन्होंने कहा इनको हमने नजरबन्द कर दिया है। लठ्ठ चलाना कोई ठीक बात नहीं है। इसके बाद जब हम अल्मोड़ा जेल में गये, उसके बाद हमारे ऊपर मुकदमा चला तो हमने वहां कहा कि अंग्रेजी सरकार

को हम कोई बयान नहीं देंगे, चाहे हमको फांसी पर चढ़ना पड़े। अभी वह उस रजिस्टर में लिखा हुआ है तो उसके बाद,9 साल की सजा और तीन सौ रुपया जुर्माना हमको कर दिया गया। डेढ़ साल रहने के बाद हम तीन–चार लड़को को वहां से बरेली जेल में भेज दिया गया। हमको बरेली सेंटर के लिये भेज दिया। हम सब आजादी के लिए सपना देख रहे थे। वहां हमको कोई जरूरत नहीं थी। रुपया भेजकर के हमने सबको मिठाई खिला दी थी क्योंकि हम तो जेल को ही जा रहे थे। उसके बाद जेल में रहते–रहते मार–पीट चलती थी। रोज एक हफ्ते तक हमें हथकड़ी भी लगी और ताल पोखरी भी जाना पड़ा। मारपीट एवं डन्डे भी सहने पड़े। रोज आन्दोलन होते थे। खाना भी ठीक नहीं, कभी दाल भी ठीक नहीं, कभी आटे में कंकड़–पत्थर, इस बात से खाना बन्द हो जाता था। हम खाते कभी नहीं थे। इस वास्ते लड़ाई–झगड़ा होता रहता था। दो ढाई साल तक इसी तरह से चलता रहा। उसके बाद बम्बई में कुछ विचार विमर्श अंग्रेजों ने उनसे किया। उसके बाद दो ढाई साल बाद हम लोगों को कुछ राहत मिली। पढ़ने के लिये किताबें वगैरह और हर एक को जेल में पढ़ने के लिये गैस वगैरह सब मिली। उसके बाद नेहरू जी वहीं आ गये थे। जेल में, फिर बाद में वहीं रहते थे। जैसे किदवई साहब थे और भी आदमी थे वहां, जो वहां से साबुन भेजते थे, चूंकि हमको सज्जी मिलती थी, सज्जी से हम से कपड़े धोये नहीं जाते थे। तो मदद के लिये हमारे लिये कभी साबुन भेज देते थे। ये साबुन ले लो। चार लड़के हम अल्मोड़ा के थे और बिन्दकी के थे, हम सब 28 लड़के रहते थे। बीच–बीच में समझौता होता रहा। फिर समझौता हो गया। संजीव जी फिर मिनिस्टर हो गये। उसके बाद कुछ दिनों के बाद हम लोग फिर घर को आये। फिर देखा हमारे कपड़े–वपड़े सब नत्थी बन्द गये थे। उन्होंने एक कुरता और पैजामा लगा कर हमको भेजा। थोड़ा बहुत पैसा भेजा, उसी के सहारे हल्द्वानी में हमारा स्वागत किया। वहां से फिर कुछ चन्दा करके कुछ पैसा दिया, फिर वहां से हम घर आये और हम अपने कार्य करने लगे, अपने मण्डलों को चूंकि आजादी से हमको राहत मिल गयी। लोग अपनी अपनी सोचने लगे।

प्रश्न :– स्वतंत्रता आन्दोलन में शामिल होने की प्रेरणा आपको शान्ति लाल त्रिवेदी से मिली या महात्मा गांधी से?

उत्तर :– गांधी जी से। हम उस समय 4 में पढ़ते थे। उस समय गांधी जी कौसानी आये थे।

प्रश्न :– गांधी जी कौसानी आये थे, तब आप उस समय कक्षा 4 में पढ़ते थे। आपने शिक्षा कहां से, मतलब पढ़ाई कहां की?

उत्तर :– पढ़ाई यहां से शुरु किया हमने। वहां से हमने दर्जा एक पढ़ा, फिर छोड़ दिया हमने। तब भी पांच–छः तक हमने पढ़ा है। फिर उसके बाद ध्यान नहीं दिया हमने।

प्रश्न :– तो आपके साथ आपके चाचा वगैरह भी इस आन्दोलन में आपके साथ थे?

उत्तर :– और कोई नहीं थे मेरे घर के।

प्रश्न :– तो प्रेरणा आपको वहीं से मिली, महात्मा गांधी से?

उत्तर :– और भी मेरे साथी जैसे सरला बहन हैं।

प्रश्न :– ये कुमायूं का क्षेत्र रहा है, काम करने का। सामाजिक कार्यक्रम उन्होंने चलाया?

उत्तर – हां चलाया। उसी से हमको अच्छी प्रेरणा मिली। जब हम जेल में रहते थे। हमने सुना था, सरला बहन ने सबकी मदद की। सबके घरों में मदद की, जिन घरों में खाना नहीं मिलता था,

उन घरों में मदद करती। हर एक घरों को मदद करती थी। हमारे माता–पिता को समझाते थे और जब घर वालों पर कोई विपत्ति आती थी, तब घर वालों को जरूर मदद करते थे। उनको जरूर सांत्वना देते थे। उसी तरह से हमारे दिन वहां कटे थे और घर वालों को भी इसी तरह से उन्होंने सांत्वना दी। उन्होंने अच्छी तरह से समय निकाल दिया। अब मैं इतना ही कहना चाहता हूँ । वो तो वो काम, हमारे गायन–वायन बहुत चलते रहते थे और बहुत किस्म की हमारी बातें चलती थी और क्या कहूँ वहां बहुत मजलिस लगती थी जेलों में। हम लोग प्रचार करते थे और मजलिस में बैठकर के लोगों की खातिर सोचा समझा करते थे। इसी तरह का हमने जीवन बिताया और इसी तरह से हमारा जीवन व्यतीत हो गया और बाकी क्या कहूँ, घर आकर भी हम पब्लिक की सेवा करते रहे और गांवों के जहां कोई कार्य होते हैं तो उसमें अग्रसर होकर उसमें हाथ बंटाना हमारा कर्तव्य हो जाता है। वैसे तो हम बुढ्ढे हो गये, हमको इधर–उधर जाना अब पसन्द भी नहीं और खाना भी हमारा कम हो गया है, आहार भी टूट गया है। तकलीफ हो जाती है, खांसी व्रासी हो जाती है। अब बुढ़ापे में क्या हो, फिर भी हम चलते हैं, हमारा राष्ट्र का कार्य अच्छा रहे और हम मदद जितनी हो सके करते रहें।

मोहन सिंह जी मैं आपका बहुत ही आभारी हूँ। आपने समय देकर क्षेत्रीय अभिलेखागार नैनीताल के लिये मौखिक इतिहास योजना के तहत बहुत ही महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इससे कुमायूं के शोध छात्रों को बहुत मदद मिलेगी।

श्री धर्मलाल वर्मा

प्रश्न :– वर्मा जी आप 1942 के ''भारत छोड़ो आन्दोलन'' में शरीक रहे हैं और अल्मोड़ा जनपथ का प्रतिनिधित्व किया है और 42 के आन्दोलन में तो आप कारावास भी गये। मैं आपसे अनुरोध करुंगा, अपना संक्षिप्त परिचय और 42 के आन्दोलन में भुगती हुई सजा का आप वर्णन करें।

उत्तर :– मैं धर्म लाल वर्मा, पिता का नाम इन्द्रलाल वर्मा, जौहरी मुहल्ला अल्मोड़ा। मैं अल्मोड़ा का निवासी हूँ। मैं सन् 40 से पहले उसमें काम करता रहा और 42 में मुझे 7 साल की सजा और 100 रुपये का जुर्माना हुआ। मेरे संग 7 लड़के और थे जिनको 4 साल की सजा और 100 रुपये जुर्माने हुये और मैं तबसे कांग्रेस में काम करता रहा। मेहरबान सिहं एस0डी0एम0 रहे। मेहरबान सिंह से हमारा झगड़ा हुआ तो हम सात लड़के पकड़े गये थे। मैं अल्मोड़ा जेल में बंद रहा और मेरे 7 साथी लड़के रहे, यहां अल्मोड़ा जेल में।

श्री बाबूराम

मैं बाबू राम स्वतंत्रता सेनानी कक्षा पांच तक पढ़ने के बाद कांग्रेस आन्दोलन में भाग लेने लग गया। बचपन से ही कुछ शौक पैदा हुआ। इस तरह से कार्य करते रहे और साथ ही अपने मित्र लड़कों के साथ आन्दोलन में जाना शुरु कर दिया। नमक कानून के आन्दोलन को तोड़ने में सक्रिय रहे। हमारे साथी हर्ष वर्धन लाल, सेना में दिवाकर शर्मा, कितने साथी कासगंज तहसील से गिरफ्तार कर लिये गये और जिला एटा जेल में रहे। वहां से सजा पूरी कर के छोड़ दिया गया। जेल से बाहर आकर कांग्रेस में बस गये। गांव और कस्बों में कांग्रेस शिविर लगाये गये और हर शिविर में प्रबन्ध कर, अपने जिले के अन्य स्थानों में घूमना हुआ। तहसील कासगंज आये। पुलिस लाठी चार्ज में दायें हाथ की अंगुली टूटी। कुछ समय के बाद एटा जेल भेज दिया गया। एक साथ गरम दल के सभी साथी दोपहर खाने के बाद बैरक के बाहर नीम के पेड़ के नीचे छाया में विश्राम करते रहे। शाम को लोगों ने बैरक के अन्दर जाने से इन्कार कर दिया। एक वार्डन जेलर को बुला लाया। जेलर ने सबको समझाया कि बैरक में चले जाओ, परन्तु हम सबने मना कर दिया। जेलर की हुई हार पर सुपरिन्टेन्डेन्ट जेलर के पास गया। हार की सूचना पर सुपरिन्टेन्डेन्ट कुछ रायफलधारी सिपाही लेकर आ गये उन्होंने धमकाया यदि बैरक में नहीं जाओगे तो हम गोली चलायेंगे। उस समय रोमांचकारी प्रदर्शन हो गया। लेकिन हम सभी साथी जिद् पर अड़े रहे। हमारे नेता ने कहा सुपरिन्टेन्डेन्ट 1,2,3 बोलेंगे–गोली चलाने के लिये। तब हम दो पर अपने–अपने बिस्तर पर लेट जायेंगे। आखिर वह समय आया, जब सुपरिन्टेन्डेन्ट ने एक दो कहा। उनकी गोली के पहले ही हम लोग अपने–अपने बिस्तर में लेट गये। इन्तजार करने लगे, परन्तु तीन शब्द नहीं सुनाई दिया। आर्डर किया कि सबको उठा उठा कर बैरक में छोड़ दिया जाये। उस पर हम लोगों को उठा–उठा कर बैरक में रख दिया गया। ताला बन्द कर दिया। यह रोमांचकारी घटना एटा जेल में घटित हुयी। 4 माह बाद जेल की सजा पूरी होने पर छोड़ दिये गये, फिर जेल से आने के बाद छः माह बाद हमें प्रशस्ति पत्र मिला और देहातों में हम कार्य करते रहे। सन् 1942 के ''भारत छोड़ो आन्दोलन'' में बीमार होने के कारण भाग नहीं ले सके। बात सन् 1947 की है, हम व्यापार कर जीवन यापन में लग गये और यहां धीरे धीरे सबसे परिचय हुआ। मैंने भी बाद में अपना 200/– रुपये पेंशन लेने की घोषणा की। तब मैंने जाकर जेल व जिलाधिकारी, साथियों से मिलकर प्रमाण देकर सन् 1973 में सेन्ट्रल की पेंशन प्राप्त की। बाद में मैंने उत्तर प्रदेश राज्य की पेंशन प्राप्त करवाने की कोशिश की और बाद में दुबारा फिर राज्य की पेंशन प्राप्त की। मैंने अल्मोड़ा में भी रहते हुए, सभी के साथ सबको सहयोग देकर जीवन यापन किया। सरकार से और सहयोग नहीं प्राप्त किया। जिस दुकान में रहते हैं अब बिकने को हुई। मैं वृद्ध कमजोर हूँ। पैसा भी नहीं था। मकान मालिक हमें देना चाहता था। परन्तु मकान मालिक ने अटारनी वकील को घूस देकर दूसरी पार्टी को रजिस्ट्री दे दी। दूसरे को दी थी। अब मैं अपने बच्चों के साथ बड़ी कठिनाई से जीवन यापन कर रहा हूँ। मेरा कोई सहारा नहीं है कि हम व्यापार कर सकें। बुढ़ापा है, कमजोर हूँ, विशेष पढ़े लिखे नहीं हैं। यदि हो सके सरकार से सहयोग की आशा है। विशेष क्या – क्या यह संस्मरण हमारे पुराने हैं। अब जो कठिनाई उसके विषय में दो शब्द ये हैं कि हम अस्वस्थ्य जीवन यापन कर रहे हैं, विशेष क्या कहें। इतना काफी है और क्या–क्या कहें।

श्री रामसिंह भाकुनी

नाम – राम सिंह भाकुनी, ग्राम – धुनौरा, जिला अल्मोड़ा, उम्र 82 वर्ष।

प्रश्न :– आपकी उम्र लगभग 82।

उत्तर :– 82 वर्ष।

प्रश्न :– आप किस सन् से आन्दोलन में शामिल हुए?

उत्तर :– आन्दोलन में शामिल हुए, जब गांधी आश्रम की नींव डाली गयी चनौदा गांधी आश्रम।

प्रश्न :– उसके बाद गांधी आश्रम में रहकर आपने क्या–क्या काम किए? राष्ट्रीयता की भावना के प्रेरणा स्त्रोत आपके क्या रहे? आपने कहां–कहां से प्रेरित होकर काम किया?

उत्तर :– शान्ति लाल त्रिवेदी जी से।

प्रश्न :– आपने 1941 के ''व्यक्तिगत सत्याग्रह'' में भाग लिया। आपने क्या–क्या काम किया उस दौरान?

उत्तर :– गांधी आश्रम में सन् 25 से हम लगे रहे। मैं 90 तक लगातार रहा हूँ। चुनौरा में ही हम लोग पकड़े गये। मैं हुआ, राम सिंह हुआ, बाबू सिहं हुआ और देवसिंह जी हुए। जेलर लोग आये पकड़ने के लिए, जेलर लोग आये थे झण्डा काटने के लिये तो झण्डा हमने काटने नहीं दिया। वे बाजार से कुल्हाड़ी मांग कर लाए। कुल्हाड़ी लेकर उसने झण्डा काटना शुरु किया। हमने कहा, हम गिरने नहीं देंगे। माधव सिंह ने भी धरना दे दिया। झण्डा के नीचे शान्ति लाल ने कहा कि भाई हम लोगों का कोई कसूर तो हैं नहीं। जिन्होंने आग लगाई थी। हम लोग तो उसमें नहीं थे। हम लोगों पर केस चला। 5 साल की सजा हमको हुई।

प्रश्न :– आपको 5 साल की सजा हुई 1942 में?

उत्तर :– 1942 में हमको 5 साल की सजा हो गयी, ''भारत छोड़ो आन्दोलन'' में। हम गिरफ्तार हुए थे। काम करते–करते। जन्माष्टमी का दिन था। रात में करीब 8, 10 आदमी दिन में काम करते थे। शेष सत्याग्रह में जाते थे।

प्रश्न :– आप पर जुर्माना भी हुआ था?

उत्तर :– 200/– रुपये जुर्माना हुआ था। 5 साल की सख्त कैद हुई। अल्मोड़ा जेल में साल भर रहे। उसके बाद 4 साल बरेली जेल में रहा।

प्रश्न :– बरेली सेन्ट्रल जेल में कौन था आपके साथ?

उत्तर :– बरेली जेल में हमारे साथ थे – देव सिंह। सिलीगुड़ी से जय भल्ला मुम्बई भी थे और हमारे साथ वैद्य जी थे।

प्रश्न :– कौन वैद्य जी?

उत्तर :– हमारे डा0 साहब। जिनका लड़का था हरि किशन। उसने रानीखेत और अल्मोड़ा के स्कूल में तोड़ फोड़ किया था। हाईस्कूल, इण्टर के 6 लड़के अल्मोड़ा के थे और कश्मीर के थे, जवाहर

सिंह। उनको हमारे सामने खाना–पीना नहीं दिया गया। साल भर तो हम अल्मोड़ा जेल ही रहे। मैं उसके बाद बरेली जेल में 4 साल रहा।

प्रश्न :– यातनाओं द्वारा क्या–क्या सजा दी गयी आपको?

उत्तर :– हमको सजा दी गई अल्मोड़ा जेल में तो हमको रस्सी बंटनी थी। वहां राम बांस छीला जाता था। 6 महीने में वह काम दिया गया जो करीब–करीब एक साल भर का काम था। बाकी 6 महीने की सजा सुनाई गई। हमारे 125 आदमी थे कुल।

प्रश्न :– आपके गांव से कौन–कौन लोग थे?

उत्तर :– इस गांव से एक तो मैं था, बहादुर सिंह जी थे, राम सिंह था, और यह मोहन सिंह थे। हम थे सेन्ट्रल जेल में, वह था डिस्ट्रिक्ट जेल में। बरेली जाकर हमने चक्की पीसी, 30 किलो। देव सिंह ने कहा हमें बीमारी है। उनको काम नहीं मिला हमको मिला, क्योंकि हम जरा तगड़े थे। उन्होंने कहा, इसको चक्की मिलनी चाहिये। यह तगड़ा आदमी है। एक 6 महीने हमने लगातार चक्की पीसी, फिर उसके बाद हमको बांस बंटने के लिये लगा दिया गया। फिर हम बीमार पड़ गये। 6 महीने तक कई जेल में ही मर गए। मैं लड़का था तो सुपरिन्टेण्डेण्ट आया। उसने कहा तुम माफी मांगों। हम तुम्हें छोड़ देंगे। हमने कहा भाई, हम माफी तो मांगेगे नहीं, मरना है तो मरने दो मुझे। उसने कहा मरना चाहते हो? हमने कहा हाँ, वह चला गया। उसने डाक्टर से कहा सुई लगा दो, खाना नहीं खाता। 6 महीने में हमें मलेरिया हो गया। पहाड़ के रहने वाले जो ठहरे। उसके बाद फिर मैं ठीक हो गया। ठीक होने के बाद दूध मिलता था, जल्दी अच्छा हो गया।

प्रश्न :– आपको यह सब काम करने की प्रेरणा कहां से मिली? शान्ति लाल जी से?

उत्तर :– नहीं–नहीं ऐसा कुछ नहीं हुआ। सत्याग्रह महात्मा गांधी के ही उद्‌देश्य से शुरु हुआ। हमारे नेता थे हरपाल सिंह जी। वे हमारे साथ रहते थे। सुनील सिंह भदौरिया मारा गया था क्योंकि उसने धरना दिया था झण्डे के नीचे।

प्रश्न :– जब आप जेल गये थे, तब उस समय आपके घर को कौन सांत्वना देता था?

उत्तर :– सरला बहन ने इस क्षेत्र में काफी सामाजिक कार्य किया है। सरला बहन जेल भी गयी थीं। साल भर तक सरला बहन ने यहां गांधी जी से बात की थी, कहा हम नहीं जायेंगे। गांधी जी ने उसको बहुत कुछ कहा। मगर आपने कहा, अगर परेशानी हुयी तो हम तुमको जेल भेज देंगे।

प्रश्न :– तो सरला बहन को आपने काफी नजदीक से देखा होगा और काम भी किया होगा, उनके साथ में?

उत्तर :– हां काम उनके साथ किया। सत्याग्रह में शामिल नहीं हुये थे। हम क्योंकि हम तो गांधी आश्रम में कार्य करते थे। वे दवाई का कार्य करते थे। कुछ काम हमको मिल गया था। मैंने मना किया तो कहा कि अभी लड़का है। तो हमको किताब मिली पढ़ने के लिये। पहली बार मिली थी। हमारे 4 साल जब बीत गये थे, तब गांधी जी भी छूट गये थे। जवाहर लाल जी भी छूट गये थे। उसके बाद फिर हमको उन्होंने नहीं छोड़ा बरेली जेल में, उन्होंने कहा कि हम इनको छोड़ेंगे। हमको गाड़ी में बिठा कर अल्मोड़ा जेल ले आये।

प्रश्न :– मई 46 को आप रिहा हुये थे, वहां से?

उत्तर :– हां हम एक मई 46 को रिहा हुये। जिस समय हमको छोड़ा गया, उस समय गिलास दिया, साबुन भी नहाने को मिला। पाव भर दूध मिलता था। एक महीने के बाद हमको रिहा कर दिया गया था, जिसमें सुभाष चन्द्र बोस भी थे। वहीं पर किसी मन्दिर में खाना बनाकर हम सब आ गये। 150 आदमी हम थे। 150 वीर थे। करीब तीन सौ आदमियों को पूड़ी खिलायी, उसके बाद मिठाई दी सभी कुछ दिया और कहा कि सीधे घर जाओ। हमने कहा हम घर नहीं जायेंगे। हमारे पास कपड़े नहीं है। एक दिन अल्मोड़ा में रहेंगे। उस समय घर में रहने के लिये किराया देते थे। उन्होंने कहा, हम गांधी आश्रम में रहते हैं। हमारे साथ वे जेल में थे, उन्होंने हमको गांधी आश्रम में ले लिया। जब हम छूट करके आये तो शान्ति लाल त्रिवेदी जी ने सब इन्तजाम किया।

यहां गांव में भी सब फूल माला लेकर तैयार थे। हमारे पिता जी भी उस समय जिन्दा थे। मां तो पहले मर गयी थी। मैं और मेरे पिता जी थे, दो भाई, एक बड़े और एक मेरे से छोटा।

श्री मदन ढौंढ़ियाल

मैं, मदन ढोंढ़ियाल, पुत्र श्री खिमन्ड ढोंढियाल ग्राम – गौलापुर पोस्ट–कोटाबाग, जिला–नैनीताल का निवासी हूँ। मैंने स्वतन्त्रता संग्राम के सन् 1941 के ''व्यक्तिगत सत्याग्रह'' में भाग लिया। इसकी प्रेरणा मुझे माननीय पं0 गोविन्द वल्लभ पन्त जी से मिली, जो इस जिले के ही नहीं बल्कि पूरे देश के अग्रणी नेता रहे हैं। इस जिले का जो पहला ''व्यक्तिगत सत्याग्रह'' उनके द्वारा शुरु हुआ था, इसको देखने का मुझे मौका मिला था। मेरे साथी थे, श्री जीवन लाल जी शाह जी, जो मेरे बुजुर्ग भी थे। मैं उनके साथ गया था। मेरी उम्र उस समय करीब–करीब 16 साल की थी। वह मेरा स्कूली जीवन था। उस व्यक्तिगत आन्दोलन को देखकर, लोगों का उत्साह देखकर, मैंने यह पाया कि इस क्षेत्र का कोई भी परिवार ऐसा नहीं है, जो इससे प्रेरित न हो रहा हो। अपने गांव के, अपने इलाके के, हर एक घर के व्यक्तिगत स्वतंत्रता–संग्राम में कूदने से मुझे भी प्रेरणा प्राप्त हुयी। मैंने सोचा कि इसमें जो अंशदान दे सकूँ तो बहुत अच्छा होगा। मैं अपने से पहले के नेताओं का देखने के लिये जाता था। इस आन्दोलन का श्रेय, मैं उस समय मौजूद रामनगर थानाध्यक्ष को दूंगा। वे सरकारी नौकरी पर थे और ड्यूटी निभा रहे थे। दूसरे उनका एक निश्चित उद्देश्य था, जब वो गिरफ्तार करते थे, तो पहले उनका यह श्लोक गूंजता था –

जिनको न निज गौरव तथा निज देश का अभिमान है।
वह नर नहीं, नर पशु निरा है और मृतक समान है।।

इस तरह वे हमको प्रेरणा देते थे। साथ ही हमको गिरफ्तार करते थे। उन्हें आन्दोलन की प्रेरणा का स्रोत माना जाना चाहिए। जिन लोगों ने सरकारी ड्यूटी में रहकर, इस आन्दोलन को इतना प्रोत्साहित किया, उससे सारे लोग प्रोत्साहित हुये। मेरा जीवन लखनऊ, बरेली, हल्द्वानी में बीता। तीनों जगह यातनायें भी मिली। मैं करीब–करीब 10 माह जेल के भीतर रहा। मेरी उम्र करीब–करीब, मेरे अन्दाज से उस वक्त के कैदियों में से कम थी। मुझे बच्चा बैरक में भी रखा गया। मुझे बहुत यातनायें मिलीं। कभी–कभी बरेली जेल की बातें याद आती हैं। वहां अंग्रेज आफिसर थे। मेरी तन्दुरुस्ती बहुत अच्छी थी, जिसे देखकर के उन्हें बड़ा बुरा लगा। उन्होंने मुझे जेल के भीतर चक्की पीसने की सजा दे दी। जिससे मेरी तन्दुरुस्ती को काफी नुकसान हुआ।

हमारा कैदी जेल जीवन काफी बढ़िया रहा। हम लोग एक होकर हड़ताल करते थे। कभी जेलर के खिलाफ करते थे, कभी सुपरिन्टेन्डेन्ट के खिलाफ, कभी–कभी सरकार के खिलाफ नारे लगाते थे। हमारे संगठन का एक मात्र उद्देश्य था – भारत की आजादी, हम देश के लिये ही समर्पित थे। तब में और अब में यह अन्तर है कि एक आदमी आज जो बात कहता है, उसको दस आदमी काटने के लिये तैयार हो जाते हैं । उन दिनों एक आदमी जो कहता था, उस बात में इतना वजन होता था, इतनी सत्यता होती थी हर व्यक्ति उसे मानने के लिये तैयार हो जाता था । बाद में मेरा स्कूली जीवन बर्बाद हो गया। हमारे यहां बाबा शिवगिरी की दुर्दशा हुई, जिनका एक रिकार्ड है। 13 वर्ष के जेल/कैदी जीवन संग्राम सेनानी रहे हैं। उनको मात्र 10 रुपये की पेंशन दी गयी। पन्त जी ने इस स्वतंत्रता सेनानी का अपमान किया। सरकार की ओर से हमारे नेताओं की और हमारे प्रति यह

लापरवाही बरती गयी। किसी स्वतंत्रता सेनानी को प्रोत्साहित नहीं किया गया। लेकिन वक्त की बात, इन्दिरा गांधी रूस गयीं और रूस वालों ने उनसे कहा कि जिस देश में स्वतंत्रता संग्राम सेनानी का सम्मान न हो वह देश जीवित नहीं रह सकता। उससे प्रेरित होकर इन्दिरा गांधी ने सन् 72 में स्वतंत्रता सेनानियों को दो सौ रुपया पेंशन देने की घोषणा की। यह पैसा भी बहुत कम कहा जाएगा। कोई स्वतंत्रता संग्राम सेनानी नहीं पनप सका। हमारे स्वतंत्रता संग्राम सेनानी पहले कहते थे कि हमें भ्रष्टाचार के विरोध में बोलना चाहिये, पर वह नहीं बोले। मैंने स्वतंत्रता सेनानियों से कहा कि यदि हमारे लड़के भ्रष्टाचार से अलग हो जायेंगे तो इस देश का भ्रष्टाचार खत्म हो सकता है। मैं तो यह देख रहा हूँ कि इस देश के स्वतंत्रता संग्राम सेनानी या उनके बच्चे स्वयं भ्रष्टाचार में लिप्त हो गये हैं। सरकार सबसे पहले हैं। शराब वाला मामला जिसमें बड़े–बड़े नेता है। गांजा, अफीम, शराब को बन्द करना होगा। सरकार पैसे के लोभ में इसको चलाये हुये हैं। हमारी सन्तान बिगड़ रही है, सरकार जो पैसा दे रही है, उसका हमारे जीवन में कोई मूल्य नहीं है। हम तो चाहते हैं कि सरकार ऐसा रवैया अपनाए कि आदमी संयमित हो, भ्रष्टाचार मिटे तो हमारे बच्चे भी पनपे। इस समय तो हमको इतनी निराशा है, देश के लिये कि ये आजादी हमारी सही माने में नहीं मिली। इसका कोई अर्थ ही नहीं निकला। जैसी लोगों को उम्मीदें थीं उनके बिल्कुल विपरीत हो रहा है, ऐसी मेरी मान्यता है।

